# तित्तरीय

### Colophon

This document was typeset using  $X_{\underline{1}}M_{\underline{1}}X$ , and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several  $M_{\underline{1}}X$  macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

### Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

द्वितीयः प्रश्नः

तृतीयः प्रश्नः

चतुर्थः प्रश्नः

पञ्चमः प्रश्नः

षष्ठमः प्रश्नः

सप्तमः प्रश्नः

188

212

230

256

273

307

# अनुऋमणिका

| अष्टकम् १       |     |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 1   |
|-----------------|-----|---|--|--|---|---|--|--|---|---|---|--|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः  | •   |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 1   |
| द्वितीयः प्रश्न | : . |   |  |  | • |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 27  |
| तृतीयः प्रश्नः  | •   |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 44  |
| चतुर्थः प्रश्नः | •   |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 65  |
| पञ्चमः प्रश्नः  |     | • |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 88  |
| षष्ठमः प्रश्नः  |     | • |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 109 |
| सप्तमः प्रश्नः  |     |   |  |  | • |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 134 |
| अष्टमः प्रश्नः  |     |   |  |  | • | • |  |  | • | • | • |  | • | • | 156 |
| अष्टकम् २       |     |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 460 |
| जटकम् र         |     |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 169 |
| प्रथमः प्रश्नः  |     |   |  |  |   |   |  |  |   |   |   |  |   |   | 169 |

| अनुऋमणिका                    | ii  |  |  |  |  |  |  |
|------------------------------|-----|--|--|--|--|--|--|
| अष्टमः प्रश्नः               | 330 |  |  |  |  |  |  |
| अष्टकम् ३                    | 359 |  |  |  |  |  |  |
| प्रथमः प्रश्नः               | 359 |  |  |  |  |  |  |
| द्वितीयः प्रश्नः             | 383 |  |  |  |  |  |  |
| तृतीयः प्रश्नः               | 412 |  |  |  |  |  |  |
| चतुर्थः प्रश्नः              | 438 |  |  |  |  |  |  |
| पञ्चमः प्रश्नः               | 444 |  |  |  |  |  |  |
| षष्ठमः प्रश्नः               | 455 |  |  |  |  |  |  |
| सप्तमः प्रश्नः               | 472 |  |  |  |  |  |  |
| अष्टमः प्रश्नः               | 515 |  |  |  |  |  |  |
| नवमः प्रश्नः                 | 548 |  |  |  |  |  |  |
| तैत्तिरीय आरण्यकम् 579       |     |  |  |  |  |  |  |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः | 579 |  |  |  |  |  |  |
| द्वितीयः प्रश्नः             | 621 |  |  |  |  |  |  |
| तृतीयः प्रश्नः               | 639 |  |  |  |  |  |  |
| चतुर्थः प्रश्नः              | 656 |  |  |  |  |  |  |
| पञ्चमः प्रश्नः               | 687 |  |  |  |  |  |  |
| षष्ठः प्रश्नः                |     |  |  |  |  |  |  |
|                              |     |  |  |  |  |  |  |

| अनुक्रमणिका                       | iii |
|-----------------------------------|-----|
| सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली      | 740 |
| अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली | 747 |
| नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली          | 753 |
| द्शमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्  | 759 |
| कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्   | 804 |
| प्रथमः प्रश्नः                    | 804 |
| द्वितीयः प्रश्नः                  | 820 |
| तृतीयः प्रश्नः                    | 838 |
|                                   |     |
|                                   |     |
|                                   |     |
|                                   |     |

## ॥ अष्टकम् १॥

### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंतं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृश्क्तरसन्धंतं तां में जिन्वतम्। पृश्क्तरसन्धंतं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोंऽसि जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

स्वाराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽस् जनंधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणंयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥ व्यान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। शेत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रात्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। श्रायुः सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। आयुः स्थ

आयुर्मे धत्तम्। आयुर्यज्ञायं धत्तम्। आयुर्यज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थंः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥ प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्र ई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कल्पयंतं दैवीर्विशंः। कल्पयंतं मानुषीः॥४॥ इषुमूर्जम्स्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामर्कौ सहामुनां। शुक्रस्यं सिमदंसि। मन्थिनः सिमदंसि। स प्रथमः सङ्कंतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वर्रुणो अग्निः। स प्रथमो बृहस्पतिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥ न्युन्त्वपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतं प्राणं युज्ञायं धत्तं मानुंषीरुग्निर्द्धे चं॥ (ब्रह्मं क्षत्रं तदिषमूर्जरं र्यिं पृष्टिं प्रजां तां पृशून्तान्त्सन्धेत्तं तत्प्राणमेपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। डुषादिपश्चेके वाचं तां में पृश्नून्त्सन्धेत्तं तान्में प्राणादित्रित्तेये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥———[१]

कृत्तिंकास्वृग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमैवेनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वृग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्ष्त्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋधोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भद्राः सन्तोऽग्निमाधित्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासीत्। अथैम्यो वामं वस्वपाकामत्। ते पुनंवस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावंतित। यः पुराऽभद्रः सन्पापीयान्तस्यात्। स पुनंवस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनंरेवैनं वामं वसूपावंतित। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भवति। कालुकुआ वै नामासुरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वतः। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्तः। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्तः। येऽवाकींर्यन्तः। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्तस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यह्रंस्नतः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधंत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। श्रदि वैश्य आदंधीत। श्रद्धे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। पृषा वै जंघन्यां रात्रिः संवत्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवत्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवत्सरस्यं। यदुत्तरे फर्ल्यंनी। मुख्त एव संवत्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमेत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वंधित्सन्त फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृत्नां वेश्यंस्युर्त्रुरुत्तरे फल्गुंनी पद्गं — [२] उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवंरुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वां एषा प्रजनंनम्। यद्षाः॥१४॥

पृष्टांमेव प्रजनंनेऽग्निमाधंते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान् ह्यंतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तामः। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमिति। यद्मुष्यां यज्ञियमासीतः। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥ यद्स्या यज्ञियमासीतः। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांत्रिवपंत्रदो ध्यायेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंते। अग्निदेवभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृंथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृंथिवीमन् समंचरत्।

तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उंपदीका उद्दिंहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्रङ् ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाकष्कीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रे सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

क्थिम्दि स्यादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृंथिवीम्ध और्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुष्करपूर्णेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यै भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समेवहत्। ता शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणाः शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमृग्निमाधंत्ते। शर्कराभवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथो शन्त्वायं। सरेता अग्निर्धिय इत्यांहुः। आपो वर्रणस्य पत्नय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्ने स्वाद्रेतंसो बीभत्सत् इत्यांहः॥२१॥

उत्तरत उपाँस्यत्यबींभत्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिंमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावंरुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोम्पीथमेवावंरुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्रा मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यैं शमित्वम्। यच्छंमीमयंः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहृतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वत्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयुद्धृत्यें बीभत्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्द्र्स्त्रीणिं

द्वादशस्ं विक्रामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवत्सरः।

द्वादशस्ं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इतिं। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृंतं वै वाचा वंदति। अनृंतं मनंसा ध्यायति॥२६॥ चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्मिति। तत्स्त्यम्। यश्चक्षंनिमितेऽग्निमांधत्ते। स्त्य एवैन्मा धंते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। स्त्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥ आग्नेयाः पृशवंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पृश्नेवावं रुन्थे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। अर्थोदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजमानः सृजते। अर्थो भूतं चैव भविष्यचावं रुन्थे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽश्रंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधता अथ् गार्हंपत्यम्। अथांन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्यंषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥ यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्रंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्ं। साऽब्रंवीत्॥३०॥ प्राच्येषा ॥ श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवृगं लोकमेष्यन्ति। प्रजां तु न वेत्स्यन्त इतिं। यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवृगं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ हो के स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं हो के जेष्यसीति। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मै प्रजां पृश्नुन्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिंव वा अयं होकः। अस्मिन्नेव तेनं होके प्रत्यंतिष्ठत्। अथाऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं होकम्भ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां प्रशुभिं मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मि ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं भृग्वङ्गिरसा-

मादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामी-त्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वरुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञां। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनोंस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति वेश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावंकस्ये भविष्यन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]
प्रजापंतिर्वाचः सृत्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स
आंध्रोत्। भूर्भुवः सुव्रित्यांह। एतद्वै वाचः सृत्यम्। य
एतेनाग्निमाध्ते। ऋध्रोत्येव। अथो सृत्यप्रांशूरेव भविति।
अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। सुव्विरत्यांह। सुव्रग एव लोके प्रतितिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्मार्धत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥ सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्यः सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृंह्णीयादुद्धरन्ं। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

एष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेंति। वज्री वा एषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुन्रा वर्तयति॥३९॥

ज्ञिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्कृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्वम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति- रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रे हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयते। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पुषः। यदश्वः। पुष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृशूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यन्नाकृमयेंत्। अनेवरुद्धा अस्य पृश्ववंः स्युः। पार्श्वत आक्रंमयेत्। यथाऽऽहिंतस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्रये पवंमानाय निर्वपंति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नपरिष्टाद्दधाति॥४४॥

पुनमाहुवनीर्यं धत्तेऽश्वत्वं वंर्तयति कुरुत् इतिं रुद्रो दंधाति यद्ग्रये शुचंय एकं च॥🗕 🗘 देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधता इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तदग्निर्नोत्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पशुषु तृतीयम्। अप्सु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥ तद्देवा विजित्यं। पुनरवांरुरुत्सन्त। तेंंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपन्। पशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नयें पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाप्स्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥ तेंं ऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यों ऽग्निः शुचिः। यदेवादित्य आसीत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेत। नैतानि। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥ नाङ्गांनि। तादृगेव तत्। यदेतानिं निर्वपेंत्। न तम्।

यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्याणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावंरुन्थे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा पृतानि ह्वी॰षि। पृष रुद्रः। यदग्निः॥५०॥

यत्सद्य एतानि ह्वी १ षि निर्वपेत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यन्नानुनिर्वपेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृश्ववः स्यः। द्वादृशस् रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवृत्सरप्रतिमा व द्वादंश् रात्रयः। संवृत्सरेणैवास्मे रुद्र शंमियत्वा। पृशूनवंरुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ षि निर्वपेत्॥ ५१॥ यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। तादक्तत्। न प्रजनंन्-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समंस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथो यृज्ञस्यैवेषाऽभिक्रांन्तिः। रृथ्चकं प्रवर्तयति। मनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यत्र जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावंरुन्थे। धेनु १ होत्रें। आशिषं एवावंरुन्थे। अनुङ्वाहंमध्वर्यवें। विह्वर्वा अनुङ्वान्। विह्रंरध्वर्युः॥५४॥

विह्नेनेव विह्ने यज्ञस्यावंरुन्थे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सुर्वुदेवृत्यंं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति। कार्ममूर्धं देयम्। अपरिमितस्यावरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतींयम्प्स्वासीतत्तेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानि हुवी १ वि

निर्वर्पं त्यावं रोहित ददात्यध्वर्युर्देयमेर्कं च॥———[६]

घर्मः शिरस्तदयमग्निः। सिम्प्रियः पशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय तनयाय यच्छ। वार्तः प्राणस्तदयमग्निः। सम्प्रियः पशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥ अर्कश्रक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यमुग्निः। सिम्प्रियः पशुर्मिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाँऽग्ने ब्रह्मंणा। आनुशे व्यांनशे सर्वमायुर्व्यांनशे। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। विरार्द्व स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। सम्माद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। प्रभ्वी

च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तुनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरम्ं गंच्छ॥५८॥

चतुंष्पदे जिन्वतां तुनुवस्त्रीणिं च॥————[  $oldsymbol{9}$  ]

इमे वा पृते लोका अग्नयं। ते यदव्यांवृत्ता आधीयरन्। शोचयंयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चश्चरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमांणे। अन्तिरक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तिरक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्रव्यमुद्धरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमाधत्ते। प्रजापंतिरिश्चिमंसृजत॥६०॥ सोऽश्वोऽवारों भूत्वा पर्रांङैत्। तं वारवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैत्त्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिम् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैनम्त्तरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृशून् हि॰सिंतोः। सम्प्रियः पृशुभिर्भुविदित्यांह। पृशुभिरेवैन्॰ सम्प्रियं करोति। पृशूनामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयित। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्यद् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥ अन्नमेवावं रुन्थे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमन्थ पुवैनम्। आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः।

पृष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठित्मा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गित्मप्रंतिष्ठित्मा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियंः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठित्माधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवेन् समर्धयति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेनं पर्राभावयति॥६४॥

लोकोऽस्जतेन्माधंतेऽन्वाहार्य्पचंनं देवानामत्रमेनं प्रतिष्ठित्माधंते पश्चं चा [८] श्रामीगुर्भाद्विप्तं मंन्थित। एषा वा अग्नेर्यक्तियां तृनूः। तामेवास्मे जनयित। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चार्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्रश्च भगश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या

इन्द्रेश्च विवस्वा इश्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्ञंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यत्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्येन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥ इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रिमिव हि रेतंः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पृतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समंध्यति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राँह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै रांजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥ जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवत्स्रं गोंपायेत्। संवत्स्रः हि रेतों हितं वर्धते। यद्येनः संवत्स्रे नोपनमैंत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न माःसमंश्र्ञीयात्। न स्त्रियमुपेयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्र्भीयात्। यत्स्रियं मुपेयात्। निर्वींर्यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमां नो ब्रह्मौद्नं पंचिति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोदूह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तितिः। तं मिथित्वा प्राश्चमुद्धरित। संवृत्स्रमेव तद्रेतो हितं प्रजनयित। अनाहित्स्तस्याग्निरित्याहुः। यः स्मिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवत्स्रे पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरादेवैनंमव्रुध्याधेत्ते। यदिं संवत्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वादृश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवत्सरप्रतिमा व द्वादंश्य रात्रयः। संवत्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपचदितेते रेतोंऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभिरादंधाति राज्जन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायेयाद्गच्छति मन्थित् रात्रयश्चत्वारि च॥————[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजतः। स रिरिचानोंऽमन्यतः। स तपोंऽतप्यतः। स आत्मन्वीर्यमपश्यतः। तदंवर्धतः। तदंस्मात्सहंसोर्ध्वमंसृज्यतः। सा विराडंभवतः। तां देवासुरा व्यंगृह्णतः। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥ दोहां एव युष्माकृमितिः। सा ततः प्राच्युदंक्रामतः। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णातः। अर्थवं पितुं में गोपायेतिः। सा विद्वतीयमुदंक्रामतः। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णातः। नर्य प्रजां में गोपायेतिः। सा तृतीयमुदंक्रामतः। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णातः। पर्यगृह्णातः। सा श्रू स्यं पश्नमं गोपायेति॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेति। सा पंश्रममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायेति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथों पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्ं। पाङ्केनैव पाङ्कः एणोति। अर्थर्व पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पृश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

प्शूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्भामेवैतेनेंन्द्रियः स्पृणोति। अहें बुध्निय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मन्नंमेवैतेन श्रियः स्पृणोति। यदांन्वाहार्य्पचंनेऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींयांजयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥ तेन सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यत्सभायां विजयंन्ते। तेन् सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न्र् हरंन्ति। तेन् सोंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पृश्नमें गोपायेति प्रविष्टा पृश्नमें गोपायेत्यांह जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥——[१०] ब्रह्म सन्यंत्तं कृत्तिंकासूर्व्वन्ति द्वाद्शस्ं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथीं शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यत्सद्यः सोऽश्वोऽवारीं भूत्वा

जगंतीभिरशींतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्थंनेन॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौँयज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचरः। गुहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदंः पुरूचीः॥२॥ वम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापितसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपहत्यै सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिषमूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभंरामि। यस्यं रूपं बिभ्रंदिमामविन्दत्। गुहा प्रविष्टा सरि्रस्य मध्यै। तस्येदं विह्नंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यत्सरिरस्य मध्यैं। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पर्णं पृंथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद ५ हु जगंतः प्रतिष्ठाम्। उवीं मिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अद्धः सम्भूतममृतं प्रजासुं। तत्सम्भरंनुत्तरतो निधायं॥४॥ अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवत्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भर्गन्तः। शतं जीवेम शरदः सवींराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनंस्पते शतवंलशो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमांणस्य यत्तै॥५॥ पर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधिं। सोऽयं पूर्णः सोमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुख्यै। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतों ऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तत्सम्भर्ड्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रंदाहाय॥६॥ शुमी । शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतुं भा आँच्छंज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नों लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। एतत्ते तदंशनेः सम्भंरामि। सात्मां अग्ने सहंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थात्सम्भृता बृहुत्यः॥७॥ शरीरम्भि सङ्स्कृताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य-वाहािद जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भेरािम। शान्तयोनि । शमीगर्भम्। अग्नये प्रजनियतवै। यो अश्वत्थः शंमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥ यज्ञियैं: केतुभिं: सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यंः। उरुं नों लोकमनुनेषि विद्वान्। प्रवेधसे कवये मेध्याय। वचो वन्दार्रु वृषभाय वृष्णें। यतो भयमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स्मिध्यमांनः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतनिणिक्पावकः। सुयुज्ञो अग्निर्युज्ञथाय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः समिंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतुप्रुषंस्त्वा सुरितों वहन्ति। घृतं पिबंन्त्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने हविषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोद्यन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्रायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रया रेसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्यांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पृशुभिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्त्सिवतुः स्वे। मृही विश्पत्नी सदेने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जात्वेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दशत । शर्करीर्ममं। ऋतेनांग्न आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाम्। दर्शमहं पूर्णमासं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्मं दधाथां ते वांमहं दंदे। तत्सत्यं यद्वीरं बिंभृथः। वीरं जनियष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजंनिष्येथे। ते मा प्रजांते प्रजंनियष्यर्थः॥१४॥ प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंतात्सत्यमुपैंमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। दैवीं वाचं यच्छामि। शल्कैरग्निमिंन्धानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लीकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तंराम्यहम्। जातंवेदो भुवंनस्य रेतंः। इह सिश्च तपंसो यञ्जनिष्यते"॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। श्वामीग्रमांश्वनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्व आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अक्रिन्नं पितरो लोकमंस्मे॥१६॥ अग्नेर्भस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस कामधरणम्। मियं

ते कामधरेणं भूयात्। संवंः सृजामि हृदंयानि। स॰सृष्टं

मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वेः प्रियास्तुन्वेः। सं प्रिया हृदयानि वः। आत्मा वो अस्तु सम्प्रियः। सम्प्रियास्तुनुवो मम्॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्येष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तिरक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्ंसं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण मह्मम्। दीर्घायुत्वायं शतशांरदाय। शतर शर्म्य आयुषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः

श्रेयसीर्दर्धत्॥२०॥

अग्ने सपत्नार् अप बार्धमानः। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौंदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। सपत्रतूरीसे वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥ यस्तं आत्मा पशुषु प्रविष्टः। पुष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भांहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चर्तुष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रमख्यत्। अन्वहानि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावापृथिवी आतंतान। विक्रमस्व महा १ असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥ तयोः पृष्ठे सींदत् जातवेदाः। शम्भः प्रजाभ्यंस्त्नुवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ देधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृष्ट्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्नम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जिन्ष्यमाणां च। अमृते स्त्ये प्रतिष्ठिताम्। अथेर्व पितुं में गोपाय। रसमन्निमृहायुंषे। अदंब्धायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृणा। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेष। सा हि श्रीर्मृतां स्ताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्येः। मुर्मुज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पृश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्भृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विश्वन्तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृह्त्यौं ब्रह्मंणा दुवस्यत विश्ववार इममृंअते पुरोगां प्रजनियुष्यथों जिन्ष्यतेंऽस्मै मर्म महिम्ना वर्चसे दर्धत्सुवर्गो भांहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्पदः सतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥-नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्ति। नवस्वेव तत्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सत्रिणंः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इतिं। द्वादेशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादेश मार्साः संवत्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तदशाः पर्रः सामानः कार्याः॥२८॥ प्शवो वा उक्थानि। पुशूनामवंरु छै। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तदशाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजमि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिरिच्येते। एकया गौरतिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवृर्गो वै लोको ज्योतिः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाकुरं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्त्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजंमाना अवंरुन्धते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्वै स्वांगी लोकः। बृह्तैव स्वांगी लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् साम। मार्ध्यं दिने पवंमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवत्स्रम्प्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् ये-ऽमुतोऽर्वाश्चम्प्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चम्पंयन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेवन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्यां विराङ्गंहान्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥————[२]

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिवाकीर्त्यम्। यथा शालाये पक्षंसी। एवः संवत्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूची संवत्सरस्य पक्षंसी व्यवस्त्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्ते। यथा शालाये पक्षंसी मध्यमं वःशम्भि संमायन्छंति॥३३॥

एव संवत्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यंमभि सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छन्ति। पुक्विर्शमहंर्भवति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्ध्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्पयन्ति। अथो अहं एवैष बलिहिंयते। सप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरंः प्रजानांम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्मात्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ श्रोकानुभ्यं जयत्। तस्यासौ लोको ८नंभिजित आसीत्। तं विश्वकर्मा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥ सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते।

ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्यते। विश्वान्येवान्येव कर्माणि कुर्वाणा यन्ति। अस्यामन्येव प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धात्संवत्सरस्यान्यौन्यो गृह्यते। तावुभौ सह महाब्रते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतितिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ स्मायच्छंत्यितिग्रह्यं गृह्यते गृह्यते संवत्सरस्यान्यौन्यो गृह्यते पश्चे च॥———[३]

पुक्रविष्श एष भंवति। एतेन् वै देवा एंकविष्शेनं। आदित्यमित उत्तमर सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकविष्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तांत्। स वा एष विराज्यंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष सुंवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-दंबिभयुः। तं छन्दोंभिरदृश्हं धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्चभीं रृश्मिभिरुदंवयन्। तस्मांदेकविश्शेऽहुन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रुश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पवंमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयंन्त्येनं पर्राणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्गं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तत्स्पराणाक्षं स्पर्त्वम्। स्पारयंन्त्यैनुक्षं स्पराणि। य पृवं वेदं॥३९॥

णुति पर्वमानयोः स्परांणि पश्चं च॥-----[४]

अप्रतिष्ठां वा पृते गंच्छन्ति। येषा रं संवत्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यते। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवालंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्धते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावांपृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वृत्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवंरुन्थे। आदित्यामविं वृशामालंभन्ते। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलिहिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अज्येत्वान् वा एते पूर्वैर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्तें। उभयेषां पश्नामवंरुद्धे॥४२॥

यदितिरिक्तामेकादिशिनीमालभैरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्द्रौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते एवालंभन्ते मैत्रावरूणीमालंभन्तेऽवंरुद्धै सप्त चं॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीिते। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रतत्वम्। महद्गतमिति। तन्मंहाव्रतस्यं

महाव्रत्त्वम्। मृह्तो व्रतमितिं। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। पश्चविश्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुर्विश्शत्यर्धमासः संवत्स्रः। यद्वा एतस्मिन्त्संवत्स्रेऽिष् प्राजांयत। तदन्नं पश्चिवश्शमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमश्चितं धिनोतिं। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्थीयते। अथ् यद्वा इदमन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजननायैव। त्रिवृच्छिरो भवति॥४५॥ विभावित्वश्र ति शिर्मः। क्रोमं क्रवीयस्थि। प्रयोगा स्ववन्ति।

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तत्महग्वेव। न मेद्यतोऽन्ं मेद्यति। न कृश्यतोऽन्ं कृश्यति। पश्चद्रशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। समद्रशौंऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रत्तो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चिविष्श आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। एकविष्शं पुच्छम्ँ। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिर्षपन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानिं। न वा एतेन् सर्वः पुरुषः॥४७॥ यदित इंतो लोमांनि द्तो न्खान्। पृिर्मादं क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना स्याम्यक्षे। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंत्ड् स्यात्। स देवाना्ड् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्क्षं शर्र्सति। महो वै प्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमंऽरात्सुरिमे सुंभूतमंऋन्नित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंऋन्नित्यंन्यत्रः। यदेवैषा स्सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवादित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥

-[દ્દ]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकविष्श पृषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥ उद्धन्यमानः शोचिष्केशोऽग्नं सपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालंभन्ते पञ्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानः संविन्दन्ते॥

भुवृति भुवृति क्रियते पुरुषो जयत्यजयश्चयत्येकं च॥\_\_\_\_\_

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विंज्यमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्स्विनींस्तुनः सन्त्र्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाुग्नीषोमावपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूत्संत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्स्विनींस्तुन्र्रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तन्र्व्यंगृह्णत्त। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा प्रतिक्रियते। यत्समिधस्तनूनपांतिम्डो बर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्याहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याभ्रेयस्याज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनांग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृंतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ श्रु प्रचंरति। एष्यं इव वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृत्मुत्सृंजित। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राहायमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेंजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्याताम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्र्यजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्।

अनाँग्नेयं वा एतत्क्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजति। अग्निम्त्तमं पंत्नीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इतिं॥७॥

अरुन्धतेव तद्भवित सम्भृतसम्भार इत्यांहुरिच्छतिं पत्नीसंयाजा नवं च॥———[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहमनेनं यजा इतिं। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पतिरुदेजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रोऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रंमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छुत्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्यैष्ठ्याय॥९॥

अगंच्छुत्स्वाराँज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्यांय॥९॥ य एवं विद्वान् वाज्येयेन् यजंते। गच्छंति स्वाराँज्यम्। अग्र र समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राँह्मणस्यं चैव रांज्नन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांज्येय इत्याहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज् कुं ह्येतेनं देवा ऐप्सन्। सोमो वै वांज्येयः। यो वै सोमं वाज्येयं वेदं॥१०॥ वाज्येवैनं पीत्वा भवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्म जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदे। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा पृता उन्नितयो व्याख्यायन्ते। यृज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतानामिनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नंस्य च् शमेलमपान्न्। यद्वह्मणः शमेलमासीत्। सा गाथां नाराशुङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरा॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शर्मेलुं प्रतिंगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्नौ या रथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽप्सु यौषंधीषु या वन्स्पतिंषु। तस्मौद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ट्यांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽर्त्विजीन् एकं च॥———[२] देवा वै यदन्यैर्ग्रहैं यज्ञस्य नावारंन्धत। तदंतिग्राह्यें रतिगृह्या-वांरुन्धत। तदंतिग्राह्यांणामतिग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैं युंजस्य नावंरुन्धे। तदेव तैरंतिगृह्यावंरुन्धे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्को यज्ञः। यावानेव यज्ञः। तमास्वाऽवंरुन्धे॥१५॥ सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एकधैव यर्जमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदेश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एकधैव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां परममन्नम्। यत्सोमः॥१६॥

पृतन्मंनुष्यांणाम्। यत्सुरां। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवंरुन्थे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा पृतत्तेजंः। यत्सोमंः। ब्रह्मंण पृव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा पृतच्छमंलम्। यत्सुरां॥१७॥ अन्नस्यैव शमंलेन शमंलं यजंमानादपंहिन्त। सोमग्रहा ॥ सुराग्रहा ॥ शृह्णाति। पुमान् वै सोमंः। स्त्री सुराँ। तिन्मंथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंम्व सोमग्रहेः स्पृणोति। जाया स्रंराग्रहेः। तस्माँद्वाजपेययाज्यंमुष्मिँ ह्योस्य॥१८॥ वाजपेयांभिजित् ॥ ह्यांस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्त्सांदयित। पृश्चाद्क्षश् सुंराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्ये। एष वे यजंमानः। यत्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाश्श्चं सुराग्रहाश्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्थ् सं मां भुद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भुद्रम्। अन्नाद्येनैवेन् स् सर्मुजिति। अन्नस्य वा एतच्छमेलम्। यत्सुरां। पाप्मेव खलु वै शमेलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमेलेन व्यतिषजिति। यत्सोमग्रहा इश्चे सुराग्रहा इश्चे व्यतिषजिति। विपृचेः स्थ् वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन् शमेलेन व्यावित्यति॥२०॥ तस्माँद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाजसृद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु स स सृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मुध्व्योऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजंमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आस्वाऽवंरु-थे सोमः शर्मलं यत्स्य ह्यंस्येनं व्यतिपजित व्यावंतियति स्वति व्यवारि वा[3] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंडुशी नातिरात्रः। अथ कस्माद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त इतिं। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावंरुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोडुशिनः स्तोत्रम्। सार्स्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पशुभिरेवावंरुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥ सुवर्गं लोकर षोंड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाकरं रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवात्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्नां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचरं सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पृशूनालंभते। सप्तदृशः प्रजापंतिः॥२४॥ प्रजापंतेरास्यैं। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव हि

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एवमिंव हि प्रजापंतिः समृंद्धै। तान्पर्यंग्निकृतानुत्सृंजति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मांरुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मा्रुत्या प्रचर्य। एतान्त्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पुतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पुक्धा वपा जुंहोति। पुक्देवत्यां हि। पुते। अथों एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पुतत्पुंरोडाशा ह्येते। अथों पश्नूनामेव छिद्रमिंदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वे सरंस्वती। तस्मात्प्राणानां वार्गुत्तमा। अथों प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयित। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मांन्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रम्न्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचरित षद चं॥\_\_\_\_\_[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तात्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांज्येयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। सवितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सवंनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तत्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावंरुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिंच्यते। अप्स्वंन्तर्मृतंमप्सु भेषजमित्यश्वांन्पल्पूलयति। अप्सु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंप्लवते। यद्प्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्याप्सु प्रविष्टम्। तदेवावंरुन्धे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपं-गच्छति। यद्प्सु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां

दिशोऽभिजंयति॥३१॥

त्वा मर्नुर्वा त्वेत्याह। पृता वा पृतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनिक्त। स्वस्योज्जित्यै। यर्जुषा युनिक्त व्यावृत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्मार्ष्टि। मेध्यांनेवैनांन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौन्यङ्कावभितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनांत्ये। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

देवस्याहर संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिंना वाज्जिता वाजं जेषिमत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु अंयित। देवस्याहर संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिंना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुह्यमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहित। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहित। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। आवेष्टयित। वज्रो वै रथंः। वज्रेणेव वाजिना १ साम गायते। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावंरुन्धे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्मौद्दन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्त्सुमाघ्नंन्ति। पुरमा वा पुषा वाक्॥३२॥ या दुंन्दुभौ। परमयैव वाचाऽवंरां वाचमंवरुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म यजमानोऽवंरुन्धे। इन्द्रांय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रेः। यो यजंते। यजंमान एव वाजमुञ्जंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तदशं स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥ ३३॥

सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापत्रास्यै। अर्वाऽस् सिरिस् वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सिर्तः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्तः॥३४॥ वाजिनो वाजं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिव् हि सुंवर्गो लोकः। चृत्सृभि्रनुं मन्नयते। चृत्वारि छन्दार्शसे। छन्दोभिरवैनान्त्सुवर्गं लोकं गमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावंरुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिकीयावंरुन्धे। एकधा ब्रह्मण् उपंहरति। एकधेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पति्रदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवारत्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पृतद्वे देवानां पर्ममत्रम्। यत्रीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्न्नाद्यमवंरुन्थे। स्प्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सूर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येपेयंन् यजंते। बा्र्ह्स्पृत्य एष च्रः। अश्वांन्त्सरिष्यृतः सस्रुषृश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावंरुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुंच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुंश्चति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावंरुन्धे॥३९॥

अभिजंयति वा एषा वाग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयति य आजिं धार्वन्ति भवति देवतंयाऽष्टौ

तार्प्यं यजमानं परिधापयति। यज्ञो वे तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वे दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुत्सते। यो वाजपयेन् यजते। ओषंधयः खलु वे वाजः। यद्देर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पित्रंया एवैष यज्ञस्यांन्वार्म्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। तूपरश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥ एविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथो अमुमेवास्में लोकमन्नंवन्तं करोति। वासोंभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। स्वृंदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तत्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥ द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवृत्सरमेव प्रीणाति। अथो संवत्सरमेवास्मा उपंदधाति। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री। द्शिभः कल्पं रोहित। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यंथास्थानं कल्पयित्वा। सुवृर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अगृन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। आसपुटैर्प्रन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्प्रन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन समर्धयन्ति। पुरस्तौत्पृत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतितिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्टौ वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवत्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पृष्ट्यामेव प्रजनंने प्रतितिष्ठति॥४७॥

प्रिथापयंति ग्रेथमां ज्होति स्वं नैति प्रत्यश्चं प्रन्ति लोको नवं चा——[७] सप्तान्नहोमाञ्जहोति। सप्त वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नानि। तान्येवावंरुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्रीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति।

अनंवरुद्धस्यावंरुद्धे। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धे॥४९॥

पुरस्तौत्प्रत्यश्रंमभिषिश्चिति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमद्यतै। शीर्षतोऽभिषिश्चिति। शीर्षतो ह्यनंमद्यतै। आ मुखांदन्ववं-स्रावयित। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामी-त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभि-षिश्चति। सोमग्रहा इश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चांनवदानीयानि च वाज्मुद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथों उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्मृतः॥५१॥ ड्रान्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सब्ने स्तुंबते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। वाजंबतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वे वाजंः। अन्नम्वावंरुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसब्ने। युज्ञो वे विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अश्रीयादन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाज्सृतः शिपिस्नीणिं

च॥\_\_\_\_\_[∠]

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवंनमगन्निति वै तमांहः। भुवंनमवेतेनं गच्छति॥५३॥

अप्सुषदं त्वा घृतसद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेन गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकाना सूयते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपींव हि

देवतांना १ सूयतें॥ ५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगृत्निति वै तमांहुः। नाकंमेवैतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवैतेनं सूयते। अपा॰ रस्मुद्धंयस्मित्यांह। अपामेवैतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्म॰ स्मार्भृतमित्यांह सश्क्रत्वायं॥५५॥

गुच्छृति सूयते नवं चा-[९] इन्द्रों वृत्र १ हृत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञों-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरदद्रः।

तेंं ऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमें भ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोतिं। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यज्ञंमानः प्रतेनुते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवंरुन्थे। न हि पिता प्रमीयंमाण आहैष सोमपीथ इतिं। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्थे।

तेनेन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्रुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रव्सा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य पृवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्रुते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य पृव पितृणाम्ग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्वम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वां। देवान् वे पितॄन्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्ग्रीणाति। तान्ग्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। स्कृदाच्छिन्नं ब्रहिर्भवति। स्कृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावर्तते॥६०॥ ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत उपास्ते। ऊष्मभांगा हि

पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रौश्रीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रौश्रीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वा ददति। दशां छिनत्ति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः होतर्हि नेदीयः॥६२॥ नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मन्यवै। नमों वः पितरो घोरायं। पितंरो नमों वः। य एतस्मिं लोके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ लोके। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ लोके स्थ। यूयं तेषां वसिष्ठा भूयास्त। यैंऽस्मिँ ह्योके। अहं तेषां वसिष्ठो भूयासमित्याह। वसिष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यः करोति। एष वै मनुष्याणां यज्ञः॥६४॥ देवानां वा इतरे युज्ञाः। तेन वा एतत्पितृलोके चरित। यत्पितृभ्यः करोतिं। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययर्चा पुनरेतिं। युज्ञो वै प्रजापंतिः। युज्ञेनैव सह पुनरेतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजंमानश्चरित।

यत्पृतृभ्यः क्रोति। स ईश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हृतीत्याहुः। यत्प्राजापृत्ययुर्चा पुन्रेति। प्रजापंतिरेवैनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥ इत्यंश्रते पद्यन्ते पद्यम् पद्यन्ते पद्यन्

देवासुरा वाज्येवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका

हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यजंमानः॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः

प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तांत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहुत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुर्गनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाश्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाश्स्तंपयति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण् यजमानः सुवर्गं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति।

व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकमभिजंयति। यानिं मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकमभिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमग्रहंणीरितिं। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्ञिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पशून् यजंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यर्जमान इमां दुंहे। तां विश्वे देवा औग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदौग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुहे। तां मंनुष्यां ध्रवस्थाल्या-ऽऽयुंरदुह्न। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वाय्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

युव १ सुराममिश्विना। नमुंचावासुरे सर्चां। विपिपाना

शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमेव पितरांविश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दुर्सनांभिः। यत्सुरामं व्यपिंबः शवींभिः। सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्थेते। सुचीवं घृतं चुमू इंवृ सोमंः॥७॥

वाज्सिनिर्ं र्यिम्स्मे सुवीरम्ँ। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्ँ। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वृशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्ठाय वेधसेँ। हृदा मृतिं जनय चारुंमग्रयेँ। नाना हि वां देवहिंत्र सदो मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं पृषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवनं। सोम्र राजांनिमृह भंक्षयामि। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमृत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन्र समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥ यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे॥ यस्ते

देव वरुण जगंतीछन्दाः पार्शः। तं तं पुतेनावं यजे। सोमो वा

पृतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन यंजे राज्यायैकं च॥——[२] उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्य्ज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा

अंग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्याँग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदिंतिरितिं। इयं वै देव्यदिंतिः॥११॥

इमामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। अवंर्तिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु इस्कन्दंति। यद्द्य

दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीर्प्यसंर्घदापंः। पयों गृहेषु पयों अघ्नियासुं। पयों वृत्सेषु पयों अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं पुवात्मन्गृहेषुं पुशुषुं धत्ते। अप उपंसृजिति॥१३॥ अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति स स स्मुजिति। उमे वै ते तर्ह्यार्च्छतः। आर्च्छति खलु वा पृतदिग्निहोत्रम्। यदुह्ममान् इ स्कन्दंति। यदंभिदुह्मात्। आर्ते नानौतं यज्ञस्य स॰सृंजेत्। तदेव यादकीदक्रं होतव्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होतव्यम्। अनाँर्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥ यद्यद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरेयात्। युज्ञं विच्छिन्द्यात्। यत्र स्कन्दैत्। तिन्नषद्य पुनर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं एवेनत्पुनंगृह्णाति। तदेव यादक्कीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥ वि वा एतस्यं यज्ञशिछंद्यते। यस्यांग्रिहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वाऽन्तरा

वि वा एतस्य युज्ञिश्छंद्यते। यस्याभिहोत्रेऽभिश्रिते श्वाऽन्तरा धावति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्भिः। यद्गमंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यद्पों-ऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमभ्रेरापः। अनाद्यमाभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चा-ऽऽहंवनीयाद्धश्सयनुद्रंवेत्। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञेनैव युज्ञश् सन्तंनोति। भस्मंना पदमपिं वपति शान्त्यै॥१६॥

वै देव्यदितिर्मुश्चति सृजति करोति करोत्याभ्यामपि दध्यात् पश्चं च॥———[३]

नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धत सूर्योऽभि निम्रोचंति। दर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तौद्धरेत्। अथाग्निम्। अथौग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवैनं पश्यनुद्धंरित। यदिम्नं पूर्व हरत्यथां मिहोत्रम्॥१७॥ भागधेयेंनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धरित। अग्निहोत्रम्ंपसाद्यातमिंतोरासीत। व्रतमेव हतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धतः सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वर्रुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुद्धृत्र सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भाग्धेयेनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा पृतस्मैं व्युच्छन्ती व्युच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्गिषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् ः सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तंं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् ः सूर्योऽभ्यंदेतिं। मैत्रं च्रुं निर्विपत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेत्॥२२॥ यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै युज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं

रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्तव्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयित्रिया त्रिष्टुभा जगत्या। देवेभ्यों हृव्यं वहतु प्रजानित्रिति। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मे रमयित। सारुस्वतौ त्वोत्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुत्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन्ध् सिमंन्धे। सुम्राडंसि विराडसीत्यांह। रुथन्तुरं वै सुम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् सिमंन्धे। वज्रो वै च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्तराऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृतं पदश् हि तें। सूर्यस्य र्ष्मीनन्वांततानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं यज्ञेनं यज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव यज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पिथकृतं पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं यज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वही होष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्धार्यैन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुंणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनिर्मित्रो मैत्रं यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मन्थेदुद्धरेत्॥॥

यस्यं प्रातः सब्ने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सर्वनं

कामयंमानोऽभ्यतिंरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यत्सवंनस्यातिरिच्यते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनात्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मुध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृंतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यत्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्थयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनात्सर्वनान्नयंन्ति। स्प्तदृशः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शक्सति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽित्रिच्यंत। उक्थं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽित्रिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽित्रिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यज्ञंमानं वा एतत्प्शवं आसाह्यंयन्ति। बृहत्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः पृशवंः। बृह्तैवास्मं पृश्न्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पुष्टम्। पृष्ट्येवेन् समंध्यन्ति। होतुंश्चमसमनून्नंयन्ते। होताऽनुंश स्सित। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

पुर्ने सर्वनस्याविष्यिते शश्सित दाधागृष्टौ चं॥———[५] एकैं को वै जनतां यामिन्द्रंः। एकं वा एताविन्द्रंमिम सश्सुनुतः। यौ द्वौ सर्थ सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्थसुन्वतोर्निर्बप्सित। पूर्वेणोपुसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपुसृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

मुरुत्वंतीः प्रतिपदंः। मुरुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनमन्तरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥ सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यांत्। अभिवर्तो ब्रंह्मसामं भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूया रेसो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः प्रस्तात्स्यात्॥३४॥

उक्थं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुक्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्मुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्भसे वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्भस्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥ इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽष्टुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां

छन्दा इस्यमिभंवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्यः॥३५॥ इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा माहासिष्ट्रमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयः। ऋूर्कृतांमिवेषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥ तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवैनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यत्स्तुतमनंनुशस्तमिति। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मांर्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोरेवैनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मे हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षि पवस् इतिं प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसामेषार् सोमः स्यात्। आयुरेवात्मन्दंधते। अथो पाप्मानमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्ये पृथ्व्याश्च स्यादंख्र्युर्ब्र्याङ्योकयोः परिददित कुर्वीर्ड्स्भीणे च॥——[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मात्पशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियन्ति। येषांं दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥ यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारों रुद्वायेंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमि कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तुनूः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥ गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनेंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्येंत्। सुवर्ण् हरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षे ऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयाद्न्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिषूयमांणस्य प्रिया तुनूरुदंकामत्॥४२॥ तत्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरेयुः। कीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं कीतमंपहरंयुः। आदारा ॥ काल्गुनानि चाभिषुंणुयात्। गायत्री य ॥

सोममाहंरत्। तस्य योऽ५शः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदारा इश्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। द्र्षा मुध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तरसांमा। य एवर्त्विजो वृताः स्युः। त एनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सेव ततः प्रायंश्चित्तिः। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानमागुरते। यः स्त्रायांगुरते। एतावानखलु व पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्यः एव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्घार्यति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्पुराऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥————[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रंण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयर्वः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीर्घत्। अग्ने कत्वा कतू रन्॥४६॥

यत्तं प्वित्रंम्चिषिं। अग्रे वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं प्नीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं प्नीमहे। वैश्वदेवी पुंनती देव्यागांत्। यस्यें बह्णास्त्वां वीतपृष्ठाः। तया मदंन्तः सध्माद्येषु। वय स्यांम् पत्यो रयीणाम्॥४७॥ वैश्वान्रो रिश्मिर्भिर्मा पुनातु। वातः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञियें मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठेदेव मन्मंभिः। अग्रे दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मंणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। सर्व्र् स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांतृरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृत्र् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर्र स्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुदुघा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत ५

हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथी अमुम्। कामान्त्समर्धयन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुदुघा हि घृतश्चतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्रातोद्यांम र हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतश्चृत ऋषिंभिः सम्भृंतो रसः पुनातु त्रीणि

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्नतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनांर्धमास ऊर्जुमवांरुन्थत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्थत। तस्मांन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं

घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठ्-तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येम्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। पृशवोऽपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवत्स्र ऊर्ज्मवांरुन्धतः। ते देवा अंमन्यन्तः। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इति। त एतानिं चातुर्मा्स्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवेषान्तामूर्जंमवृञ्जतः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥ यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्धतः। तान्तेनावंरुन्धे। यतिपृत्यः करोति। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्धतः। तान्तेनावंरुन्धे। यदांवस्थेऽन्नर् हर्रन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जम्वारुन्धतः। तान्तेनावंरुन्धे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥ यामेव पशव ऊर्जम्वारुन्धतः। तान्तेनावंरुन्धे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥ यामेव पशव ऊर्जम्वारुन्धतः। तान्तेनावंरुन्धे। यचांतुर्मास्थैर्-

यजंते। यामेवासुरा ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे।

भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृं व्यो भवति। विराजो वा पृषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं छोके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासैरन्तिरक्षे। साकमेथेरमुष्मिं छोके। एष ह् त्वावैतत्सर्वं भवति। य पृवं विद्वा इश्वांतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥ मृनुष्यं अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णः स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णः स्वधामसंग विद्वा द्वांत्यतिष्ठचत्वारि च॥———[९]

अग्निर्वाव संवत्स्रः। आदित्यः पंरिवत्स्रः। चन्द्रमां इदावत्स्रः। वायुरंनुवत्स्रः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तत्संवत्स्रमांप्नोति। तस्माँद्वेश्वदेवेन् यजंमानः। संवत्स्रीणाः स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यद्वंरुणप्रघासेर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवत्स्रमांप्नोति॥५७॥

आदित्यमेव तत्पंरिवत्स्रमाँप्रोति॥५७॥
तस्माँद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशाँस्त्
इत्याशांसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तदिंदावत्स्रमाँप्रोति। तस्माँत्साकमेधेर्यजंमानः। इदावृत्स्रीणाई
स्वस्तिमाशाँस्त् इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजंते। देवानेव
तद्नववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनुवत्स्रश्चाप्रीतावृच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवत्सरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवृत्सरीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवृत्सरं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवत्सरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। पृतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजंते। अथं संवत्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अथं सहस्रयाजिनंमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया १सि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः स्मयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वरुणु राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स

पृतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वंरुणप्रघासैर्यजंते। पृतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वरुण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दार्शस साकमेधेरंयजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यत्सांकमेधेर्यजंते। पृतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस पृव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। पृष ह् त्वै साक्षात्सोमं भक्षयित। य पृवं विद्वान्त्सांकमेधेर्यजंते। यत्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च स्मैधंन्त॥६३॥

तत्संकिम्धाना र साकमध्त्वम्। अथुर्तवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयुज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयुज्ञेन यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयुज्ञेनायंजन्त। तिर्पतृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥ अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै

ता अंप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्स्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्निः। अथं वायुः पंरमेष्ठिनः शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रित्। यदि हेमंन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमप्येति। संवत्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पृरिवृत्सुरमाप्नोति शुनासीरीयेण यजंतेऽजयन्त्सहस्रयाजिनंमाप्नोति वैश्वदेवृत्व सांकमेधेरंयजत स्मैधंन्त पितृयज्ञ् जंयति यस्मिन्वायुर्हेम्न्तस्रीणि च॥—————[१०]

उभयें युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सव्न एकैंकोऽसुर्यं पवंमानः प्रजा वै सुत्रमांसता्म्निर्वाव संवत्सुरो दशं॥१०॥

उभये वा उदंस्थात्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राँह्मणेष्वथं गृहमेधिन् पट्थांष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अुग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं पुरस्ताु इयोतिंरुवस्तात्। प्रजापंते रोहिणी। आपः परस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विर्ततानि। पुरस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृगयवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥ बृहस्पतें स्तिष्यः। जुह्वंतः पुरस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छेन्तः पुरस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तौत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः पुरस्तोदपभ्रश्शोऽवस्तौत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया पुरस्तांद्दष्भोंऽवस्तांत्। भगुस्योत्तरे। वृहतवंः पुरस्ताद्वहंमाना अवस्तात्॥२॥ देवस्यं सवितुर्हस्तः। प्रमुवः पुरस्तौत्सुनिर्वस्तौत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं पुरस्तात्सत्यमवस्तात्। वायोर्निष्ट्या

युगानि पुरस्तौत्कृषमाणा अवस्तौत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्परस्तांदभ्यारूढमवस्तौत्॥३॥

व्रतितंः। परस्तादसिंद्धिरवस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे।

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्प्रस्तौत्प्रतिशृणद्वस्तौत्। निर्ऋत्यै मूलवर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तंः पुरस्तांतप्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः परस्तात्सिमितिरवस्तात्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्परस्तांदभिजितमवस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तात्।।४॥ वसूना ॥ श्रविष्ठाः। भूतं पुरस्ताद्भृतिरुवस्तात्। इन्द्रेस्य शतभिषक्। विश्वव्यंचाः पुरस्तांद्विश्वक्षितिर्वस्तांत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वानरं परस्ताँद्वैश्वावसवम-वस्तांत्। अहें बुंध्रियस्योत्तंरे। अभिष्रिश्चन्तंः पुरस्तांदभि-षुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गार्वः पुरस्तांह्वत्सा . अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामः पुरस्तात्सेनाऽवस्तात्। यमस्यापभरंणीः। अपकर्षन्तः परस्तांदपवहन्तोऽवस्तांत्।

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वत्सा अवस्तात्पश्चं च॥———[१]

पूर्णा पृश्चाद्यत्ते देवा अदंधुः॥५॥

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ् नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छेंत्। यत्रं जघन्यं पश्येत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शृतद्यंम्नं च मात्स्यो निरवसाययां चंकार॥६॥

यो वै नंक्ष्तियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नंक्षत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्वामुष्मि इश्वा यां कामयेत दृहितरं प्रिया स्यादिति। तां निष्ट्यायां दद्यात्। प्रियेव भवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्य्यं जयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावंन्त प्रवाभंवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्मौद्रेवत्यौं पशूनां कुंवीत।

यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भंवन्ति। सृत्तिलं वा इदमन्त्रासीँत्। यदत्रन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजते। अमु स लोकं नंक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादृगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानि॥११॥ यम्नुक्षुत्राण्यन्यानिं। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षुत्राणिं। अनूराधाः प्रथमम्। अपुभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षुत्राणिं। यानि देवनक्षत्राणिं। तानि दक्षिणेन

तान्युत्तरेण। अन्वेषामरात्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-विध्यमेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

परियन्ति। यानिं यमनक्षत्राणिं॥१२॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्तभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपुभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयोर्विदुरजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यम-

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वर्रणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हिं पृशवंः सुमायंन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीन रं सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। वर्रणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहः। तस्मात्तर्हि नार्नृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षंत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यानि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। यचं प्रस्तान्नक्षंत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यानि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

सङ्गवाथ्योड्शिन्ं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गो वंदेद्भवति समानस्याहुः पञ्च पुण्यांनि

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि युज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशितें ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥ व्यानादुंपा श्रुसवंनम्। वाच ऐंन्द्रवायवम्। दुक्षुक्रतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स प्रतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥———[४]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्स्त्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तौन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जमा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥ एकं मासमुदंसृजत्। परमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभयो मह आवंहत्। अमृतुं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवत्सराः। येन ते तें प्रजापते। ईजानस्य न्यवंर्तयन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसें। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्ज्ञसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सृत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तत्सृत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये स्हाभिवर्तय उष्णिहां राध्यास्ं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारि च। (ऋतमेव षोडंश। यद्घुर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासं चतुर्वि १शितः)॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवांश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तें-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिंथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेंऽवपतः। अथोपपृक्षौः। अथ् केशान्ं। ततो वै स प्राजांयत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवत्स्रे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परि च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोऽवृञ्जत वर्रुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्तु परि च। साकमेधेश्चतुरों मासों ऽवृञ्जत् सोमंराजानः। ताञ्छी्र्षं नि चार्वर्तयन्तु परि च। या संवत्सर उपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभेवन्। पराऽसुराः॥२८॥ य एवं विद्वाः श्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवत्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयंति। एतदेवैना ५ रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ ह्लोहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वंतयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वंतयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानि। त्रीणि छन्दा स्मि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥ ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निमे मन्यते॥३१॥

पृत्येत्ययुञ्ज्वतासुरा एति लोका मन्यते॥————[६]

आयुंषः प्राण १ सन्तंन्। प्राणादंपान १ सन्तंन्। अपानाद्यान १ सन्तंन्। व्यानाचक्षुः सन्तंन्। चक्षुंषः श्रोत्र १ सन्तंन्। श्रोत्रान्मनः सन्तंन्। मनंसो वाच १ सन्तंन्। वाच आत्मान १ सन्तंन्। आत्मनंः पृथिवी १ सन्तंन्। पृथिव्या अन्तरिक्ष १ सन्तंन्। अन्तरिक्षादिव १ सन्तंन्। दिवः सुवः सन्तंनु॥ ३२॥ अन्तरिक्ष १ सन्तंन् १ वे वे वे विष् स्तंन् १ विष् स्तंन् १ विष् सन्तंन्। १००

इन्द्रों दधीचो अस्थिभैः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनो बृहत्॥३३॥ इन्द्रम्केभिर्किणंः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचाँ। सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रों वृज्री हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर् रोहयिद्वि। वि गोभिरिद्रमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥**\_\_\_\_**[८]

देवासुराः संयंता आसन्। स प्रजापंतिरिन्दं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया॰सोऽहन्निति। प्रह्नादों हु वै कायाधवः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन्निति। ते देवाः प्रजापंतिमुपसमेत्योचः। नाराजकंस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥ तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वं-विन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां पृतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्ष्रणीयं निरंवपन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपांनयन्॥३७॥ ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोंहन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्य्वंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोंहन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्यम्भि स्मारोंहन्। तदंपृद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पृव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपा शूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुंवेत्स्यन्तीतिं। त उपा शूप्पसदंमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांपसदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी ह् स्वाहेति। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतः ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघ्निरे। तथों एवैतदेवंविद्यजंमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। सुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीरहुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वची अपांवधीन्त्वेषं वची अपांवधी स्वाहेति। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचंः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचंः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मांदिमिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अह्नं एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ह्योके यजंमानः। अस्थि च मा १ सं च। अस्थि चैव तेन मा १ सं च यजंमानः स १ स्कुरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवृग्निर्मित्रावरुणौ॥४२॥ पश्चपश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गा १ स स्मावाऽस्थि मञ्जा।

पृतमेव तत्पंश्रधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्रिति। भेषुजतांये निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभेश्छन्दोभिः प्रातरह्वयन्। तस्मौत्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारंसि प्रातरनुवाकेऽनूँच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपासीदन्। उपास्मे गायता नर् इति। तस्मोदेतयां बहिष्यवमान उंपसद्यः॥४३॥

पुच्छुन्नुन्युक्ष्स्तुष्टुन्तुऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्य् रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिष्ठिरे मित्रावर्रुणौ नवं च (देवा यजंमानो देवा देवा यजंमानो यजंमानः प्राचंर्यं प्रचंरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठिरे भ्रातृंच्यान्॥)॥————[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वालः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिश्वलं त्रिप्रूषम्। तस्मात्तं त्रिवित्स्तं खेनन्ति। स स्वर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यत्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्चद्शेनाहंरन्। यावंती पश्चद्शस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्रशेनामि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहं रन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कवि १ शेनामि प्रास्तुंवत। तमें कवि १ शेनाहं रन्। यावंत्येकवि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्चद्शेनं स्तुवतें। पृश्चद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनेव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतें। पृश्चद्रश्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस पृवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यत्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तर्स्तप्द्रशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतेरेवैनं

तत्। मात्रा सार्युज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यदेंकवि श्रोनं स्तुवतें। एकवि श्रोनेव तद्यजंमानुमादंदते। तमेंकवि १ शेनैव हंरन्ति। यावंत्येकवि १ शस्य मात्रां। असौ वा आंदित्य एकवि १ शः। आदित्यस्यैवैनं तत्॥ ४९॥ मात्रा सार्युज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौ। व्यंघ्रन्। ते अंहोरा्त्रे अंभवताम्। अहंरे्व सुवर्णांऽभवत्। रुजुता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तत्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेति। एतामेव तद्रंजतां कुशीमनुसंविंशति। प्रह्लादों ह वै कायाध्वः। विरोचन्ड् स्वं पुत्रमुदाँस्यत्। स प्रंदरों ऽभवत्। तस्माँतप्रदरादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

ये वै चत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती रेषि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकवि र्शः॥५१॥ पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। साँ ऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेति। तमिश्वनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽर्थः। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवनेऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सवने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसवने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सवने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। एकांदशकपालाङ्-स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ् कस्मांदेतेषा हिविषामिन्द्रंमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरिभे-षज्य इस्तस्मादितिं॥ ५४॥

एकविर्श आंहुस्तृतीयसव्ने प्रांतः सव्नं पश्चं च॥————[११] तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयत्वम्। यदवारयन्। तद्वारवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। तस्यावांच एवावंपादादंबिभयुः। तस्मां एतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामति त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५९ स बृंहतीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कतमा सा देवाक्षंरा बृहती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादेश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षरा बृहती॥५६॥ यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठदितिं। यानिं च छन्दा ईस्यृत्यरिंच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंवीद्वृहती। मामेव भूत्वा। मामुप् सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिर्क्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिर्क्षरैः पङ्किर्बृहती-मत्यरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षरांण्यपुच्छिद्यां-

दधात्॥५७॥

ते बृंहती एव भूत्वा। बृहतीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रुक्षरैरुष्णिग्बृंहतीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्मिष्टुग्बृंहतीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृंहती एव भूत्वा। बृहतीमुप समंश्रयताम्। द्वादशभिंरक्षरैंगीयत्री बृहतीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिंरुक्षरै्र्जगती बृहतीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥ ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा र्से रथों मे भवत। युष्माभिरहमेतमध्वानमनु सश्चराणीति। तस्यं गायत्री च जगंती च पक्षावंभवताम्। उष्णिक्कं त्रिष्टुप्च प्रष्ट्यौ। अनुष्टुप्चं पुङ्किश्च धुर्यौं। बृहत्येवोद्धिरंभवत्। स पुतं र्छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानुमनु समंचरत्। एतः ह वै छुन्दोरथमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतत्सश्चरित। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजिते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभुवुन्वाव सा देवाक्षंरा बृहुत्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥———[१२]

अग्नेः कृत्तिका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रीं दिधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स समुद्रो ये वै चत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥ अग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अनुमत्यै पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवशीर्यन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन पूर्वेण प्रचरित। पाप्मानमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एकधैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥ रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्युं च यजमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवैन र् शमयति। नार्तिमार्च्छत्यध्वर्युर्न यजमानः। एकोल्मुकेन यन्ति। तद्धि निर्ऋंत्यै भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋंत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥ स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋत्या आयतंनम्। स्व पुवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें हिवष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंर्तते। मुश्चेमम १ हंस् इत्यांह। अ १ हंस एवै नं

मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एवं निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतीक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाह्य नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमतिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चैव यज्ञं चार्व रुन्धे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपंति॥६॥ वार्त्रघमेव विजित्ये। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धे। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्रमेकांदशकपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैन्द्रियं च यजंमानोऽवंरुन्धे। ऋष्मो वही दक्षिणा॥७॥

निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्रेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखम्विर्द्धं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥ इन्द्रियमेवावंरुन्धे। ऋषभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्रेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धे। यावंतीवें प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्चन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानस्यापंराभावाय॥९॥

यद्वही। तेनाँग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। आग्नेयमष्टाकंपालं

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवंरुन्थे। वैश्वदेवश्चरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथमजो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्यांमाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजां। अकृष्टपच्यमेवासमें स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखाद्दध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एति। अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्दध्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमितर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृंद्धौ षद्वं॥———[१]

वैश्वदेवेन वे प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमांनः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमांनौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। सविता प्राजनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा पृते त्रिः संवत्स्रस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। संवत्स्रो वै प्रजापितः। संवत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता मुरुतौऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स एतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निंरुप्यते। यज्ञस्य क्रुप्त्यै। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश एवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अविधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिनमानयति। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजाता द्यावांपृथिवीभ्यांमुभ्यतः परिं गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रें यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेतिं। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीतिं। मां पंश्चमितिं पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तंरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

पुंदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हिं पृशवः॥————[२]

त्रिवृद्धर्हिर्भवति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एक्धा पुनः सन्नेद्धं भवति। एकं इव् ह्यंयं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतितिष्ठति। प्रस्वां भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवंरुन्थे। प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृंह्णाति। पृशवो व पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्रगृहीतं भविति। पाङ्गा हि पृशवंः। बहुरूपं भविति॥२०॥ बहुरूपा हि पृशवः समृद्धे। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमृंखा व प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमृंखा पृव तत्प्रजा यजमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षिं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शत्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समंध्यति। यदल्पंमानयेत। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयेत्। बहुवं एनं पृशवोऽभुअन्त उपंतिष्ठेरन्। बृह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बृहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यर्जमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यर्जमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यर्जमानमेव सुंवर्गं लोकं गमयित्वा। तेर्जसा समर्थयति। यर्जमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आंहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाक्षोकाद्यजमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ये। यत्प्राङ्घवंत। देवलोकम्भिजयत्। यद्देक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा १सि यज्ञ १ हेन्युः। यदुदर्इः। मृनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतितिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् यज्ञः। यज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥ वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनंः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दा ५सि वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरीं सोमपानौ। तयोः परिधयं आधानम्। वार्जिनं भागधेयम्॥२७॥ यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिन्मा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वार्जिनम्। प्रजास्वेव रेतों दधाति। समुपह्यं भक्षयन्ति। एतत्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतों दंधते। यर्जमान उत्तमो भंक्षयति। पुशवो वै वार्जिनम्। यर्जमान एव पश्नम्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव आज्यंमवद्येदांहवनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिंष्ठितो होत्व्यों भागधेयंमेते चत्वारिं च॥————[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँकामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वरुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वरुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम्च्छमानाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुण-

भवंति॥३१॥

प्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुन्यंक्र आसीत्। स्वयः प्रसृतः। स पृतां द्वितीयाँन्दक्षिण्तो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयाँन्दक्षिण्तो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्माँचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिँ ह्लोक उभयाबांहुः। यज्ञाभिंजित्ड् ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥ तस्माँतपृथमात्रं व्यश्सौँ। उत्तंरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। प्रावो वा उत्तरवेदिः। प्रानेवावंरुन्थे। अथो यज्ञप्रुषो-ऽनंन्तरित्ये। पृतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथैष प्रैन्द्राग्नो भवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो। यदैन्द्राग्नो।

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शर्मीपुर्णान्युपं वपित। घासमेवाभ्यामिपं यच्छित। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं शतेभ्नेन हृविषा-ऽन्नाद्यमवारुन्थ। यत्परः शतानि शमीपुर्णानि भवेन्ति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयित। यत्करीरांणि भवेन्ति। सौम्ययैवाहंत्या दिवो वृष्टिमवंरुन्थे। काय एकंकपालो भवित। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मंश्चित। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मंश्चित॥३३॥

निरुप्यन्ते भवते भवति मेध्युत्वायं रूथे पर्व॥———[४]
उत्तरस्यां वेद्यांमुन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां
मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं
हरति। तस्माद्बह्मणश्च क्षुत्राच्च विशोऽन्यतोऽपकृमिणीः।
मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया।
अन्तत एव वर्रणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः करोतिं॥३४॥
तत्प्रंतिप्रस्थाता करोति। तस्माद्यच्छेयांन्करोतिं।

तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति रं रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। प्रियं ज्ञाति रं रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्येवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥ प्रघास्यानं हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीयो यज्ञंमानः स्यात्। यज्ञंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्या रं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदर्णय इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यज्ञते। यज्ञमानदेवत्यो वा आंहवनीर्यः॥३६॥

भ्रातृव्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रेष्ठं निधायं जुहोति। शीर्षत एव वर्रणमवं यजते। प्रत्यिङ्गष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वर्रणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते।
तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैंश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति।
वर्रणगृहीतेनेव वर्रणमवयजते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥
अप्सु वै वर्रणः। साक्षादेव वर्रणमवयजते। प्रतियतो
वर्रणस्य पाश् इत्यांह। वर्रणपाशादेव निर्मुच्यते।
अप्रतीक्षमा यन्ति। वर्रणस्यान्तरहित्ये। एधौंऽस्येधिषीमहीत्यांह। समिधेवाग्निन्नंमस्यन्तं उपायंन्ति। तेजोऽसि तेजो
मिये धेहीत्यांह। तेजं एवात्मन्धंत्ते॥३९॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तन्ः। तां प्रीणीत। अथासुंरान्भि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकान्य-जनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यों ऽग्निरनींकवान्। तस्यं रृश्मयो-ऽनींकानि। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवी-भ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्त्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भवति। सुर्वतं पुवैनान्त्सन्तंपति। ते देवाः श्वोंविज्यिनः सन्तंः। सर्वांसान्दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिंता प्वाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्ञन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्ञन्तिं। तेंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमे्धिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमे्धिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों

गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्नंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाक्त्रा क्रियतें। पृश्व्यं तत्। पाक्त्रा वा एतिक्रंयते। यन्नेध्माबर्हिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥ न प्रयाजा इज्यन्तें। नानूंयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भंवति। आज्यंभागौ यज्ञति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। मुरुतों गृहमेधिनों यज्ञति। भाग्धेयेंनैवैनान्त्समंध्यति। अग्निइस्वंष्टकृतंं यज्ञति प्रतिंष्ठित्यै। इडांन्तो भवति। पृशवो वा इडां। पशुष्वेवोपरिंष्टात्प्रतिंतिष्ठति॥४५॥

असंग अश्रयन्गृहमेशीयं चुरुं निरंवपत्रज्ञहबुर्न्वाहेडाँन्तो भवति हे चं॥——[६] यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहमेध्येव स्यात्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो व्यृंख्येत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्यांश्जीयात्। गृहमेध्येव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृंख्येत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्यांश्जीयात्। गृहमेध्येव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृंख्यते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिंता अभवन्। आश्वंताभ्यंश्वत। अनुं वृत्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमविंत्वा। असुंरान्युनंरगच्छत्। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिंता भवन्ति। आश्वंतेऽभ्यंश्वते॥४७॥ अनुं वृत्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेतिं। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावंतित। गृहमेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवेनं निहिंतभाग उपावंति। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन् समंध्यति। ऋष्भमाह्वयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्का। इन्द्रो वृत्र ह्त्वा। परौं परावतंमगच्छत्। अपाराधिमिति मन्यंमानः। सौऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तैंऽब्रुवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिवर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिवर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्त्समृंद्धौ। एतद्ग्राह्मणान्येव पश्चं ह्वी धेषं। एतद्ग्राह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥ उद्धारं वा एतिमन्द्र उदंहरत। वृत्र॰ हत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजेमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन् कर्माण् यजेमानोऽवंरुन्थे॥५१॥

ऋख्तेऽश्यं ज्होति वृणामहै भवत्युष्टी चं॥———————[७]
वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साक्रमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै
रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्।
यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता
वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मंश्चति। साक्रमेधेः प्रतिष्ठापयति।
त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

त्र्यम्बकं रुद्र निरवदयत॥५२॥
पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती
निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदृत्य तत्। उत्तर्त
एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। अथो
यदेव दक्षिणार्थेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमांय
पितृमते पुरोडाश् ष्ट्रंपालं निर्वपति। संवत्सरो वै सोमंः
पितृमान्॥५३॥

एकयोपंमन्थति॥५५॥

संवृत्स्रमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्धों धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्ये। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥ अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवृत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मनुष्यांणाम्। उपर्यूर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपंमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्।

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतों ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदेन्तुरा। तन्मंनुष्याणाम्॥५७॥

यत्समूंलम्। तत्पंतृणाम्। समूंलं ब्र्हिभंवति व्यावृंत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्यंति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्यंति। षद्धम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। यत्प्रंस्त्रं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षारंसि यज्ञर हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथों मृत्योरेव यजंमान्मृत्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वीइष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषार साकं प्रमीयरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकैक प्वैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं कशिप्व्यांय। उपबर्हणम्पबर्हण्यांय। आञ्चंनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्चंनमभ्यञ्जन्यांय। यथाभागमे-

### वैनाँन्प्रीणाति॥६०॥

नि्रवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थत्यखाता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

पर्श्व च॥**———**[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पित्रश्चेज्यन्ते। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्यै। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥ यदांर्षेयं वृंणीत। यद्धोतांरम्। प्रमायुंको यज्ञमानः स्यात्। प्रमायुंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यज्ञमानस्य होतुंगींपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजित। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुंरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूनाः सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरं। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंया-ऽत्यानंयित। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयित। दक्षिणतोऽवदायं। उद्झृतिं क्रामित् व्यावृत्त्ये॥६४॥ आ स्वधेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयित। स्वधानम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रंयजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवत्सरो व सोमंः पितृमान्। संवत्सरमेव तद्यंजित। पितृन्वंहिषदो यजित॥६५॥

ये वै यज्वानः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरोंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजित। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजित॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तै। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृश्मनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आहवनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्येवास्मै तद्भुवते। यत्सत्यांहवनीयें। अथान्यत्र चरंन्ति। आतमिंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप् तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥ प्राणो वै सुंसुन्हक्। प्राणमेवात्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥ अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजति। चतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंनूयाजौ। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यत्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वास्ते। न संयाजयन्ति। पिन्नियै

## गोपीथायं॥७०॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपिति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघारयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिण र्रं रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अंपृशुकांया आहुंत्ये नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्कीशो नामे। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेने पूर्णेने जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तुमेनैव होत्व्यम्। अन्तुत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥ पृष ते रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिक्येत्यांह। श्ररद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा पृष हिंनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयैवैन॰ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावेन्त पृव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषजं कंरोति। अवांम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगंस्य लीप्सन्ते। मूतेंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽवसं करोतिं। ताहगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेंंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयात्रिरवंदयते शास्ते सिश्चित् षद्वं॥------[१०]

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्य्रजापंतिः सिवृतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैर्ग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दशं॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथम्जो वृत्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥ अनुंमत्यै प्रतिंतिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ सप्तमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवत्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापयिता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिर्धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छति॥१॥ द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धौ। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणास्रानिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इतिं। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिंन्द्रतुरीयस्थेन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥ वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांग्नेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यत्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त र सृष्ट रक्षा ईस्यजिघा र सन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निर्रमिमीत। ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा रेसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य एव तद्यजंमानो रक्षा रेसि प्रणुंदते। समूंढ र रक्षः सन्दंग्ध र रक्ष इत्यांह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यो भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धै॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नालंभता त १ शृच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरो-ऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धा १ सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्कंण् नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेनेमसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्झो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतिद्दवा न नक्तम्। तस्यैतिस्मं ह्योके। अपां फेनेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेन्मन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षांश्री हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा र् स्तृत्यें। यद्वस्ते तद्दक्षिणा नि्रवंत्ये। अप्रंतीक्ष्मायंन्ति। रक्षंसाम्न्तर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृद्धौ हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥[१]

धात्रे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवृत्सरो वै धाता। संवृत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। ऐन्द्रावैष्णवमेकादशकपालम्॥१०॥

वैष्णवं त्रिकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रंः। वीर्यं विष्णुंः। प्रजा एव प्रजांता वीर्यें प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यदंषभः॥११॥ तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकादशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजंनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बभुर्दक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रंजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पश्न्प्रजंनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै

पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवृत्स्रो वा अग्निर्वैश्वान्रः। संवृत्स्रेणैवैन ई स्वदयति। हिरण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वे हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्। बहु वे रांज्न्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वे ऋियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं च्रं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावैष्ण्वमेकांदशकपालुं यदंषुभो दधांति पूषा पुशून्प्रजनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

<u> च जूर कार कार विदेश स्थात है। जूर अवस्था (१०व</u> संबंध संबंध

र्ितनांमेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एतेऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येऽपादातारेः। त एवास्में राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भंवति। यत्संमाहृत्यं निर्वपंत्। अरंत्रिनः स्यः। यथायथं निर्वपंति रित्तत्वायं॥१६॥ यत्स्चो निर्वपंत्। यावंतीमेकंन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहन्निर्वपंति। भूयंसीमेवाशिषमवं

रुन्थे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं चरुं निर्वपिति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमुन्वारम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पेन्द्रमेकांदशकपाल १ राजन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो दक्षिणा समृंद्धे। आदित्यं चरुं मिहंष्ये गृहे। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिंतिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृंद्धे। भगांय चरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृंद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं परिवृत्त्वै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां नुखिनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धे। आग्नेयमृष्टाकंपाल समृद्धे। गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिर्णयं दक्षिणा समृद्धे। वारुणं दशंकपाल स्यूतस्यं गृहे। वरुणस्वमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धे। मारुत स्याकंपालं ग्रामण्यो गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्धे। पृश्चिदक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादेशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं करोति। सवात्यौं दक्षिणा समृद्धै। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥ अनुं वै पूषा। अन्नमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धै। रौद्रं गांवींधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। शबल उद्वारो दक्षिणा समृद्धौ। द्वादंशैतानि हुवी १ षिं भवन्ति। द्वादंशु मासाः संवत्सुरः। संवृत्सुरेणैवासमें राष्ट्रमवंरुन्धे। राष्ट्रमेव भंवति॥२१॥ यन्न प्रंति निर्वपेत। रुबिनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया १ होमुचैं। आशिषं एवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भवति। श्वेतायै श्वेतवंत्सायै दुग्धे॥२२॥ बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मन्नेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्हस्पत्येन पूर्वेण प्रचंरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं ब्रहिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै।

तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंत्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥

र्बित्वाय समृं हो पष्टौही दक्षिणा समृं हो ग्रामण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भविति दुग्धेंऽभिजिंत्यै

द्वे चं॥----[३]

देवस्वामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वन्स्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ उयेष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वाँ प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायज्ञरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार राजेत्यांह। तस्मात्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तुनुवं वर्रणो अशिश्रेदि-

त्यांह। वृरुण्स्वमेवावंरुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवित्रित्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जरिमाणं न आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ छोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्यानांमधायीत्यांहाताग्रीदित्यांह कमत् एकं चा-[४] अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। पृता वा अपा राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंरसीत्यांह। मिथुनमेवाकंः।

वृषां ऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवेनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। वृज्कितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावंरुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा पृतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपित् वर्षिति। सृत्यानृते पृवावंरुन्धे। नैन र्रं सत्यानृते उदिते हिर्इस्तः। य पृवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृश्नेवावंरुन्थे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयस्व्यंकः। जन्भृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेज्ञस्व्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यत्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन र् समानानां करोति। षोडुशभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोडशभिंर्जुहोतिं षोडशभिंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्यत्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्यदक्षरा-ऽनुष्टुक्। वार्गनुष्टुप्सर्वाणि छन्दार्श्स। वाचैवैन्र् सर्वेभिश्छन्दोंभिरभिषिंश्चति॥३२॥

क्रिंगित्यांहु सूर्यंवर्चसः स्थित्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेज्स्याः स्थित्यांहुव पुरुषः पट चा—[५] देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीिभः सृज्यध्विमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः स॰सृंजित। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयित। आग्नेयो वे होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतां राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिर्पण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि पवित्राभ्यामृत्पुनित् व्यावृत्त्ये॥३३॥ श्वतमांनं भवति। श्वतायुः पुरुषः श्वतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये

प्रतितिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्रः ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तुपोजा इत्यांह। तुपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्प्नामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र॰ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र १ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्वेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यसूयायेत्यांह। राज्यसूयांय ह्यंना उत्पुनाति। स्थमादौँ द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृंह्णाति। वरुणस्वमेवावंरुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीति ताप्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशृतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनं करोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः।
मित्रावरुणौ प्राणापानाभ्यौम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्।
स दिवंमलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंत्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स
आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंत्रे

द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविंन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयमसावांमुष्यायूणौंऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशैवैन र् राष्ट्रेण समर्धयति। मुहते क्षुत्रायं महत आधिपत्याय महते जानेराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ५ राजेत्यांह। तस्मात्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥ इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। शत्रुबार्धनाः स्थेतीषून्। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात मां प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो वै शंरव्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाुष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुमां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रम्सीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्तो गमयन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारि

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामैत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। सुमिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावंरुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावंरुन्थे। विराज्नमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावंरुन्थे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावंरुन्थे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावंरुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृशुभिरारण्यान्पृशून्परिंगृह्णाति। तस्माँद्राम्यैः पृशुभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभवत्। स पुतानिं पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानिं जुहोतिं। राष्ट्रमेव भंवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षुत्रं चं सुमीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षुत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्ध्रस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्ड्परिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवत्स्रः। संवत्स्रः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कृतंश्चनोपांव्याधो भविति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्त्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवेनमवंयजते। तस्माद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वे। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

क्ष्ये समंध्य असिच्यत स्थापयित जायंते पश्चं चा———[७]
सोमंस्य त्विषिरिस् तवेव मे त्विषिर्भूयादिति शार्दूलचुर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँर्दूले।
तामेवावंरुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँर्दूलः। अमृत् क्ष्
हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति।
अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थते। शृतमानं भवति॥४६॥
शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति।

दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिध निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दशूका इति क्रीबर सीसेन विध्यति। दन्दशूकांनेवावंयज्ञते। तस्मांत्क्रीबं दंन्दशूका दश्रुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिरु इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं निरवदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहः॥४७॥ सोमो राजा वर्रणः। देवा धर्मसुवश्च ये। ते ते वाचर्

सुवन्तां ते ते प्राण सुवन्तामित्याह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वानुभिषिश्चिति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीतिं। तेजस्वयेव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥ स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिंश्वति। अग्नेस्तेजसेत्यांह। तेजं

एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्याह। वर्च एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोजुसेत्यांह॥४९॥ ओर्ज एवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिरसीत्यांह।

क्षत्राणांमेवैनं क्षत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह।

अत्यन्यान्याहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागुधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं हुरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। य हिनस्ति। तेनै वैन स् सह शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्त्वादं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यंः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मे कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भ्वत्याहुः पुरुष ओज्सेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो द्वे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुंणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युनुज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्तः। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षद्मम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनिक्तः। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ छोकान्भिजंयति। यः क्षित्रयः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

म्रुतां प्रस्वे जेष्मित्यांह। म्रुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैप्सीत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनौक्रान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हमिन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंत्ते। पृश्नूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नूनां वा एष मृन्युः। यद्वराहः। तेनैव पंश्नूनां मृन्युमात्मन्धंत्ते। अभि वा इय स्पृष्वाणं कामयते। तस्येश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानाँत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृथिव्या इत्याहाहि सायै। इयंदस्यायुंरस्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवात्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवात्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्च एवात्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण उपंहरति। एक्धेव यर्जमान आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्माँचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठेताम्। समानं लोकिमयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हुर्सः शृंचिषिदत्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा व सर्वाणि छन्दार्शसे। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म वा एषा छन्दंसाम्। यदितंच्छन्दाः। यदितंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्में वर्षेवैनर्श् समानानां करोति॥५८॥

पद्यन्ते द्धाति वीर्यणेत्याहानाँत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥————[९]

मित्रोऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपावंहरति। मित्रोऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भाग्धेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वदेविरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्ष्रत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्साय। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः प्रत्यांस्वा साम्राज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्राज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् राजन्ब्रह्माऽसिं सिवताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सिवतारंमेवैनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥

इत्यांह। स्वितारंमेवेन रे स्त्यसंवं करोति॥६०॥ ब्रह्मा(३)न्त्वर राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽिस स्त्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवेन रे स्त्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वर राजन्ब्रह्माऽिसं मित्रोंऽिस सुशेव इत्यांह। मित्रमेवेन रे सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वर राजन्ब्रह्मािस वरुणोऽिस स्त्यधर्मेत्यांह। वरुणमेवेन रे स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽसिं स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरति। इन्द्रोंऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दा रेसि। सत्यमेवावंरुन्थे। वर्रुणोऽसि सत्यधुर्मेत्याह। अनुष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावंरुन्थे॥६२॥

नैन र सत्यानृते उंदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽिस् वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छिति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणेवास्मां अवरप्र र रन्थयित। एव र हि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय र राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छिति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥ ओद्नमुद्धंवते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोद्नः। प्रमामेवैन् इं श्रियं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शोनः शेपमाख्यांपयते। व्रुणपाशादेवेनं मुश्रति। प्रः शतं भविति। शतायुः

पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंविश्शतिकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयें स्विष्ट्कृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नयें गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह सत्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति सत्यानृते एवावंरुन्धे करोति श्तेन्द्रियः षद चं॥————[१०]

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रिवनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमुस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमन्नं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंह्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजुञ्चतुंष्पष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तत्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तत्स्र सृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽहृन्ननु प्रायुंङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा पृश्भिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मंणा पश्चमे। इन्द्रेंण देवेनं षृष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञां ऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांप्रोत्। यत्स्र सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वांपूर्वा वेदिंभवति। इन्द्रियस्यं वीर्यंस्यावंरुख्ये। पुरस्तांदुप्सदा सोम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्त्रा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वेष्ण्वनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्त्तः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

स्प्तमे देधाति पश्चं च॥——[१]

जामि वा पृतत्कुर्वन्ति। यत्मुद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं

क्रीणिन्ति। पुण्डिरिस्रजां प्रयेच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अप्सु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डिरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवंरुन्थे। द्शभिवंत्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशौक्षरा विराद्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सृप्तदशः स्तोत्रं भविति। सृप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अश्वं प्रस्तोतृप्रतिहृर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणैं। आयुरेवावंरुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रिया-व्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। पवित्रं एवास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥ अनुङ्गाहंमग्नीधं। विह्नवं अनुङ्गान्। विह्नंग्नीत्। विह्नंनेव विह्नं यज्ञस्यावंरुन्थे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परां-ऽपतत्। भृगुस्तृतींयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतींयम्। सरंस्वती तृतींयम्। भाग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सारस्वतीरपो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यंस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियम्वास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराहुजापंतिरश्वः प्रजापंतिराक्षं यजते ब्रह्मसामं भवति स्व चे॥———[२] ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजति। पश्च दिशः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। दिविषोहिविष इष्ट्वा बार्हस्यत्यम्भिघारयति। यज्मानदेवत्यों व बृह्स्पतिः। यजमानमेव तेजसा समर्धयति॥८॥

आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरित। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्माँद्राष्ट्रं विशमतिवदित। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वंमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनोः पूषन्वाचः सृत्य संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तेऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वे ते वाचः सत्यमवांकन्धत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवंरुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। स्वित्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्व॰ शुंष्कदृतिदक्षिंणा समृद्धै॥११॥

अर्धयति भवत्यरुन्धत गुमयन्ति द्वे चं॥

[३]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्ची यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नतं व्यवसायादयन्ति। सावित्रं द्वादेशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुन्धते। बार्ह्स्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादंशकपालम्। तस्माँ अघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं च्रुं निर्वपति। तस्माँत्प्रावृष् सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन व्यवंस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं ह्वी १ षिं निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तृन्प्रयुंङ्क इतिं। अथो खल्वांहुः। कः संवत्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्याणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तृन्प्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तरं उत्तरेषाम्। संवत्सरस्यैवान्तौं युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्यै॥१४॥ लाष्ट्रम्हाकंपालं दधते युनक्तिकं च॥———[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दशधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स

यत्प्रंथमं निरष्ठीवत्। तत्क्वंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्ककन्धुं। यत्रुस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्योः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृकः। य ऊर्ध्वः। स सोमः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धै। त्रुयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावंरुन्थे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावंरुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्थत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि कीणाति। न वा पृतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥ यत्सीसम्। न स्नी न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरा। यत्सीत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्ये पच्यस्वन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वत्यांह। पृताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुतमिति यजुंषा पुनाति व्यावृत्त्यै। पुवित्रेण पुनाति। पुवित्रेण हि सोमं पुनन्तिं। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनिति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्येषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृंह्णाति। एक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृंषभ सौन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमांनि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥\_\_\_\_\_[५]

यित्रेषु यूपेष्वालभेत। बृहिर्धाऽस्मादिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्येते। युवश् सुराममिश्वेनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो

ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः प्शवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचरिति। पुशवो वै पुरोडाशौः। पुशूनेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। वारुणं दशकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थ सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यत्सौँत्रामणी समृंद्धे। बार्ह्स्पृत्यं पृशूश्चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणेव यज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपित। पुरोडाशंवानेष पृशुभंवित। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्तिं। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायार्थ समर्वनयित॥२४॥ शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति।

दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। यः सोमोऽति पवंते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युरहोतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मै भेषजं करोति॥२६॥

प्राणाति प्रथमो दक्षिण समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारि च॥——[६]
अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः।
यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा ऋमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्चे देवताः। ता
प्वाप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाप्नोति। स्र्श्र एष
स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषमाः स्तोमाः॥२७॥

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भंवति। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वांसामेव प्रजाना रं सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्ं॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अंग्रिय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुंष्टुभो राज्नन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमति। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्त्सुषुवाणो भंवति। एतान् खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानि। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैरेव सवान्नेति। यानिं देवराजाना समामानि। तैरमुष्मिं लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजानाः सामानि। तैरस्मिँ होक ऋंध्रोति। उभयोरेव लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकवि शों ऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकवि १ शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥ विड्वा एंकवि शः। राष्ट्र संप्तदशः। विशं एवैतन्मंध्यतों-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मंध्यतों ऽभिषिच्यतें। यद्वा एनमदो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तत्सुवर्गं लोकमभ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रंतीचीनंः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहति। अर्थो अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यन्नादाय॥३३॥

अक्षंत्राज्यों भवंति दश्पेयों माद्येशीणि च॥——[८] इयं वै रंज्ता। असौ हरिंणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्विच्यमानस्यापः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्नन्। तत्सुवर्ण् १ शतक्षंरोऽष्टौ चं॥\_\_\_\_\_

हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या-निर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुंषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वै हिरंण्यम्। तेजस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वै हिरंण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

अप्रीतिष्ठितो वा एष इत्यांहः। यो रांजसूर्येन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यजेते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवत्सरमाप्रोति। यावन्ति संवत्सरस्याहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोंरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतितिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंर्भवति। उद्दृष्ट् उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रतितिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्यातांम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्ये॥३६॥

अपृश्व्यो द्विरात्र इत्याहुः। द्वे ह्येते छन्दंसी। गायत्रं च त्रैष्टुंभं च। जगंतीमृन्तर्यन्ति। न तेन जगंती कृतत्याहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीति। यदा वा एषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवंनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्व्यः। व्यंष्ट्रिवी एष द्विरात्रः। य एवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्ये पश्चर्यः सप्त चं॥————[१०]

वर्रणस्य जामि वा ई श्वर आँग्रेयमिन्द्रंस्य यित्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रतिष्ठितो दर्श॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्विभ्यां यित्रषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिर्श्शत्॥३७॥

वरुंणस्य प्रतिंतिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टकम् २॥

### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्तिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषंधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तेँऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इति पितरौँऽब्रुवन्। किं वों भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वत्यंब्रुवन्। तेभ्यं पुतद्भांगधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृत्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांपयेतिं। सौंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वत्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्ड् ह्यंस्य। तस्माँद्वत्स र सर्श्मृष्टध्य र रुद्रो घातुंकः। अति हि सुन्धान्धर्यति॥३॥

अ्लिम्पुन्वेद् घातुंक् एकं च॥———[१]

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रुकंत्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृंष्ट। तस्मांद्रराट्टे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृह्णात्। तद्यंचिकित्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकित्सायै जन्मं। य पृवं विद्वान् विंचिकित्संति॥५॥

वसीय प्व चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोत्स्वाहेतिं। तत्स्वांहाकारस्य जन्मं। य पुवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥ भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुषममृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंममृजत। तृतीयंमजुहोत्। सागांममृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंममृजत। पृश्र्ममंजुहोत्। सोऽजामंमृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें माँऽऽप्नोतीति। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेति। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्भ्यमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौंषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहवन्। प्रातमह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं सायभ हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्येयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अह्य प्रतिं तिष्ठन्ति। यत्सायं जुहोतिं॥१०॥ प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यं प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदंग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्यंऽजुहोत्। यज्जंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो व स प्राजायत। यस्यैवं विदुष उदिते सूर्यंऽग्निहोत्रं जुह्नंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वे द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्य १ राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तं दहशे। उभे हि तेर्जसी सम्पद्यंते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन्ं स्मारोहित। तस्माँखूम एवाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्च्येत। यत्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयें वृश्च्येत। देवतांभ्यः स्मदं दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्याः सायश् हूंयते॥१३॥ उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हरंन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यत्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकित्संति जुह्वंत्यजामंसृजताग्निहोत्र सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पर्धेते हूयते

स्थापयित सम्प्रति हे चं॥———[२] रुद्रो वा पुषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयेत्।

रुद्रा वा एषः। यदाग्नः। पत्ना स्थाला। यन्मध्युऽग्नराधेश्रयत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचो-ऽङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥ घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्व्यम्। न प्रतिषिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। सिमंद्धिमेव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चिति॥१७॥ तत्पंश्व्यम्। यञ्जुहोति। तद्बंह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः हिवरनंभिघारितम्। अभि द्यांतयित। अभ्येवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्घारयित।

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेंत्। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्दंक्षिणा। पितृदेवृत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी श्रे शुचाऽपंयेत्। उदीचीन्मुद्वांसयित। एषा वै देवमनुष्याणा श्रे शान्ता दिक्। तामेवैन्दनूद्वांसयित शान्त्यै। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तत्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृशूनेवावंरुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयति। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः।

अनूच उन्नंयति। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुंका भवति। सम्मृंशति व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्युन्नुपं सादयेत्। यदहोंष्यन्नुपसादयेत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽिष् श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्युन्तीतिं। स पृता॰ समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽिष्रयन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तत्सिमिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवेनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्ये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथं कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेंष्टि। ताहरोव तत्। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिंष्ठापयति॥२४॥

भृवति प्रतिषिश्वति गमयति प्रत्यक्ष्यवं उपनिधायाँ प्रियन्तिति तक्ष्वति विवासी वा — [3] उत्तरावितीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्तस्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। तत्नस्तेऽभवन्॥२५॥ यस्यैवं जुह्वति। भवत्येव। यं कामयेत् पापीयान्तस्यादिति। भूयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्नस्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वति। परेव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परि वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामति। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ क्वं द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्भम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कुं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्रयात्। यद्यज्ञंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापृत्यम्॥३०॥

यन्निमार्षि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्याणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुस्यैं। निष्टंपति स्वगाकृत्यै।

उद्दिशति। सप्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमनुं पर्यावर्तते। तस्मादक्षिणोऽर्ध आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृतमनुं पर्यावर्तते। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥ ब्रह्मवर्चसस्य समिद्धौ। न ब्रहिरनु प्र हरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभ्वन्भवति जुहुयात्रंयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥———[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृत्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्धम्। द्योर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो बर्हिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजंमानः पशुः। समुद्रोऽवभृथः। संवृत्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बंहि्ष्यं दत्तं भंवति। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिंमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहुंत्मादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र श् सर्वस्यैव समवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यन्नितिं। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्भुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञाति। हुतमेव तत्। द्वयोः पयंसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्स्व्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्में पृशूनवंरुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। दुभ्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मंनुष्याः। भागधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नयित। चतुरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तत्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदो वेदं। उपैनमुपुसदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। पुता वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदेः॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्कारः॥४२॥

य एवं वेदे। तस्य त्वेव हुतम्। सायं यावानश्च वै देवाः प्रांतयावाणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमार्गच्छन्ति। तान् यन्न तुर्पर्यंत्।

प्रजयाँ उस्य पृश्भिर्वि तिष्ठेरन्। यत्तुर्पर्यंत्। तृप्ता एंनं प्रजयां पृश्भिंस्तर्पयेयुः। सृजूर्देवैः सायं यावंभिरितिं सायः सम्मृंशति। सृजूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभया ईस्तर्पयित। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह सायं प्रांत्वं अातृंव्येभ्यः प्र हंरािम। तस्मान्मत्पापीया सो आतृंव्या इति। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। स्मित्संप्तमी। सप्तपंदा शक्तरी। शाक्तरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तत्सायं प्रांत्वं यं यं माने आतृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य आतृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदीं वषद्भारश्चे

प्रात्यावाणो वज्रुस्त्रीणि च॥————[५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वन्में जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मृन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहोषीदात्मृन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मृन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमृग्निः। तुनुवैं वायुः॥४५॥ चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यों ऽग्निमंब्रवीत्। यतरो नो जयाँत्। तन्नौं सहासदितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥ तनुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अंग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्नि समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्वार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्युद्रवंति। वायुमेव तेन प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिमभि पर्यावर्तत। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्य-

मात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा पराँङ्घर्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जयिति। य पृवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवित। असौ ह्यांदित्योंऽग्निहोत्रम्॥४९॥

त्नुवै वायुर्गिर्भवृत्यवित्वा भवृत्येकं चा[६]
रौद्रं गिवी। वायुव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्।
सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः।
पौष्णमुदंन्तम्। सार्स्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र शर्रः।
धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रान्तम्।
द्यावापृथिव्यई ह्रियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽह्तिः। प्रजापंतेरुत्तरा। ऐन्द्र ह्तम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वो दुह्याङ्ग्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥ न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंत्रीयमानम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजंमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशिभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशिभिंमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

वृभूषेद्ध्यमाणआयते हे चं॥———[८]
त्रयो वै प्रैंयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्।
द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यिश्वरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्।
यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥
यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावौंर्भुताम्।
तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्यौ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे
एवधी अवंरुन्थे। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहेतिं सायं

जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयति। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जायते॥५५॥

यस्यौग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय प्राङ्कदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्यैत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजंमानः॥५६॥

वृष्णे जायते यर्जमानः॥——[९]
यद्ग्रिमुद्धरेति। वसंवस्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे
जुह्वति। वसुष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति। निहितो
धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति।

रुद्रेष्वेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। प्रथमिप्ममर्चिरा लंभते। आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। सर्व एव संविश इध्म आदींप्तो भवित। विश्वे देवास्तर्द्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वेष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भविति। नित्राम्चिरुपावैति लोहिनीकेव

भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हतं भवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदंति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भंवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भंवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भंवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्धिग्निरिन्द्रं एवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवित देवेषुं च्त्वारि च (यद्भिन्निहितः प्रथमः सर्व एव नित्रामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्युष्टो॥)॥————[१०] ऋतं त्वां सृत्येन परिषिश्चामीति सायं परिषिश्चिति। सृत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीति प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येन सायं परिषिश्चिति। अग्निमां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्य। नार्तिन रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

## जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥———[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निः रुद्र उत्त्रावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां स्त्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृश्नेव यन्निमार्ष्ट् यो वा अग्निहोत्रस्योपसदी दक्षिणतः षृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेतिं। स एतं दशंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। यः कामयेत प्रजायेयेति। स दर्शहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दशंहोता॥१॥ प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराध्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराध्यै। न्यूनया जुहोति। न्यूनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना् सृष्टौ॥२॥ दर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनें प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यस्मदिव योनेंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मदिव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजांयते। ग्रहों भवति। प्रजाना ५ सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वा ५ सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्यं। ब्राह्मणं देक्षिणतो निषाद्यं। चतुंर्होतृन्व्याचंक्षीत। एतद्वे देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयित। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचंष्टे॥४॥ अग्निवान् वे दंभस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचंष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वे प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवेनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वरस्तस्मे देयः। यदेवेनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्भुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृष्ट्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। सप्राणमेवैनंम्भि चंरति। पुताबुद्वै पुरुषस्य स्वम्। यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृंत् इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋंतिगृहीतम्। निर्ऋंतिगृहीत एवैनं निर्ऋंत्या ग्राहयति। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण् प्र वृंश्चति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्याचंप्टे रुन्ध एव तंनुते निर्ऋतिगृहीतुं पश्चं च॥———[१] प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्मात्सृष्टावपां-क्रामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। द्रश्पूर्णमासावालभेमानः। चतुर्होतारं मनसाऽनुद्रुत्यां-हवनीयें जुहुयात्। दुर्शुपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥ ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोुर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्मात्सृष्टान्यपांकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥ पश्चेहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानारं सृष्टानां धृत्यैं। सोऽकामयत पशुबन्धर सृज्येति। स एतर षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो व स पंशुबन्धमंसृजत। सोस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्थेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कांतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्। पृशुब्न्थमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्थस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमंध्वर सृज्वेयेतिं। स एत स्महोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमांणः। सप्तहोंतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावुच्छः समंभरन्॥१२॥ यत्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यत्संम्भारा भवन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रत्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसत्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपांऽतप्यतः। स त्रिवृत् क्ष् स्तोमंमसृजतः। तं पंश्चद्रशः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूंर्वपक्षश्चांपरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्तः। अपरपक्षमन्वसृंगः। ततों देवा अभवन्। पराऽसृंगः। यं कामयेत् वसीयान्तस्यादितिं॥१४॥

तुनुत् आ्लभंमानोऽगृह्णादसृजताभरञ्जायेर्-थ्यद्वं॥\_\_\_\_\_\_

तं पूँर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भंवति। यं कामयेत् पापीयान्तस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मात्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिवै दर्शहोता। चतुंरहोता पश्चंहोता। षड्ढोता सप्तहोता। ऋतवेः संवत्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौं ऽब्रवीत्। यथा ऽहं युष्मा इस्तप्सा ऽसृक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्त्संवत्सरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ श्लोकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जंनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तश्चतुंरहोत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंरहोतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जायते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम वयं पूर्व इति॥१८॥ त आदित्या एतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा

प्रांतरनुवाकादाग्नीभ्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृर्ग

लोकमायन्। यः सुंवर्गकांमः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्रींभ्रे जुहुयात्। संवृत्सरो वै पश्चंहोता। संवृत्सरः सुंवर्गो लोकः। संवृत्सर पृवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्नङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सन्धो ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियात्रिष्टुभि जगंत्यामिति। तस्माच्छन्देः सु सन्ध्य आदित्येभ्यः। आङ्गीरसीः प्रजा ह्व्यं वहन्ति। वहन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदे। द्वादेश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादितिं संवत्सरो जंनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यादित्यानृतवः षद्वं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविते। स पृतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। पृतावान् यज्ञकृतुः। स चतुंरहोतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥ असृक्षि वा इममितिं। तस्य सोमों हविरासीत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंरशपूर्णमासौ यजूरेषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सोंऽन्तिरक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुव्रिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकाननुं प्रजाः प्शव्श्छन्दारंसि प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चेहोतारमसृजतः। स हिवर्गविन्दतः। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एततें हिविरितिं। स पश्चेहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधतः। सोऽसुंरानसृजतः। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमासीत्। तत्सुवर्ण् हिरंण्यमभवत्। तत्सुवर्ण् हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰

सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मौत्सुवर्ण् ५ हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रिंयम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोतीव सुंवर्गं लोकमैंत्। त्रिणवेन स्तोमेंनैभ्यो लोकेभ्योऽसुरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रि एक वि १ शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एक वि १ शेन रुचं मधत्त॥ २६॥ सप्तदशेन प्राजायत। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजीते। सप्तहों त्रैव स्वर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रि १ प्रतिंतिष्ठति। एकवि १ शेन रुचं धत्ते। सप्तदशेन प्र जांयते। तस्मांत्सप्तदशः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तदशः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंत्ते प्रजाँत्ये॥२७॥

अन्दुद्ध् इति व्याहंर्द्धेदांसी्द्धेदांधत् प्रजांत्ये॥———[४]
देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै
दक्षिणामनयत्। तामं क्लीनात्। ते उब्रुवन्। व्यावृत्य प्रति
गृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्लेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य
प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाक्लीनात्। य एवं

विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णाति। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रति गृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रतिंगृह्णाति। वर्रणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषिमत्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मान्वो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायां क्षीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंक्षीर्सः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वे देवत्या रथंः। स्वयैवैनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवात्मन्धंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पृवैनं कृत्वा। सुवृगं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥ यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पृवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिवै कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामो दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कार्मः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशे-त्यांह। सुमुद्र इंवु हि कामंः। नेवु हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामीत्यांह। येन कामेंन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनंममुष्मिं लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा तें काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं होके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतरिं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥ ब्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीरसः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांह दक्षिणेत्यांह चुत्वारिं च॥—[५] अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दशमेऽहंन्त्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो-उन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्ञिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्ञिव। ३४॥ अन्नमेवावं रुन्धते। मनंसा प्रस्तौति। मनसोद्गांयति। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञीं। यत्संपर्ाज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्तिं। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंश श्मित शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वे देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंहींतारः। दशमेऽह् श्र्श्चतुंरहोतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वार्चं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यां। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यदिवा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वार्चं विसृंजिति। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षति। यावंदादित्यों ऽस्तमेतिं॥३७॥

पृष्ठिनं तिष्ठन्ति गमयति शिश्षेत्पश्चं च॥————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता

रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमिष् नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रंं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं ह्लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पतेऽस्मे। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हुव्यं वहिति। य एवं वेदे। उपैनं युज्ञो नमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इतिं। स वार्चस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदंयम्। तस्मोदस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

ह्वयेंते अभवत्कल्प्येतीर्ति चृत्वारि च॥———[७]

देवा वै चतुंरहोतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुंहीतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वे लोकाय षड्ढोंता। प्रन्ति खलु वा एतत्सोमम्। यदंभिषुण्वन्तिं॥४२॥

ऋजुधेवैनंममं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पृवात्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुव्ग्यों वै पश्चंहोता। यजमानः पृशुः। यजमानमेव सुंव्गं लोकं गंमयति। ग्रहान्गृहीत्वा स्प्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै स्प्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवात्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नंमति। बृहिष्पुवृमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुंरहोतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवृनमेवेना इंस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन समपीथो नंमति। देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तैंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रुस्तत्स्हास्दितिं। सोमश्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रंः स्प्तहाँत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैष्त्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तित्रिविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥ आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो व नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनेरिम स्पंबामहा इति। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानयन्। तत्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थेरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्त्सोमंमागच्छंति। यशं एवेनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्मात्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवेनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोंता तर्पयित् षङ्कौंत्रा निवित्त्वमभूँत्तिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥———[८]

ड्दं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामिति। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूयोऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धिरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिंरजायत। तद्भूयोंऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दुर्चिरंजायत। तद्भूयोंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरींचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूगं ऽतप्यत। तद्भूमिव समंहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥ स संमुद्रो ऽभवत्। तस्मौत्समुद्रस्य न पिबन्ति। प्रजनंनिमव हि मन्यंन्ते। तस्मौत्यशोर्जायंमानादापंः पुरस्तौद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वा इस्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लमांसीत्। सोऽरोदीत्युजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्प्स्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षिमभवत्। यदूर्ष्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोद्स्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदं। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं।
य एवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छंति।
स इमां प्रतिष्ठामंविन्दता स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत्
प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यता सौंऽन्तर्वानभवत्। स
ज्घनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजत। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनास्येना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। सा जोत्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पृते वै प्रजापंतेर्दोहाँ:। य पृवं वेदं। दुह पृव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं वेदं। देववानेव भवति। पृतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य पृवमहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥ असतोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंस्जत। तद्वा इदं मनंस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युच्छति। प्रजायते प्रजयां प्रशिभेः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भ्यं ऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंस्ज्ञतासृंजत घृतमंद्रह् द्याऽस्य सा तृन्रत्तसीदहंरभवदच्छित् वेदं (इदं धूमोंऽग्निज्योतिर्चिमरीचय उदारास्तद्भ्यः स ज्ञघनात्सा तिमंस्रा स प्रजनंनात्सा जोत्स्रा स उपपक्षाभ्याः सोऽहोरात्रयोः सन्धः स मुखात्तदहंदेववानमृन्मये दारुमये रज्ते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो हे तेऽत्र्यं पयो घृतः सोमम्॥)॥————[९] प्रजापितिरिन्द्रं मसृजतानुजाव्रं देवानाम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीति। तं देवा अंबुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वे त्वच्छ्रेयाः सम् इति। सोऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वे त्वच्छ्रेयाः सम् इति। सोऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वे त्वच्छ्रेयाः सम् इति मा देवा अंवोच्त्रिति। अथ् वा इदं तर्हि प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष्यामीतिं। कोऽह स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेतिं। एतत्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्ववीषीतिं। को ह

वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोंऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आहरेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रमस्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥ चुन्द्रवानेव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत इतिं। तत्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्रोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भवति॥६३॥ अयं वा इदं पंरुमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। परमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा दंक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तरतः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥ साध्याः पराँश्चम्। य एवं वेदं। उपैंन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः।

दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः।
मुखं दक्षिणृतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः
पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणृतः।
मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्रंवर्तयत। ताः स्वंतोंमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रम्स्त्वं य एवं वेदेंन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खन्दक्षिणतो मुर्खं पृक्षान्नवं

च॥————[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स दशंहोतार् प्रयुंश्चीता बहोरेव भूयाँ-भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेतिं। स दर्शहोतुश्चतुंर्होतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्ग॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्त्स्यामिति। स चतुरहोतुः पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्त्स्यामिति। स पश्चंहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

प्रशुमानेव भेवति। सोंऽकामयत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चहोतुः षड्ढोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्र्यृतवों-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंजीत। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवः। सोंऽकामयत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायंद्भः। तस्य प्रयंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयंत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयंजीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्वधा प्रतितिष्ठति॥७१॥
पद्भिर्मुखेंन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवृगं लोकमांयन्।
तेऽमृष्मिं लोक व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमृतः प्रदानं वा
उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यृज्ञं विधायायास्यम्।
आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं। तस्य वा इयं
कृप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्यंषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों ह्व्यं वहित। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्योंऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवित॥७३॥ अमिमीत् तं प्रायंङ्क पश्चहोतारं प्र यंक्षीत जायेतितं तिष्ठति क्षिप्तिर्दंशहोतुर्निदानरं सप्त

चं॥\_\_\_\_\_[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सुंजेयेति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सुंजेयेति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दशंहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समिश्लिष्यं देवा वै चतुंरहोतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥
प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मांत्तेपानाञ्च्योतिर्यदस्मिन्नांदितः
स पङ्कोतुः सप्तहोतारित्रसंप्ततिः॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रः सप्तहोता॥१॥ प्रजापंतिर्दशंहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदं। ऋध्नोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदं। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं कृष्तिं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतंनं वेदं। आयतंनवान्भवति। य एषामेवं प्रंतिष्ठां वेदं॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता। पर्श्वहोता षट्टांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतांनामुप्-देशंनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतांनामुप्देशंनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं।

अयमवांसादितिं॥ ३॥

स्महोता प्रतिग्रहो वर्ष बुध्यन्ते षद्वं॥———[१] दक्षिणां प्रतिग्रहोष्यन्त्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव

सिनिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौँ प्रजापंतिरेवैनौँ भूत्वा प्रति गृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तें निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दर्शहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयः। आग्नींप्र एव जुंह्याद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्राहम्। प्राणानेवास्मे कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अस्मा ऋतव् आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तत्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥ साम्रोऽधि यज्र्ंष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तत्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधिं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशे आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयेवेनृत्प्रति गृह्णाति। नैनर्थ हिनस्ति। ब्रहिषा प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवेनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥————[२]

यो वा अविद्वान्निवृत्तयंते। विशीर्षा सपाँप्गाऽमुिष्मं हो के भेवति। अथ यो विद्वान्निवृत्तयंते। सशीर्षा विपाँप्गा-ऽमुिष्मं हो के भेवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं अपुष्यन्नक्षंत्रैरपुष्यृत्पर्श्वं च॥

चन्द्रमाः। अग्निर्न्यवर्तयतः। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पितंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यं-वर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तिरक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स र्श्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोंऽहोरात्रैरंधमासेमासेर्ऋतुभिः संवत्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांन्युष्यति। याः स्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परि च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सोंऽर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं

प्रतिगृह्णाति। अथ योऽविद्वान्प्रति गृह्णाति। अर्धमेस्येन्द्रियस्यापं कामति। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। तृतींयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रति गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्याप क्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिनिन्द्रियस्यापौः तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्त्रपाधंत्त॥ चुतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रीतिगृह्णातिं। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापं ऋामति। तस्य वै वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिनद्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स पंश्वमिनिद्वयस्यात्मन्नुपाधंत्त। पश्चमिन्द्रियस्यात्मनुपार्धत्ते। य पुवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३ अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रह्षः। षष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षष्ठिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्त। षष्ठिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य पुवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षुष्ठमंस्येन्द्रियस्यापं ऋामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्यात्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्यात्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाः स्तर्ल्पं प्रति गृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामति। तस्य वा उत्तानस्याङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टममिन्द्रियस्यापाकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिनिद्र्यस्यात्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रमिनिद्र्यस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णातिं। अष्ट्रममंस्येन्द्र्यस्यापं क्रामित। यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वमृत्तान एवाङ्गीर्मः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीत्न्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वौङ्गीर्मः प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वौङ्गीर्मः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्मः। अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। नैन ई हिनस्ति॥१६॥

तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मज्ञुपाधत्तार्श्वं प्रतिगृह्णातिं षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्टमिनद्रियः च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्य् सोमंस्य वास्तत्वेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन वर्रणस्यार्श्वं प्रजापंतेः पुरुषुं मनोस्तल्पन्तमेतेनाँतानस्य तदेतेनाप्राणद्यद्वे। अर्थं तृतीयमष्ट्रमं तच्चंतुर्थं तां पश्चम षष्ठ संप्तमन्तम्। तदेतेन् द्वे तामेतेनैकं तमेतेन् त्रीणि तदेतेनैकम्॥॥———[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजुन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषधीरसृजन्तेतिं। सोमेंन वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥ तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥ केनर्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनर्तूनंकल्पयन्त। यत्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन सुवंरायन्। केनेमाँ ल्लोकान्त्समंतन्वन्नि अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन सुवंरायन्। तेनेमाँ लोकान्त्समंतन्वन्नितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षते। अवान्तरमेव सत्त्रिणांमृध्नोति। यो वा अर्यमणुं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्यमा। आर्यावसतिरिति वै तमांहुर्यं प्रशर्सन्ति। आर्यावसृतिर्भवति। य पुवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं युज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्यंव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतृन् वेदं। यो वै चतुंरहोतृणा ५ होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥ सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा होतां। सोमुश्चतुंर्होतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणां होतां। धाता षड्ढोतृणा १ होताँ। अर्यमा सप्तहोतृणा १ होताँ। एते वै चतुंर्होतृणा होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सृत्रङ्केनं॥)॥ $lue{lue}$ 

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्र॰सत। स हृदंयं भूतोंऽशयत्। आत्मन् हा ३ इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्रण्वन्। ता अग्निहोत्रेणेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावर्तन्त। ताः कुसिन्धुमुपौहन्। तस्मादिग्निहोत्रस्यं यज्ञऋतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंशृण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं

पर्यावर्तन्त। त उपौह इश्चत्वार्यङ्गानि। तस्मा दर्शपूर्णमासयौर्यज्ञ चत्वारं ऋत्विजंः। पश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पशवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मा रसमस्थि मञ्जानम्। तस्मा चातुर्मास्याना यज्ञ कतोः॥ २४॥ पश्चर्त्विजः। षुद्गत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपर्यावंतन्त। त उपौहन्त्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञक्रतोः। षङ्खिजंः। सुप्तुकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपर्यावंर्तन्त॥२५॥ ता उपौहन्त्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांत्सोम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञऋतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भुवन्ति। दशकुत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणैव संवत्सरेण सर्वैर्यज्ञऋतुभिरुपं पर्यावंतित। तत्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मौत्संवत्सरे सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पर्श्वहोता षड्ढोता सप्तहोता। एकहोत्रे बलि॰ हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बलिम्। ऐनमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

च-द्रमाँश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंध्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पूर्यावर्तन्त सप्तहोता चत्वारिं च॥——[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नंमस्त्विति। सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स एता इश्चतुं रहोतॄनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञकतुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धश्चात्मनंः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सांयुज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चात्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमौप्नोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तानिं चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति॥२९॥ स्मित्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्।
स्प्त चात्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्त्स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च्
सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं।
द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवत्स्रम्।
सर्वं चात्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं
गच्छति॥३०॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य प्वमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्त्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानांं भवति॥३२॥ यन्त्यंस्य पितरो हवम्ँ। स पितॄन्त्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मनुस्त्रेव भंवति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्मै मनुष्यांन्त्ससृजानायं। दिवां देवृत्रा-ऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानांन्देवृत्वम्। य एवं देवानां देवृत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवृत्रा भंवति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भाः सि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवत्स्वानां भवति देवानंसुजत सप्त चं॥\_\_\_\_\_[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा-ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्त्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भवति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥ अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते॥ अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सं पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सं पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सं पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सं पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वां प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्देक्षिणतो वातिं। मात्रिश्वेव भूत्वा देक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश् आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वैव। अथु यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥ अथु यदुंत्तर्तो वाति। सुवितेव भूत्त्वोत्तर्तो वांति। सुवितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एंनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एंनन्दक्षिणत आयन्तंमुपवदंन्ति॥४०॥

य एवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं पश्चादायन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनमुत्तरत आयन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्योंत्तरतः पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥ उत्तरत इतरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्यंवाक्ष्यौ भाषेत। मण्टयंदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मानमपं हन्युरितिं। स यान्दिशर्ं सुनिमेष्यन्तस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सं पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वात्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप वर्दन्त्युत्तर्तः

पाप्पानस्तार स्तेपं घ्रन्तीत्यष्टौ चं॥ [९]

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तत्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजानश्चकमे। श्रद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापंतिमुपंससार। तर् होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्र त्वां पद्ये। सोमं वै राजांनङ्कामये। श्रद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारन्दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पित्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगन्तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्ते पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदेदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥ यं वा कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एत इस्थांग्रमंलङ्कारं कंल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तां द्याख्यायं।

चर्तुरहोतारन्दक्षिणृतः। पश्चेहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पिन्निश्च मुर्खेऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामिति भवति॥———[१०] ब्रह्मौत्मुन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्र्रयत। तस्मै दश्मभ हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दंहूत् सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तम हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत स्प्तहूंत स् सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं षष्ठ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं पञ्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्।

स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहूत्र् सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मिन्नित्यामंत्रयत। तस्में चतुर्थ १ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुर्रहूतोऽभवत्। चतुर्रहूतो ह् वै नामैषः। तं वा पृतश्चतुर्रहूत सन्तम्। चतुर्ह्तित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठ १ हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैनानाख्यातार् इतिं। तस्मान्नु हैना १ श्वतुरहोतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा १ हद्यंतमः। नेदिष्ठो हद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य पृवं वेदं॥५०॥

देवाः षड्ढूंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंणाश्रौषीः षद्वं॥————[११]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दशंहोतारः प्रजापंतिर्व्यसं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वांन्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् राजानं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥

ब्रह्मवादिन्स्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चे प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्चाशत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्त्रूयतामा भंरा भोजनानि। अग्ने शर्ध महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सऔस्पत्य र सुयममा कृंणुष्व। शत्रूयतामभि तिष्ठा महार् सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा ५सति॥१॥ ताङ्स्त्वं वृत्रहं जिह। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नों-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यंः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्वमिन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अपु प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥ अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराधरा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्मो भुंवत्। युजे रथंङ्गवेषंणु १ हरिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥ हव्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रुक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्।

ज्योतिष्मन्त्नदीद्यंतं पुरेन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृत्मा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतेना अभि ष्य। उरुन्नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरेन्न आयुंः। त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तुनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रंक्षुत्वर्वतः। पूषा वाजरं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षारंसि सेधति। शुक्रशोचिरमंत्र्यः। शुचिंः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हंसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपष्ठैरुजरों दह। अग्ने हश्से न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानांन्दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूनों हृदे॥८॥

प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदन्नमंः। कामो भूतस्य भव्यंस्य। सुम्राडेको विराजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुत्सृंजते वृशी। कामस्तदग्रे समंवर्तृतािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्। सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मन्युर्भगों मन्युरेवासं देवः। मन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिंः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभ्रंद्वतपा अदाँभ्यः। यजां नो देवा अजरंः सुवीरंः। दध्द्रव्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अधुन्वानींडते सर्वा अरहंसो वातो हुदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्नु एकं

च॥\_\_\_\_\_\_[१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मां-ऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविभिं:॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तत्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत रहिवः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँ श्रौ त उभौ बाहू। अपनिद्याम्यास्यम्॥१३॥ अपं नह्यामि ते बाह्। अपं नह्याम्यास्यम्॥ अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्वारात्। युज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टमस्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रांतयः। अन्तिं दूरे सतो अंग्रे। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥ वषद्कारेण वज्रेण। कृत्या हंन्मि कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वज्जेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडे अग्निं विपश्चितम्॥१५॥ गिरा युज्ञस्य साधंनम्। श्रृष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने शकेमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्श्स तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोंकसौ। सचेंतसौ सरेंतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतमद्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रंयावम्॥१६॥

तिग्मश्रंको वृष्भः शोश्चानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंमग्निर्दिव्यन्तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देवयानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्रृंत। अवांधमानि जीवसे॥१७॥ वय सोम व्रते तवं। मनंस्त्नूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमितः। इन्द्राणी देवी सुभर्गा सुपत्नीं। उद शेन पित्विद्ये जिगाय। त्रि श्वरंस्या ज्यनं योजनानि। उपस्थ इन्द्र स्थिवंरं बिभित्। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। भ्रुवस्तिष्ठाविंचाचिलः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। भ्रुवा द्यौर्भुवा पृथिवी। भ्रुवं विश्वंमिदं जगत्। भ्रुवा हु पर्वता इमे। भ्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचितः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रम्ं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवन्ध्रुवेणं ह्विषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मंण्स्पतिः॥२०॥

हुविर्भिरास्यंमभि दासंतो विपश्चित्मप्रयावञ्चीवसे ददांना व्यथिष्ठा ब्रवन्नेकं च॥———[२]

जुष्टीं नरो ब्रह्मंणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलांरिषाथ। यच्छक्तरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेभिर्वाजिनींवती। युज्ञं वेष्टु धिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्रौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदंने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे ज्रुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनंन्त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः क्विरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रैं प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ ह्विरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंतुः हि शंक्रा। विश्वेंद्विर्यिज्ञियैः संविदानो। दीक्षाम्स्मे यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वर्ष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवनानि विश्वा। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्र यः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्तन्नर्यमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य की्रयो जनांसः। उरुक्षिति स् सुजनिंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इह्रांस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरश्चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य महा। श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्च याहि। वरीवृज्तस्थविंरिभिः सृशिप्र। अस्मे दधृदृषंण् रुशुष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥ प्रारोचयन्मनेवे केतुमहांम्। अविन्दञ्योतिंर्बृहते रणांय।

अश्विनाववंसे निह्नंये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युंक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टन्थीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अहंयं नो अस्तु। आवाँन्तोके तनये तूर्तुंजानाः। सुरह्नांसो देववींतिङ्गमेम॥२७॥

त्वर सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वदन्दक्षैः सुदक्षो विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्रंभवो नृचक्षाः। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजार सुंक्षितिर सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्यम्न एव या उं स्प्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो यज्ञस्य राध्यों हिवष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमज्ञांनये विष्णंवे ददांशित। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात। सेदु श्रवींभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भं हिवषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

इमा धाना घृंतसुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रतें वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्लारु सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरं। आचेर्षणिप्रा वृष्भो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँ ह्यर्वाङ्। प्र यत्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्यंव जग्मुः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी सोमंः पृणति दुग्धो अ्ष्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुत्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदांनाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहांयाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णः। अहेडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्त्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या तें काुकुत्सुकृंता या

वरिष्ठा। यया शश्वत्पिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतये। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्र सन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रातर्यजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यजमानो वनीयान्॥३३॥

चार्श्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशुन्नामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यंर्वाङच्छं पिबाथः

मह्ना १ वर्ष में सर्वाताविकासम्बद्धाः स्थापि स्थापः स्थापः स्थापः

नक्तं जाताऽस्योंषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजनि रजय। किलासं पिलृतं च यत्। किलासंश्च पिलृतं चं। निरितो नांशया पृषत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। परां श्वेतानिं पातय। असितन्ते निलयनम्। आस्थानमसितन्तवं॥३४॥

असिक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥ शुन हेवेम मुघवांनमिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये समत्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्ञिमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंती्रयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवांरत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सहङ्कासी। विश्वो विश्वा अनुं प्रभा समत्सुं त्वा हवामहे। समत्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्वः संवंदध्वम्। सब्वौं मनाः सि जानताम्॥३७॥ देवा भागं यथा पूर्वै। सञ्जानाना उपासंत। समानो मङ्गः सिमितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानङ्कितो अभि सः रभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूतिः। समाना हृदयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानंत्रः स्वैः। संज्ञान्मरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानं सविता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगंन्म शर्म ते वयम्॥३९॥ अग्रे हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय नव्यंसे। रक्षा मार्किनी अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गवांमृजुकतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वस्ं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिन्वाजानां पते। शचीवस्तवं द्रसनौ। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। स्हस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मौन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनांदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्रत्। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यम्। विश्वे मुश्रन्तु मैनंसः। उद्ययन्तमंस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४] वृषासो अर्शुः पंवते हविष्मान्त्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋंतयुः शतायुंः। स मा वृषांणं वृषभं कृणोतु। प्रियं विशा सर्ववीर स्वीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वांन्वृषभो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्तें शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥ त सधीचीं रूतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चरिन्द्रम्। समुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचेसङ्गिर आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्त्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चुक्रिया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तर्विषीभिरिन्द्रं:॥४५॥

दृढान्यौं प्रादृशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। रियं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकन्धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगमँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षंन्दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्रं सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य नित्रयंः। ताभियाति स्वयंक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितन्देव वस्वः। दविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वंन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंङ्गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यन्नम्साऽऽविंवास। कनिंत्रदद्वृष्भो जीरदांनुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कुणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः

पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्यें ह्विः। जूहोता मधुंमत्तमम्। इडाँन्नः स्यतंङ्करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररदस्त्वामित्। शुचिं घृतेन् शुचंयः सप्यन्। नामानि चिद्दिधरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तनुवः सुजाताः॥४९॥

इन्द्रेश्च नः शुनासीरौ। इमं यज्ञं मिमिक्षतम्। गर्भन्धत्त इ स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरानुन्दो निहिंतो महंश्व। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ हविरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिंन्धते। स्तृणन्तिं ब्रहिरानुषक्। येषामिन्द्रो युवा सर्खां। अग्न इन्द्रेश्च मेदिनां। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव १ हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या १ सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यैं। प्रचंर्षणी वृंषणा वर्ज्जबाह्। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥ मन् इन्द्रो गविंष्टिषु तन्तुङ्गर्भूष् सुजांताः सखां सप्त चं॥——————————[५] उत नंः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां-ऽभूत्। इमा जुह्वांनायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोम र सरस्वति

जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णन्न

वृक्षम्। त्रिणिं पदा विचंक्रमे। विष्णुंगींपा अदाँभ्यः। ततो

धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथो अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उत्संः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठंः। अद्य त्वां वन्वन्त्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सीद। वीहि सूर प्रोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्निय स्व। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रन्तन्म आ सुव। शुचिमकैंबृह्स्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सक्तिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिअधनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभान्न आ भेर। प्रयप्स्यित्रिव सक्थ्यौ। वि ने इन्द्र मृधों जिह। किनीखुनिदव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिन्नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधात्सपम्। कामस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्याग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहितः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चत्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहमस्या अतृपः स्त्रिय पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुराह् तत्। हन्तेति स्त्यश्चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति। आप्स्तत्स्त्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मविदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वान्रात्पुंरपुतारंमग्नेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रङ्क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीम्न्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवा ॥ याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न स स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभंयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवो वदन्ति। सा नो मृन्द्रेष्मूर्जन्दुहाना। धेनुर्वाग्स्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांन्निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जन्दुदुहे पयार्श्सा। क्वं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्य समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्रश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयन्विश्वकंमा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्त्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयत्र जर्हंषाणः। अयं वां जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। स्हिस्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः सिमधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाशुं बृह्स्पितं ज्ञघनंच्युतिमान्न्दो भगंस्य तृप्याण्यग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्श्चतंस्रो

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मृण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या कुकुत्। विषूवान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनैंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृण्। यः सुशृङ्गः

सुवृष्भः। कुल्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्ऋरेणेव सूर्पिषाँ। मृधेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्ं। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तृनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमांतीः। नि श्वंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेह्मि प्रभंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषम् तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्रे जेता त्वं जेय। शत्रूंन्त्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधीं नुद। एतन्ते स्तोमंन्तुविजात विप्रंः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वन्देव हर्याः॥६६॥ सर्वविवित्या प्रेट्या न्योपः। यो घवेनाभिपांनिवः। इन्द्र नैवारा

सुवंवितीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जिज्ञेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृतनासाह्येषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्य सुवंर्महत्। वृत्रहा पुरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रसे। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नः पर्स्पा वरिवः कृणोतु। अयं कृत्रुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदित्सोमः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायों शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षत्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र महि वर्चा १सि धेहि। अवर्चसंङ्कणुहि शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निरमुं भंज योऽमित्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं कक्भिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥ असमे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथाङ्घर्मदुघेव धेनुः। अय॰ राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्मे इस्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानाम्। उत्तरस्त्वमधरे ते सपत्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः सञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्र्यतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बिलिमंग्रे अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिश्चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भुद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्ने अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चारुंतरो बुभूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावाँ। प्रियो विशामतिंथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवुमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हति ब्रह्मंणा स्पर्धेतुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥ ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तेवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतेः। शृङ्गाणीवेच्छृङ्गिणा सन्दंदश्रिरे। चषालंबन्तः स्वरंबः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा १ संः। नमः सर्खिभ्यः सुन्नान्माऽवंगात। अभिभूरिम्नरंतर्द्रजा रसि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामहिष्ट। हत्वा स्पतान् वरिवस्करनः। ईशानन्त्वा भुवनानामभिश्रियम्।

स्तौम्यंग्न उरुकृतर्थ सुवीरम्। हृविर्जुषाणः सपत्नार्थ अभिभूरंसि। जुहि शत्रूर् रप् मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्त्सहोभिर्मिता नंश्वत्वारि

च॥——————————————[७]

स प्रंत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेनं संयतां। बृहत्तंतन्थ भानुनां। नवृत्रु स्तोमंम्ग्नयें। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियों दृशे। रियर्वीरवंतो यथा। अग्ने यज्ञस्य चेतंतः। अदांभ्यः पुरण्ता॥७४॥ अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमांय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितमं वस्ं। नव सोमांय वापनें। ज्ञष्ट् पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितमं वस्ं। नव सोमां ज्ञषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥ स नो रास्व सहस्रिणंः। नव हिवर्जुषस्व नः। ऋतुिनः

सोम् भूतंमम्। तद्क्षः प्रतिहर्य नः। राजन्त्सोम स्वस्तयै। नव्र्स्तोम् त्रवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेतार् सचेतसा। शुचित्रु स्तोम् त्रवंजातम् द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथौम्॥७६॥ उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यज्ञन्न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजंमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी स्मीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसिन्ध्या। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिम्मृत्नन्नवंन॥७८॥ इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पर्यस्वत्युत्त्ररामेतु पुष्टिः। इमं

यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावांपृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभांनुर्घुतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्हुं स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथुमः प्राश्ञांतु। स हि वेद् यथां हुविः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोत् विश्वचंर्षणिः। भृद्रान्नः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नो मयोभूः पितो आ विंशस्व। शन्तोकायं तनुवें स्योनः। एतम् त्यं मधुना संयुत्ं यवम्। सरंस्वत्या अधिमृनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीत्सीरंपतिः शृतक्रंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानंवः॥८०॥

पुरुएता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतन्नवेंन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥————[८]

जुष्ट्रश्चक्षुंषो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषां उस्य र्शः सप्रंत्ववद्ष्टौ॥८॥ जुष्टों मृन्युर्भगो जुष्टीं नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नंः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशींतिः॥८०॥

जुष्टंः सुदानंवः॥

## हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षिति विश्वमेजंत्। इयों भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इत्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिमः हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यूज्ञपंतिन्दधंत्। जुषतां मे वागिदः ह्विः। विराहेवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशाः सि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंदेवानां ज्योतिरमृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा व्यम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवज्यीतिर्ितामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वार्चं बहुधोद्यमानाम्।

श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत दंक्षिणा। प्रतीच्यें दिशः शृण्वन्त्यंत्तरात्। तदिच्छोत्रंं बहुधोद्यमानम्। अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अश्रियमनंपस्फ्रस्ती सृत्यः स्म चे। [१] उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदञ्जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् र रोहिंत आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषां मुपस्थम्। तािमः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहां र्षोद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रन्दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचक्राणः प्ररुहो रुह्श्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहि्म्ना। वि नो राष्ट्रम्नेनतु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृत्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ्

शत्रून्। आ वो रोहितो अशृणोदिभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहितो द्यावापृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अद्दर्धावापृथिवी बलेन। रोहितो द्यावापृथिवी अंद्दरहत्। तेन सुवंः स्तिभितन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवंन्त्वा भानवों दीदिवा सम्मा समग्रासो जुह्वों जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्ससा७॥

पुनर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि शक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचितो मनः। श्रृष्टी नो अस्य ह्विषो जुषाणः। यानिं नोऽजिनन्धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानिं। अनेनं हविषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः

परिं। सर्वाभ्योऽभयङ्करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा स्मृधेँ त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसेँ। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेन्द्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्ग्निर्ग्नी १ रत्येत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनान्त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुंना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजंमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वे। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समंनक्त युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिदंदिदन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

करन्निविंष्टमस्यतान्नवं च॥

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूनाम्। इमङ्कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवो मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासों अक्रन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वज्री॥१२॥

अह्नन्ति मन्वपस्तंतर्व। प्रवक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्ननिहं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणो-ऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबत्सुतस्यं। आ सार्यकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्ना शत्रून्न किलाविवित्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरन्तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥ नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रूजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंदंधे हस्ते दक्षिणे। त्रणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इत्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुज्जिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चित्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुवंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलाङ्गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद स्ससा। पूषा रक्षितु नो र्यिम्॥१६॥

ड्मां यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। ड्मां र्यिं यजंमानाय धत्तम्। ड्मां प्राूत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं नों हृव्यं घृतवंत्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। ड्मानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिंर्वय १ सुभगांसः स्याम॥१७॥ वुज्यहीनामृजी्षं व्यृण्वित रक्षतु नो र्यि॰ सौभंगान्येकं च॥\_\_\_\_\_[४]

यज्ञो रायो यज्ञ ईशे वसूनाम्। यज्ञः सस्यानांमुत सुक्षितीनाम्। यज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। यज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धताङ्गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरिते बर्ही एप्यन्या। इमं यज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तन्त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नो भग पुरप्ता भंवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यराधः। भग्मान्धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वंतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वंतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तः शश्वंतीनाः समानाः शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्योच्छंत्। सा रूपाणिं कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नंमेतत्। सनातनं वितंत्र् षण्मयूखम्। अवान्याः स्तन्त्रंन्किरतों धत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वें मुरुतों जुनन्तिं। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमद्धः। पृतं जुंषध्वङ्कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसन्त्रीलिपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति स् सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिन्दम् आ दीदिवा स्म्। हिरंण्यवर्णमरुष सपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्थ्यूः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं केरिष्ठः। पूष्ट्रं स्तवं व्रते वयम्। निरंष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥ अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृच्छिसि। न त्वाभीरिव विन्दती ३। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिचिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव

दृश्यते॥ २३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। श्कटीरिंव सर्जति। गामुङ्गेषु आ ह्वंयति। दार्वङ्गेषु उपांवधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्नुक्षदितिं मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्ञग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बृह्बन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥

स्याम् रुरोह् युवानः शुन्ध्यूरिच्छमानो दृश्यते निपंद्यते चत्वारि च॥————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शमन्तरिक्ष सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशोः। वातंपत्नीर्भि सूर्यो विच्षे। तासांन्त्वा ज्रस् आ देधामि। प्र यक्ष्मं एतु

कीरयेंचित्॥२७॥

निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्माँ दुरिताद वेर्त्ये॥२६॥ द्रुहः पाशान्त्रिर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदत्स्योनम्। अप्यंभूद्धद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यंमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जांमिश्र स्मात्। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशाँत्। बृहंस्पते युविमन्द्रंश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धत्त रिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धत्त रिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धत्त रिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य।

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधमिन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमनिवर्त्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंत्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्श्शोभंमाना कृन्यंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयम्स्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं ज्रसः पुरस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्॥ वाचं मनिस् सम्भृताम्। हित्वा शरीरं जर्रसः प्रस्तात्। आ भूतिम्भूतिं वयमंश्ञवामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्योच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चरूपा। शर्श्वतीर्नावंपृज्यन्ति। न गमन्त्यन्तम्॥२९॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरसि विश्वायुंरसि। सर्वायुंरसि सर्वमायुंरसि। सर्वम्म आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नेपतिः। ब्रह्मं क्षूत्र स्वाहाँ॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्रंपतिः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजपतिः। राज्यमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। वर्रणः सम्राद्वमादेतिः। साम्राज्यमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पित्र्ब्रह्म ब्रह्मंपितः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विदेतिः। विश्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सर्रस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सर्रस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पश्नूनां मिथुनानाः रूप्कृद्रूपपंतिः। रूपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय पृश्नन्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च स्वाहा साम्रांज्यम्स्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहा विशंम्सिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहां चृत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृह्स्पितिः सिवृता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा

स ईं पाहि य ऋंजीषी तर्रत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्धंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स ईन्द्र चित्राः अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतों अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुर्वर्वद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मे पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीकें चिदु लोककृत्। सङ्गे समत्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषांम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रुनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे ह्वामहे। आ वाजैरुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। स्रुचा जुंहुत नो हविः॥३५॥ जुषतां प्रति मेधिरः। प्र हव्यानिं घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता सजोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी हविरिदं जुंषस्व। वयंः सुपर्णा उपंसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषंयो नार्धमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंऽव बुद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥ मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंणुं चक्षुंस्तनुवां विदेय। एवा वंन्दस्व वर्रणं बृहन्तम्। नमस्याधीरममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं

विय ५ सत्॥ ३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाकें सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुरुण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अप्सु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्प्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्याँ मे रास्व। तस्याँस्ते भक्षीय। तस्याँस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥ ज्योतिषा त्वा वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियंः।

यतों जातो अरोंचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या तें अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्ं। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्ं। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनुस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजा रियम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि म्घवानमुग्रम्। स्त्रा दर्धान्मप्रंतिष्कृत्र शवारंसि। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियोऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्देवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रेः। विदय्तीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य सिद्ध्यंकः। अग्रं नयत्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगांत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आ ये विश्वाः स्वपृत्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिंर्नृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दुभीतंये सुहन्तुं। एवा पाहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सुर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूश्चरिमे गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षाश्चिस सेधा अस्मात्संमुद्राद्वंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतितिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वाँ। वसूंनि पुरुधा विशन्तु। दीर्घमायुर्यजमानाय कृण्वन्। अधामृतेन जित्तारंमिङ्गः। इन्द्रः शुनावृद्धितंनोति सीरम्ँ। संवत्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिददांस ज्येष्ठम्ँ। संवत्सर्थ शुनवत्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनाँ। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतितिष्ठतीद्वृषाँ। अश्वायन्तो गृव्यन्तो वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन्थ हुवेम॥४५॥

अर्चत् हुविर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हासीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना षद्वं॥——[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नों भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना्र स ईं पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रेक्षत्यगृंभीता धाराव्रा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिंषा त्वा पश्चंचत्वारि श्वत्॥४५॥ प्राणः शुन्र हुंवेम॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौंऽस्यश्विभ्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

दधन्वा यो नर्यो अप्स्वंन्तरा। सुषाव सोम्मद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम र सूर्यस्य दुहिता। वारेण शर्थता तना। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सर्खां। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥ इन्द्रेस्य युज्यः सर्खां। ब्रह्मं क्षत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदाया शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यर्जमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैं षां कृणुत भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न जुग्मुः। उपयामगृहीतोऽस्यिभयां त्वा ज्रष्टं गृह्णामि॥३॥

सरेस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्ते जंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलांय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बर्लमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत १ सर्दः कृतम्। मा स॰सृंक्षाथां परमे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि रसीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥ उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सारुस्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्ं। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महों ऽसि महो मियं धेहि। सहों ऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रण ई सि॰हम्। सेमं पात्व॰हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्गा विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्गा। ।।

ह्विः प्रत्यङ्ख्सोम् अतिद्वतो गृह्णम्याविशन्विष्चिका पश्चं चा——[१] सोमो राजाऽमृतर् सृतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। विपानर् शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ कुङ्गां क्रिएसो धिया। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। अन्नांत्परिस्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षुत्रम्। ऋतेनं सुत्यमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो जुरायुणा-ऽऽवृंतः। उल्बंं जहाति जन्मना। ऋतेनं सुत्यमिन्द्रियम्॥७॥ वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यपिबत्। सुतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिंन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकिरोत्। सत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिंन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपान ५ शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्थेन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अ्द्धः क्षीरं व्यंपिब्जनमंनुर्तेनं स्त्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः स्त्ये प्रजापंतिर्ष्टौ चं॥——[२] सुरावन्तं बर्ह्षिषदः सुवीरम्। यज्ञः हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतासु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वकाः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमस्य शुष्मः सुर्यया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन।

सरंस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

इमन्तर शुक्रं मधुंमन्त्रिमन्दुम्। सोम्र् राजांनिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहन्तदंस्य मनसा शिवनं। सोम्र् राजांनिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यंः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमः। पितामहभ्यंः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमः। प्रपितामहभ्यः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमंः। अक्षंन्यितरंः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण शतायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्वातायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ववै। अग्न आयूर्षि पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवजनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यत्तं प्वित्रंमुर्चिषि। उभाभ्यान्देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरों यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। युज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा इ श्रीमीयें कल्पताम्। अस्मिँ होके शत र समाः। द्वे सुती अंश्रुणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेजत्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद॰ हविः प्रजननं मे अस्तु। दर्शवीर सर्वगण स्वस्तयै। आत्मसनि प्रजासनि। पृशुसन्यंभयसनि लोकसनि। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं दीधर्त्स्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पतार स्वस्तये पश्चं

सीसेन तन्त्रं मनंसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञ संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रणो भिषुज्यन्। तदंस्य रूपममृत १ शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सर्रराणाः। लोमांनि शष्पैर्बहुधा न तोकांभिः। त्वर्गस्य मा रसमंभवन्न लाजाः। तदिश्वनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मुज्ञानं मासरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँन्त्वचि। सरेस्वती मनसा पेश्वलं वसुं। नासत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्नहुर्धीर्स्तसंर्न्न वमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्। सुरया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्थं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शवीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो वंनिष्ठुर्जनिता शवीभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः श्तधार् उत्संः। दुहे न कुम्भी र स्वधां पितृभ्यंः। मुख्र सदस्य शिर् इत्सदेन। जिह्वा पवित्रमिश्वना सर् सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन् तेजो हृविषां शृतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्कमितं

वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वत्युपवाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्मो बलाय। कर्णांभ्याः श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांग्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिक्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्भिषजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गैः समंधात्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपक् शतमान्मायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतन्दधांना। सरंस्वती योन्याङ्गर्भम्नतः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपाक् रसेन् वर्रुणो न साम्नाँ। इन्द्रई श्रिये जनयंत्रप्सु राजाँ। तेर्जः पश्नाक् ह्विरिन्द्रियावंत्। परिसुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यान्दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्याँम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तर आुरादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोम॰ राजां चुत्वारिं च॥\_\_\_\_\_\_

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समहं विश्वैद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिरिस। क्षुत्रस्य योनिरिस। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्रांज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। सरंस्वत्ये भेषंज्येन॥२१॥

वीर्यायान्नाद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्ते। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रिये यशसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कार्य त्वा। सुश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यंराजा (३) न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणों-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्भोत्रम्ँ। जिह्वा में भद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्गामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥ चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौं मे कर्मं वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीमें राष्ट्रमुदर्म सौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अंर्ब्री जानंनी। विशो मेऽङ्गांनि सूर्वतः। नाभिमें चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥ आन्न-दन्न-दावाण्डौ में। भगः सौभौग्यं पसंः। जङ्घौभ्यां पद्मां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतितिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन्। प्रतिं प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतितिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैंः। द्वितीयांस्तृतीयैंः। तृतीयांः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजू १ षि सामंभिः। सामाँन्युग्भिः। ऋचो याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारेः। वृषद्वारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्त्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्याँस्वा सरंस्वत्यै भैषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे युज्ञो यर्जुर्भिरुपंनतिर्द्वे चं॥———[५]

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नैं। एना १ सि चकुमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदर्ण्ये। यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यें। एनंश्चकुमा व्यम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यावयजंनमिस। यदापो अप्निया वरुणेति शपामहे। ततो वरुण नो मुश्रा २९॥ अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृतमेनो-ऽयाद। अव मर्त्येर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नो देव रिषस्पाहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः।

यौऽस्मान्द्वेष्टि। यं चे वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्म्ममुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव॥३०॥

आंति। निलायवादणा

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंस्स्परि।

पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्दंवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमिहि। समिदंसि॥३१॥ तेजोऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिहि। पयंस्वा अग्र आगंमम्। तं मा स॰सृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनंन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुङ्कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहाँ॥३२॥

स्वप्न एनारं सि चकुमा व्यं मृंश्च मलांदिव स्मिदंस् जगुत्रीणि च॥———[६] होतां यक्षत्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्मतनूनपांतम्। ऊतिभिजेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव स् सुंवर्विदम्। पृथिभिम्धंमत्तमेः। नराश संन तेजंसा॥३३॥

वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंत्यंम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्भन्नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वत्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा। भिषजा सर्खाया। हविषेन्द्रं भिषज्यतः। कवी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयस्त्रिधातंवीपसंः। इडा सरम्वती भारती॥३६॥ म्हीन्द्रंपत्नीर्हविष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमिन्द्रं देवम्। भिषज्रं सुयजंङ्घत्रियम्। पुरुरूप र सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार ई श्तकंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥ मध्वां समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति हव्यं मधुंना घृतेनं।

वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षदिन्द्र इस्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेर्दसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा ५ औज्यूपान्। स्वाहेन्द्र ५ होत्राञ्जुंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतर्यजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (सुमिधेन्द्रन्तनूनपांतमिडांभिर्बुर्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पतिमिन्द्रम्ं॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों

वियन्तु होत्र्यजं॥)॥

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रि १ शता वर्ज्रबाहः। जघानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिर्मानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुंना समञ्जन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हरिवा अभिष्टिः। आजुह्वांनो हविषा

शर्धमानः॥३९॥

पुरुन्दरो मुघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो ज्रुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीन ५ सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथमानः स्योनम्। आदित्यैरक्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रन्दुरः कवष्यो धावमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपर्लीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोंभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृहती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूर्मिन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। दैव्या मिमाना मनससा पुरुत्रा। होताराविन्द्रं प्रथमा सुवाचाँ। मूर्धन् यज्ञस्य मधुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिरहिवषां वृधातः। तिस्रो देवीर् हविषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पर्लीः॥४१॥

अच्छिन्नन्तन्तुं पर्यसा सरम्बती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधिदन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिंष्टुर्यशसे पुरूणिं। वृषा यजन्वृषंणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनुस्पति्रवंसृष्टो न पाशैंः। त्मन्यां समञ्जञ्छंमिता न देवः। इन्द्रंस्य हब्यैर्जुठरंं पृणानः। स्वदांति हब्यं मधुना घृतेनं। स्तोकानामिन्दं प्रति शूर इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतुप्रुषा मधुंना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता ७ स्वाहाँ ॥ ४२ ॥

शर्धमानो महोभिः पत्नीर्घृतेनं चत्वारिं च॥—

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ सुधीचीः। सुत्यमित्तन्न

त्वावार् अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्नहिं पिर्शयान्मर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतीनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्ष्रृतं जनाषािडंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो म्घोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवतीनाश्चलारि च।————[९]
देवं बर्हिरिन्द्र ए सुदेवं देवैः। वीरवंतस्तीणं वेद्यांमवर्धयत्।
वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया बर्हिष्मतोऽत्यंगात्।
वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र ए सङ्घाते।
विड्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वत्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता
अपार्वाणम्। रेणुकंकाटन्नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य
वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्।

अयाँच्युन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावाँक्षीद्वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवाँक्षीत्। सिध्दं सपीतिम्न्या। नवेन पूर्वन्दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥ देवा देव्या होतांरा। देविमन्दंमवर्धताम। हताघंशः सावाभाँष्टां

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशः सावाभाँष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्त्रिस्तस्त्रो देवीः। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृंक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्य्जः सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराश १ संः। त्रिव्रूथस्त्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। श्तेनं शितिपृष्ठानामाहि सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पितिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिर्रण्यवर्णो मधुंशाखः सुपिप्पुलः। देवमिन्द्रंमवर्धयत्। दिवमग्रेंणाप्रात्। आऽन्तरिक्षं पृथिवीमंद १ हीत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवं ब्रहिर्वारितीनाम्। देवमिन्द्रमवर्धयत्। स्वासुस्यमिन्द्रेणासंत्रम्। अन्या ब्रही रूप्यभ्यंभूत्। वसुवने वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्तिस्विष्टकृत्। स्विष्टमुद्य करोतु नः। वसुवर्ने वसुधेर्यस्य वेतु यर्जा॥४९॥ वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीताँय्यर्ज गृहान् वेंतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं बुर्हिर्देवीर्द्वारों देवी उषासानक्तां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशक्सी देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं बुर्हिवरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयः श्रृतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृत्सेन् दैवीरयावीष रहताऽस्पृक्षच्छुतेन् दिवः स्वासस्थः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितौ॥)॥\_\_\_\_

होतां यक्षत्सिमिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वेलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तननूनपात्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषजम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥ बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराशरसं न नुग्रहुम्। पितृर् सुरांयै भेष्जम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं॥५१॥

होतां यक्षदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सष्ट्रीमोर्णमदाः। भिषङ्कासंत्या॥५२॥

सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदुरो दिशंः। क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधैं। दुहे कामान्त्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषुजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः

सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समंं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षुद्देव्या होतांरा भिषजा-ऽिश्वनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषजैः। शूष १ सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपमिन्द्रें हिरण्ययम्॥५५॥ अश्विनेडा न भारंती। वाचा सरंस्वती। मह इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमिन्द्रंमिश्वनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार रे शतक्रतुम्। भीमं न मन्यु राजांनळ्याँ घन्नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्दांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रर्यजं॥५७॥ होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरस्वत्यै। स्वाहंर्षभिमन्द्रांय सिःशहाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वर्रुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाहाऽग्निश् होत्राञ्चंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्श्विना सरंस्वतीमिन्द्रश्रे सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भेः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पयंस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चृतः। तानश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होत्र्यजं॥५९॥ वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज्ञ नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज्ञं व (सिमधाऽग्निश् षद। तन्नुनपांत्स्म। नर्गश्र्समृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टो। ब्रिहः सप्त। द्रोऽश्विना नवं। सुपेश्वसर्षः। देव्या होतांग् सोसेन रसः।

त्यस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वन्स्यतिमृषिः। अभित्रयोदश। अभिना द्वादंश त्रयोदश। स्मिधाऽभिं वदंरैर्वदंरैर्यवैर्थिना त्विषिमृथिना न भेषजर रूपमृथिनां भीमं भामम्॥॥———[११] सिमंद्वो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विराद्भुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर्थ शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजार्थसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहंः॥६०॥

अधांतामिश्वना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरिश्वनाविषम्। समूर्ज्र सर रियन्दंधः। अश्विंना नमुंचेः सुतम्। सोमर् शुक्रं परिस्नुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्राय पातंवे॥६१॥ क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधें। दुहे कामान्त्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्तरं सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातमिन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा

सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्नुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजञ्जः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप १ रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृश्मानः परिस्नुताँ। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिनं सोमंमश्विना। मासंरेण परिष्कृताँ। समधाता १ सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥ न्यहः पातंव सरस्वत्यधः सुतेंऽष्टो चं॥——[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मघिमन्द्रांय जिन्नेरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवंर्धयन्। स बिंभेद वृतं मघम्। नमुंचावासुरे सचां। तिमन्द्रं पृशवः सचां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥ दधांना अभ्यंनूषत। ह्विषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियन्द्धुः। सविता वरुणो भगः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सविता वरुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥ वरुणः क्षत्रिमिन्द्रियम्। भगेन सविता श्रियम्ं। सुत्रामा

यशंसा बलम्। दर्धाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्।

अश्वेभिर्वीर्यं बलम्ं। ह्विषेन्द्र सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नरां। सरंस्वती ह्विष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृंत्रहा शृतऋंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सरंस्वर्ता बर्लमिन्द्रियत्रग् पद्गं॥———[१३] देवं बर्हाः संरस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंर्क्ष्योः। बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरस्वती। प्राणं न वीर्यन्नसि। द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यांन्दध्रिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्रीं अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रींभ्यान्दध्रिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६८॥ देवी ऊर्जाहुती दुधे सुदुधें। पयसेन्द्रक्ष सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यान्दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सरंस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषन्न मध्ये नाभ्याम्। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिव्रूथः सरंस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतंं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पुलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वन्स्पतिनीं दधिदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीणमृश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥ स्योनमिन्द्र ते सदः। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां

दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम से स्विष्टकृत्। स्विष्ट् इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आज्यपाः। इष्टो अग्निरग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचितिः स्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रीभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होर्तृभ्यान्दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजेंन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वन्स्पितिः षद्वं (देवं ब्र्हिर्देवीद्वारीं देवी उपासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारेर्देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशक्सों देव इन्द्रो वन्स्पितिंदेंवं ब्रहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। समिधाऽग्निं देवं ब्रहिर्हिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिस्रः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वन्दुह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिन्द्रियम्। सौत्रामण्याक्ष स्रंतासुती। अञ्चन्त्ययं यजंमानः॥)॥———[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रंतासुती यजंमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्युरोडाशान्। गृह्णन्यहान्। बुध्नत्रिभ्याञ्छागुर् सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुधन्त्सरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्विभ्याम्। बुध्ननिन्द्रायर्षभम् श्विभ्या ५ सर्रस्वत्यै। सूप्स्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवत्। अश्विभ्याञ्छागेन् सरस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥ सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षुङ्स्तान्मेंदुस्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्तु ग्रहैं। अपातामुश्विना सरंस्वृतीन्द्रंः सुत्रामां वृत्रुहा। सोमौन्त्सुराम्णंः। उपो उक्थामुदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषैः। त्वाम् द्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अय सुंतासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होतरसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥ 

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वर सोम महे भगन्त्वर सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वर सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शश्चतुंष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अ॰होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः करम्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेंभिर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसद्भिः। हव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हविषां सपूर्यन्। उपांसदङ्कव्यवाहं पितृणाम्। स नंः प्रजां वीरवंती ॰ समृंण्वतु॥ ७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥-----[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छुचिव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यङ्गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥ शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यू सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभ्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सङ्गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुबर्हिषदम्ं। पूष्णवन्तममंर्त्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीञ्छन्दं इन्द्रियम्। पञ्चांविङ्गां वयो दधंत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिंरण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पृङ्किञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षत्सुपेशंसे। सुशित्त्पे बृंहृती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्ठुभुञ्छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यशंः। होतांरा देव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जगंतीञ्छन्दं इहेन्द्रियम्।

अनुङ्वाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिंरण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराज्ञञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तक्रंतुम्। हिरंण्यपणमुक्थिन् रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुमञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वरुणं भेषजङ्काविम्। क्षत्रिमन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दस्वञ्छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्यभङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धदत्तावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधस्ं वेत्वाज्यंस्य होत्तर्यजं सप्त चं (इडस्प्दें-ऽग्निङ्गांयत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंव्रत्र् शुचिंमुण्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडन्युर् सोमंमनुष्टुभंत्रिवृत्सम्। सुब्र्हिषदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पञ्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं ब्रह्माणः पुङ्किमिह तुर्य्वाहम्ँ। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रंत्रिष्टुभं पष्टवाहम्ँ। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहम्ँ। पेशंस्वतीस्तिस्रः पितं विराजिमिह धेनुन्न। सुरेतंसन्त्वष्टांरुं पुष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणुन्न। श्वतंत्रतं भगमिन्द्रंङ्ककुभैमिह वशान्न। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंषभङ्गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं दशेहेंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिडस्पदे सर्वं वेतु॥)॥———[१७]

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगीवयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोवयो दधुः। इडांभिरुग्निरीड्यः। सोमो देवो अमंत्र्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सो गौर्वयो दधुः। सुब्रुहिर्ग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबंहिरमर्त्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥ उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वं देवा अमर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। देव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशंः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शमिता नो वनस्पितः। स्विता प्रस्वन्भगम्। क्कुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमर्त्यस्तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥————[१८] वसन्तेनर्तुनां देवाः। वसंविश्विवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण तेर्जमा। हविरिन्द्रे वयों दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पेश्चद्शे स्तुतम्। बृहता यशंसा बलम्। हविरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तद्शे स्तुतम्॥८८॥ वैरूपेणं विशौजंसा। हविरिन्द्रे वयों दधुः। शारदेनर्तुनां देवाः। एकवि १ श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। हविरिन्द्रे वयों दधुः। हेम्न्तेनुर्तुनां देवाः। मुरुतंस्त्रिणवे स्तुतम्। बलेन शक्वरीः सहं। हविरिन्द्रे वयों दधुः। शैशिरेणुर्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि ५ शें ऽमृत ई स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षत्रम्। हविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमं सप्तद्शे स्तुत सहों हुविरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वसन्तेनं ग्रीष्मेणं वर्षाभिः शार्देनं

हेम्न्तेनं शैशिरेण षद॥)॥———[१९]

देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिह्य छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्ठभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रे वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पतिमिन्द्रमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ सो देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वेतु यर्ज॥९३॥ देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवं ब्रहिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वेतु यर्ज॥९४॥ वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यज् पर्श्व च (देवं बुर्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अंनुष्टुभा वाचम्। देवी जोष्ट्रीं बृह्त्या श्रोत्रम्। देवी ऊर्जाहुंती पुङ्ग्या शुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टभा त्विषिम्। देवीस्तिम्नस्तिम्रो देवीः पतिं जगंत्या बलम्ं। देवो नराशश्सों विराजा रेतः। देवो वनस्पतिर्द्विपदा भगम्ं। देवं ब्र्हिर्वारितीनाङ्क्कुभा यशंः। देवो अग्निः स्विष्टकुदतिंच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वीतामेको

स्वाद्वीन्त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽिस यद्देवा होतां यक्षत्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं ब्र्हिर्होतां यक्षत्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विनाऽश्विनां हुविरिन्द्रियं देवं ब्र्हिः सरंस्वत्यग्निम्द्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः सिमधां वसन्तेन्त्नां देवं ब्र्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्वतिः॥२०॥

वियन्तु चुतुर्वेत्ववर्धयदवर्धयः श्चतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयः श्चतुरंवर्धयत्॥)॥————[२०]

स्वाद्वीन्त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं प्वित्रेणोषासानक्ता बर्दरैरधातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाह्ङ्गां देवी देवं वयोधसं चर्तुर्नवितिः॥९४॥

स्वाद्वीन्त्वां वेतु यजं॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृत्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसम्वावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसम्वावं रुन्धे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रंथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥ अरुणो मिंरिसिश्रंकः। एतद्वे ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्धे। बृहस्पतिंरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमितिं। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वेनं यजेत॥२॥ पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश माध्यं दिने सर्वने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। त्रयंस्त्रि १ शत्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रि १ शहै देवताः। देवतां एवावंरुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रि॰शः। प्राजापत्यो वा अश्वंः॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रि शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः।

ता एवावंरुन्थे। कृष्णाजिनंऽभिषिश्चित। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन् र समर्थयति। आज्यंनाभिषिश्चित। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवित यजेत् वा अश्वां द्याति॥——[१] यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिवें

पूषा। पृष्टिवैश्यंस्य। पृष्टिंमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मारुतो हि वेश्यः। सप्तेतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। सप्तगंणा वै मरुतः। पृश्जिः पष्टौही मांरुत्या लभ्यते। विश्वे मरुतः। विश्वं एवेतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्भचर्मेऽध्यभिषिश्चति। स हि प्रजनियता। द्व्राऽभिषिश्चति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिषे। ऊर्जैवनमन्नाद्येन् समर्धयति॥६॥

वारुणो विद्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥———[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यत्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायेव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यत्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वकृणत्वायैव वांकृणः। अथो य एव कश्च सन्त्सूयते। स हि वांकृणः। अथ् यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगुधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्रः सूयाता इति। अष्टाबेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्सम्वं रुन्थे। हिरंण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेते भागुधेयेनान्वंमन्येता र रूपश्चत्वारिं च॥\_\_\_\_\_\_

[३]

न वै सोमेन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। हृतो ह्येषः। अभिषुंतो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चित। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राज्यस्यमृते सोमम्। तत्सर्वं भवति। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्य्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्सुंक्षिति स्युश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामन् मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चा-ऽभिषिंश्चति। मृनुष्यां वै नराश्र्सः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिंश्चति। यत्किं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्ं। तत्सर्वं भवति। ये में पश्चाशतंन्ददुः। अश्वांनार स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्ने

इव भवति रथन्तरमाहैकं च॥

मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते सधस्तुंतिस्त्रीणिं च॥————[५]

पुष गोस्तवः। षद्भिर्श उक्थ्यो बृहत्सामा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भवति। यो वै वाज्येयः। स सम्राद्भवः। यो राज्यस्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापितः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यङ्गोरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। ति स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। ति स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। ति स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेद्ये दक्षिण्त आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोरेवेनमनंन्तर्हितम्भिषिश्चिति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्गिर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवेनं गमयति॥१५॥ सिर्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विषिरश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पर्जन्ये वरुणस्य शृष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वोजंस्वत् ओजंस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥

इन्द्राय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥ इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्क्। तेजंसा सम्पिंपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥ ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ँ। ओर्जस्विच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्ँ। पयंस्विच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ। विश्वे देवा जर्रदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्टौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोर्जस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यिज्ञयो रसो द्वे

चं॥\_\_\_\_[७]

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्न्हा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिंब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्ं। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित् स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहुस्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुणाविहावतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पितः सोमों अग्निरेकं च॥———[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमवित्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतन्त। अन्नंमेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयित। यद्धिरंण्यन्ददांति। तेज्नस्तेनावंरुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यन्तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥ पृष्टिन्तेनं। यत्कंमण्डलुम्। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बृध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वे हिरंण्यम्। तेजं एवात्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्नाति। एतदेव सर्वमव्रुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्याङ्कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मदिव। अथो वर्ष्मैवैन १ समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा पृतः सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्श्वनीयो भवति। य पृवं वेदे। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥ अवेत्योऽवभृथा ३ ना ३ इति। यहंभीपुञ्जीलैः प्वयंति। तत्तिस्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पृभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा पृतत्तेजो वर्चः। यह्भीः। यहंभीपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनन्तेजंसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

भ्वन्त्यष्ट्रांमवुरुध्यं वदन्ति दुर्भा यहंभपुञ्जीलैः प्वयत्यकं चा——[९]
प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांन्तस्यामिति। स एतं
पश्चशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो
वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्तस्यामिति।
स पश्चशार्दीयंन यजेत। बहोरेव भूयांन्भवति। मुरुत्स्तोमो
वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भवति। पश्च वा ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतितिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। स्प्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः।

## प्रजापंतेराप्त्रै"॥३१॥

भूषिष्ठा यन्ति हे चे॥———[१०]
अगस्त्यो मुरुद्धां उक्षणः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त।
त एंनं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यांयन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च
कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाह्वयत। यत्कंयाशुभीयं
भवंति शान्त्यै। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां

भवन्ति। त्रयः प्रथमेऽह्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीये। एवं तृतीये॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारांज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्रमः स्वारांज्यमगच्छत्। स्वरांज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥ य उं चैनमेवं वेदं। मा्रुतो वा एष स्तोमंः। एतेन् वै म्रुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा एष युज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तद्रशः प्रजापंतिः। वेदं। सप्तद्रशः प्रजापंतिः।

# प्रजापंतेरेव नैतिं॥३४॥

तृतीर्थे गच्छति य पुतेन यजंतेऽत्ति य पुतेन यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः

स्वाराँज्यं मारुतः पश्चशार्दीयो वा एष युज्ञः सप्तद्शं प्रजापंतेरेव नैतिं॥)॥———[११]

अस्या जरांसो दमा म्रित्राः। अर्चर्धूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यिक्षे स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थं। अन्याऽन्यां वृत्समुपं धापयेते। हिरिप्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यांन्ददशे सुवर्याः। पूर्वाप्रं चरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परियातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणि शृता त्रीष्हस्रांण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षंन्यृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांर्न्त्र्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्कुह्वांस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कृवित्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों म्रुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे व्यम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडें अग्निर्इ स्ववंस्त्रमोंभिः। इह प्रस्ताो वि चं यत्कृतन्नेः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुतार्इ स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावाणो अध्वरम्। विश्वेषामदिंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वाञ्जिह्वा श्रचंयश्चकिरे कवे। त्वा रातिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा हुविरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां युज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विज्ञम्। वृनुष्वद्देव धीमहि प्रचेतसम्। जीरन्दूतममंर्त्यम्॥४०॥

युज्ञवाहुसासपूर्यन्वयमृद्धां भिक्षंमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥———[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदांय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयम्मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजंं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तत्रंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया त्रिण्रिद्रंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्निधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उत्तत्यदाश्विधयम्। यदिन्द्र नाहुंषीष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्वन्द्र स् सुहव स् हवामहे। अस्होमुच स् सुकृतन्दैव्यं जनम्। अग्निम्मित्रं वर्रुण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मुहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदित्सर्खिभ्यश्चरथु समैरत्। इन्द्रो नृभिरजनुद्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसंङ्गातुमग्निम्। उरुं नों लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभंयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्तस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंण् शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुहे वृज्जिणे मध्ं। यत्सींमुपह्रूरे विदत्। तास्तें विज्ञन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमान्ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृत्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदन्ननुं॥४५॥

वृज्जिणमयत्स्वृस्ति जोजयुर्नः सप्त चं॥\_\_\_\_\_[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्मात्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाप्नौत्। तान्थ्योड्शिना नाप्नौत्। तान्नात्रिया नाप्नौत्। तान्त्सन्धिना नाप्नौत्। सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान्ग्निस्त्रिवृता स्तोमेन् नाप्नौत्॥४६॥ स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानिन्द्रः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्रीरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्रौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम् एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यङ्काम्मकांमयन्त् तमौप्रुवन्। यङ्कामंङ्कामयंते। तमेतेनौप्रोति॥४८॥

स्तोमेन नाप्रीदवारयत् नवं च॥————[१४]
व्याघ्रोऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषीणां पुत्रो अंभिशस्तिपा
अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां
मिथुयाकर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे।
वृष्मीणमस्मै विर्माणमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः
सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित
प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥
तस्यं मृत्यौ चंरित राजसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं

मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद् ५ हत्। येभिर्द्यामभ्यपि १ शत्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपा १ समर्व्ययत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समंङ्गि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केत्भिः। येभिः सूर्यो दहशे चित्रभानुः। येभिवांचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समंङ्गि॥५०॥ आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलश्चित्रभांनु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कलश्चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनमधि विश्रयमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्रामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥ तथाँ त्वा सविता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। रुथीतंम १ रथीनाम्। वाजांना ५ सत्पतिं पतिम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्रिभिषिश्चन्तु गायुत्रेण छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिणतों ऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन छन्दंसा। विश्वे त्वा देवा उत्तरतों ऽभिषिश्चन्त्वानुं ष्टुभेन छन्दंसा। बृहस्पतिंस्त्वोपरिंष्टाद्भिषिंश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥ अरुणन्त्वा वृकंमुग्रङ्क्षंजङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रे अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रमुक्थेषुं नामुहूर्तम १ हवेम। प्र बाहवां सिसृत अवसं नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाह् उपाव हरामि॥५४॥ बुभूबाव्यंयत्तेनेममंग्न इह वर्चसा समिक्ष्विः वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दसोपावंहरामि॥ [१५] अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं सश्चरंन्तौ। दूरेहेंतिरिन्द्रियावांन्पतत्री। ते नोऽग्नयः पप्रंयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभितस्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनं त्वा मित्रावर्रुणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता समेमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्क्विरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृप्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। माङ्गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥

तद्गावाणः सोम्सुतो मयोभुवंः। तदंश्विना शृणुतश् सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं पंरिषस्वजानाः। सिश्हर हिन्वन्ति मह्ते सौभंगाय। समुद्रं न सुहवंन्तस्थिवाश्सम्। मृर्मृज्यन्ते द्वीपिनंमृप्स्वंन्तः। उद्सावेतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वर्चः। उदिहि देव सूर्य। सह व्युना मर्म। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय वार्गस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पला ओषंधयो भवन्तु। अन्नवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषाः राजां भूयसाम्॥५८॥

स्वभावें त्वा स्वेन बोः सूर्य स्प्त चं॥————[१६]
ये केशिनः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते।
तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्। अवासाग्दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा॥५९॥
देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुंः। अथांमुच्यस्व वरुणस्य पाशांत्। येनावंपत्सविता क्षरेणं। सोमस्य राजो वरुणस्य विदान। तेनं

येनावंपत्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशाननं गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। स्विता वर्च् आदंधात्॥६०॥

तेभ्यो निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्त्ररा द्यावांपृथिवी अपः

सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सह सृंजाथ। बलेन्ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सहसृंजाथ। यत्सीमन्तङ्कः तस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः पंरिववर्ज् वपइस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमह सह सृंजाथो वीर्यण॥६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृश्विनी ह्यंग्राऽदंधाद्ववर्ज् वपई स्ते द्वे चं॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनांयजत। तेनैवासान्त सर्ध् स्तम्मं व्यंहन्। यद्यहन्। तिद्वेघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥ य राजांनं विशो नापचायेयुः। यो वां ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि शे। औद्विंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्विंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि हरंन्ति॥६३॥

हर्रन्त्यस्मै विशों बलिम्। ऐनमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं

वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रेः क्षुत्राण्यादंत्त। न वा इमानिं क्षुत्राण्यंभूवित्रितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियन्दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्याताँम्। एवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूतग्रामण्यः। एवञ्छन्दा स्ति। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीरभ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां प्रशुभिंरसानीत्येव। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तं वै क्षत्रं विशा। विशैवैनं क्षत्रेण व्यतिंषजित। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तो वै ग्रांमणीः संजातेः। स्जातैरेवैनं व्यतिंषजित। व्यतिंषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिंषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिंषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥\_\_\_\_\_[१८]

त्रिवृद्यदाँग्नेयाँऽग्निम्ंखा ह्यद्धिर्यदाँग्नेय आँग्नेयो न वै सोमेंन यो वै सोमेंनैष गोंसुवः

सि॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्रून्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भवित तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् एषट्थ्यंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनी नुदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना १ रियवृधः सुमेधाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतामिभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थुः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानिं चकुः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अर्धा वायुं नियुत्तंः सश्चत स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृहती मंनीषा॥१॥ बृहद्रंयिं विश्ववारा रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शतिनींभिरध्वरम्। सहस्रिणींभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् हविषिं मादयस्व। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नों अस्तु॥२॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमधिं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वस्य जगंतः पर्स्पाः। हृविर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजापते विश्वसृज्ञीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिंहर्य ह्व्यम्। प्रजापतिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिम्स्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्रहसंधामा जुषता ह्विनंः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचं ऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमां नम्। ति ज्ञंन्वथो वृषणा पश्चरिष्मम्। दिव्यं न्यः सदं नश्च ऋ उचा। पृथिव्याम् न्यो अध्यन्तिरक्षे। ताव्समभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिम्समे॥ ५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि सोमो रियपतिर्दधातु। अवतु देव्यदितिरनुर्वा। बृहद्वेदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवना जुजाने। विश्वमन्यो अभिचक्षाण एति। सोमांपूषणाववंतन्धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उदुंत्तमं वंरुणास्तंभ्राद्याम्। यत्किश्चेदङ्कित्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। युज्ञो देवानाः श्

म्नीपाऽस्तुं चूर्तस्यास्मे किंतुवासंश्रुत्वारि च॥——[१]
ते शुक्रासः शुचयो रश्मिवन्तः। सीदंत्रादित्या अधि

त शुक्रासः शुचया राश्मवन्तः। सीदन्नादित्या अधि बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ं। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजंमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामन्दाशुषे सन्नमन्तः। पुरोडाशं घृतवन्तं जुषन्ताम्। स्कभायत् निर्ऋति सेधतामितिम्। प्र रिश्मिभिर्यतेमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वषंद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्ं। स्तीणं ब्रहिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीणं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सता आदित्याः कामं हिविषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हृव्यं मृतिश्चाग्नये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षं। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्थ सुप्रतींक्ष् स्वश्चम्। हृव्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमींवाः। अनंग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्यर्थ सुवितायं देव। क्षां विश्वेभिर्जरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उुवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मनुना वृच्यमानाः। देवद्रीचींन्नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रत्ररो युजे रथम्ं। जगृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥ वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शरूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र्यिन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमिस गोपंतिरेकं इन्द्र। भृक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वः। सिमन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। सर सूरिभिर्मघवन्त्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना र् सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत् तेनं। अस्मे धेहि यवमद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियंं जिर्त्रे वाजरत्नाम्। आ वेधसर् स हि शुचिंः। बृह्स्पितः प्रथमञ्जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि स्प्तरंश्मिरधमृत्तमा रसि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्त्सुव्रप्रतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरस्वत्यभि नो नेषि। इय॰ शुष्मेंभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिंरूर्मिभिः। पारावद्घीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विंवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैदिवाः सर्पृतं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिद्धे चं॥———[२] सोमो धेनु स्सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमो वीरं केर्मृण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्यं स्मेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अषांढं युत्सु त्व स्सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यजन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वम्पो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरिक्षम्। त्वञ्चोतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वप्सु। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहंडन्। राजैन्त्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकन्तदंस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रंया त्नुवां वृधान। न ते मिहत्वमन्वंश्ज्वविन्ति। उभे ते विद्या रजेसी पृथिव्या विष्णो देव त्वम्। प्रमस्यं वित्से॥१६॥ विचंत्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधो मिथ्तीररिषण्यन्। अमित्रंस्य

व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत प्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मन्युमिन्द्रेः॥१७॥

विश्वंन्द्रढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं म्रुतिश्चिदत्री। माता यद्वीरन्द्धनृद्धिनिष्ठा। क्वस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्यै। अहङ् ह्युंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्। विश्वस्य शत्रोरनमं वध्स्रैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यन्ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधौं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं।

स्वेन भामेन तिवेषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्जबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रूतयें॥२०॥ अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशों अमदन्त पूर्वीः। अयर राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमत्रेच्छूर् इन्द्रेः। अथाभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो युज्ञं वर्धयन्विश्ववंदाः। पुरोडाशंस्य जुषता १ हविर्नः। वृत्रन्तीर्त्वा दानुवं वर्ज्ञबाहुः॥२१॥

दिशोऽहश्हर् हिता हश्हेंणेन। इमं युज्ञं वर्धयेन्विश्ववेदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमत्रेच्छूर इन्द्रः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छेम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे ह्विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभयश् शर्म यश्सत्। यः सप्त सिन्धूश् रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्च। इन्द्रो ह्विष्मान्त्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥

वृव्धं वित्स इन्द्रंस्तुरायांस्त वृत्रत्यं वर्जवाहः पृथ्वयात्रीणं च॥———[३] इन्द्रस्तरंस्वानिभमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य १ सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वृज्जिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिर्वर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतां नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छ्तपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रां देवानांमिध्पाः पुरोहिंतः। दिशां पितंरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिव्षस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रेः। स नों हुविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्रबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्रेणासृजद्वृत्तमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमींवा अप बाधंमानौ। इमं यज्ञं जुषमांणावुपेतम्ं। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रंयज्ज्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषा- ऽरांतीर्दहत्नतमा रसि। ययोरोजंसा स्किमता रजा रसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शविंष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः।

विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवार सेधतर रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजमानाय शं योः। अरहोमुचां वृष्भा सुप्रतूंर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतत्रः। इदन्नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता र शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥ यत्सीं विरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्भोक्षा पंप्रथानेभिरेवैः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृणुष्वर सदेने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इत्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावांपृथिवी ज्जानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अवर्शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिन्द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तुङ्गर्भम्पदीदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थे। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सृत्यमंस्तु। पितृर्मातृर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृज्जनं जीरदानुम्। उवी पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षंतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती रसोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पर्श्वं च॥

शुचिन्नु स्तोम् इञ्चर्यद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृंत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तन्यं च जिन्व। विश्वन्तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदये सुवीराः। स ई र स्त्येभिः सर्खिभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधन्सैरतर्दत्। ब्रह्मण्स्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घूर्मस्वेंदेभिद्रिविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथावृशम्। स्त्यो मृन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञत्स दिवे वि चांभजत्। मृहीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूश्वद्रातहं व्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृर्ंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पितिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यो विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा र उपंपृिङ्घ नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवांसित। श्रद्धामना हिविषा ब्रह्मणस्पितम्। यास्ते पूषत्रावो अन्तः। शुक्रन्ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजिनष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पितंम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतन्तवस्र स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमकं गृंणते तुरायं। मारुंताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छुताधि। अस्मभ्यन्तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस आ

नंमन्ति। इमे श॰संवनुष्यतो नि पाँन्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अर्रुरुषे दधन्ति। अरा इवेदचरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोंभिः। पृश्ञेः प्रुत्रा उंपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मत्या मरुतः सं मिंमिक्षुः। अनुं ते दायि मह इंन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षत्रमनु सहों यजत्र। इन्द्रं देवेभिरन्ं ते नृषह्यैं। य इन्द्र शुष्मों मघवन्ते अस्तिं॥३७॥ शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहृत नृभ्यंः। त्व १ हि दढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न रार्धः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्राध् उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वुन्वन्नवांतः पुरुह्त इन्द्रंः। अषांढमुग्र सहंमानमा्भिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विद्येष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीषु। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंवद्धेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैर्विश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरींवृजत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणिं। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्र सि तिविषीन्दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वसुपतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमध्रेरासतेन। विजनां ज्छ्यावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथु हिरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमर्स्या तंतान॥४१॥

भगन्धियं वाजयंन्तः पुरेन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रुणः स्जोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रन्त्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश्सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिम्षाचः शर्मुं रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वें। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौर्मगं वीरवद्गोमदप्रः। दर्धातन् द्रविणश्चित्रम्समे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गुणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। युश्चि देवान्नंबुधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पितः पृथिवि मात्रभ्रंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्य् शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेम हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्ना उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा ह्व्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाववृत्याम्॥४४॥

ह्ळ्यजुष्टिम्। नमसा दवाववसाववृत्याम्॥४४॥
अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्द्व्या सुंपारा।
युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो ह सर्गाः।
अवातिरतमनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तत्सु
वाः मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा तस्थुषीरहंभिर्दुदहे। विश्वाः
पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जी(जि?)गिवा १ स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥ ४६॥

आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नैं। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शत १ हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषों वित्रं व्यः हैः। व्यमीवा इश्चातयस्वा विष्चीः॥४७॥ अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ तें पितर्मरुता र सुम्नमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हर्सो। हावनुश्रूनों रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदर्थं सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥

सञ्जभार॥४९॥

वर्षान ततानास्तु विश्वानं ववृत्यां वविर्वि घृतेन् विष्चीः श्रुतन्द्वे चं॥———[६]
सूर्यो देवीमुषस् १ रोचंमानामर्यः। न योषांमुभ्यंति पृश्चात्।
यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भृद्रायं भृद्रम्।
भृद्रा अश्वां हृरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः।
नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति
सद्यः। तत्सूर्यस्य देवत्वन्तन्मंहित्वम्। मृध्या कर्तोर्वितंतु १

यदेदयुंक्त ह्रितः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मै। तिन्मत्रस्य वरुणस्याभिचक्षे। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थै। अनुन्तम्न्यद्रुशंदस्य पार्जः। कृष्णम्न्यद्धरितः सं भेरिन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निरश्हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उंरुचक्षा उदेति। दूरे अंर्थस्तरणिर्भाजंमानः। नूनञ्जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं नो भव चक्षंसा शं नो अह्नां। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तत्सूर्य द्रविणन्धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरेक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च।
त्वष्टा दधत्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः।
दश्मेमन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंर्त्रम्।
तिग्मानीक्ष् स्वयंशस्अनेष्। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति।
आविष्ट्यो वर्धते चारुरासु। जि्ह्यानांमूर्ध्वस्वयंशा
उपस्थै॥५२॥

उमे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि्॰्हं प्रतिंजोषयेते।
मित्रो जनान्प्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवंः। राजां
सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वयः सुमतौ यिज्ञयंस्य। अपि
भद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास इडंया मदेन्तः। मित्रज्मेवो
विरम्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपृक्ष्यन्तः॥५३॥
वयं मित्रस्यं सुमतौ स्याम। मित्रं न ई॰ शिम्या गोषुं
गव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अप्स्वजीजनन्। अरंजयताः
रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंज्तञ्चनुषामवंः। महा॰
आदित्यो नमंसोप्सद्यः। यात्यञ्जनो गृणते सुशेवंः। तस्मां
पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं हिवरा जुंहोत। आ

वा रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंर्तिनः प्विभीरुचानः। इषाबौंढा नृपतिंर्वाजिनींवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दधांना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तां दिवो बांधते वर्तिनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरो दुिहता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिष्रु सवां मनांवां वयोगाम्। यो हस्यवा रे रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध र समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुःसनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वचंः सप्यतिं। तस्मैं धत्तः सुवीर्यम्। गवां पोषुः स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हुविषां सपुर्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेन। तस्यं ब्रुत र रक्षतं पातम रहंसः॥५७॥

विशे जनाय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वान्दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्घीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हुविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभार् द्यौर्ग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वुध्वां यादंमानः समुद्रेऽ९हंसुः प्रस्थितस्य॥—[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नमदन्तंमिद्मा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमृत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥ समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यां दयेत। परांके

अन्नं निहितं लोकं एतत्। विश्वैदिवैः पितृभिंग्र्प्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शतुत्मी सा तुनूमें बभूव। महान्तौ चरू संकृद्युधनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तत्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहः। अन्नं मृत्यं तम् जीवात्ंमाहः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रंचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इत्स तस्यं। नार्यमणं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयन्यान्॥६१॥

अह॰ सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधे निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा॰ षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वें। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वें। वाचं वेवा उपं जीवन्ति विश्वें। वाचं मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मन्नृकृतों मनीषणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानि॥६३॥

तानिं विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयंं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः सिमंध्यते। श्रृद्धयां विन्दते हुविः। श्रृद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामिस। प्रियक् श्रंद्धे ददंतः। प्रियक् श्रंद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रिरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजंमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हृंदय्यंयाऽऽकूंत्या। श्रद्धयां हूयते हृविः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रुद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वंमिदं जगत्। श्रद्धां कामस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुध्नियां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

सतश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्ति वृत्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मंणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगत्। ब्रह्मंणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनां। अन्तर्रस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ं। तेन कोंऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रि श्वत्। ब्रह्मन्त्रिन्द्रप्रजापृती। ब्रह्मंन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नों यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंत्रजरश् सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देव्युम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥ गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रेः। इच्छामीद्धृदा मनंसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशिश्वंत्। अश्लीलिश्वंत्कृणुथा सुप्रतीकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभास्। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः स्प्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्सः। परिं वो हेती रुद्रस्यं वृश्यात्। उपेदम्पपर्यनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

च्यामि कनीयोऽन्यानिषति प्वानि यज्वंस हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिवंन्तीः पद्वं॥[८] ता सूर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोर्ष्वतं न ममे जातुं देवयोः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्ट्रमी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुवन्ती भुवना क्विकृत्। सूर्या न चन्द्रा चरतो ह्तामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता महिन्नता। विश्ववपरी प्रतरणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मृनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्यः सप्त बिंभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चेरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधं आयते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीन्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा प्रो यत्। किमावंरीवः कृह कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गहेनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माद्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रैं प्रकेतम्। सुलिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंसुस्तन्महिना जांयतैकम्। कामुस्तदग्रे समवर्त्ततािधे॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्।

हृदि प्रतीष्यां कवयों मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो र्शिमरेषाम्। अधः स्विंदासी(३)दुपरिं स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः पुरस्तांत्। को अद्धा वेंद् क इह प्र वोचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अविग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥ अथा को वेंद यतं आबभूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आबभूवं। यदि वा दधे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद यदिं वा न वेदं। कि इस्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतक्षुः। मनीषिणो मनंसा पृच्छतेदुतत्। यदध्यतिष्ठद्भवनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र ह्वेम। प्रातर्जितं भगमुग्र ह्वेम। व्यं पुत्रमदितेयों विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चित्॥७७॥ राजां चिद्यं भगं भक्षीत्याहं। भग प्रणेतर्भग सत्यंराधः। भगेमां

धियमुदंव ददंत्रः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य। वयं देवानारं सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥ तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर एता भवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। दिधिकावेव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विचक्षणा विचर्तुर शर्मृत्रिधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चिंदेवाः प्रपीना एकं च॥—[९] पीवौत्रान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमहर्मस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौँत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचित्रु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नाय्यूँयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ अष्टकम् ३॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। हविरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं रश्मयो यस्य केतवंः। यस्येमा विश्वा भुवंनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिरभि संवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृहती चित्रभांनुः॥१॥ सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम शरदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ हविषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजमाने दधातु॥२॥ यत्ते नक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय॰ राजन्प्रियतमं प्रियाणांम्। तस्मैं ते सोम हविषां विधेम। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। आर्द्रयां रुद्रः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिघ्वयानाम।

नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजार रीरिष्नोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिंणो वृणक्तु। आद्रां नक्षंत्रं जुषतार हविर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश रंसन्नुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वस्य भूत्री जर्गतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू ह्विषां वर्धयन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भिसम्बंभूव। श्रेष्ठों देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः पिरं पातु पृश्चात्। बाधेतान्द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद स्पर्पेभ्यों ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तिरक्षं पृथिवीङ्कियन्ति। ते नः सूर्पासो हवमागंमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्श्चरंन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पेभ्यो मधुंमञ्जहोिम।

उपंहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते

नो नक्षेत्रे हवमार्गमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥ ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। या इश्चे विद्या या १ उं च न प्रविद्या मुघासुं यज्ञ १ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामिस् त्वम्। तदेर्यमन्वरुण मित्र चारुं। तन्त्वां वय १ संनितार १ सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवंनानि सिन्नता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रम्जर्रं सुवींर्यम्। गोमदर्श्वंवदुप् सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भग्स्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहन् हस्त र सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारमद्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं युज्ञम्। त्वष्टा नक्षेत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभः संसं युव्तिः रोचमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वान्भवंनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचेष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्मात्। गोभिनीं अश्वेः समंनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्रंङ्गो वृष्भो रोरुवाणः। स्मीरयन्भवंना मात्रिश्वां। अप द्वेषा स्मिन्दतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तद् निष्टमां शृणोत्। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्स्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तिदंन्द्राग्नी कृणतान्तिद्वशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पश्चात्पुरस्तादभंयन्नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधंन्नुदतामरांतिम्। पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुन्दुहां यजमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजंमाने दधातु ह्विर्नः पाथुश्चेतों जुषन्ताश्चेतों मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋखारमं हव्यैर्नमंसोपुसद्यं। मित्रं देवं मित्रधेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। शुतर्ञ्जीवेम शुरदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तांत्। अनूराधास इति यद्वदंन्ति। तिन्मत्र एंति पृथिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतर्न्तिरक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतार्ग॥१३॥ तस्मिन्वयममृतन्दुहानाः। क्षुधंन्तरेम दुरितिन्दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवैं। अषांढायं सहंमानाय मीढुषैं। इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दुहांना। उुरुं कृंणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं पशुभिः समक्तम्। अहर्भूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१४॥

अहंनों अद्य संविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिन्नुदामि। शिवं प्रजायै शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः श इस्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यज्ञंमानाय कल्पताम्। शुभाः कृन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कुर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वां देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥

यस्मिन्ब्रह्माऽभ्यजंयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियंन्दधात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंशृणोमि वाचम्॥१७॥

म्हीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना १ ह्विषां यजामः।

त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंत्रमे। महीं दिवं पृथिवीम्न्तिरिक्षम्। तच्छ्रोणैति श्रवं इच्छमाना। पुण्युः श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवृत्सरीणंम्मृतः स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षेत्रमभि संविशाम। मा नो अरातिरघशुरसाऽगन्। क्षुत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षेत्राणार श्रतिभेषुग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायुः। श्रतर सहस्रां भेषुजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेष्वजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां भूतानि प्रतिमोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वें। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंब्धियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्रौह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रेक्षन्ति सर्वे। चत्वार एकंमभिकमं देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य ई स्तुवन्तंः। अहि ई रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थाम्। पृष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥ इमानि हव्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान्पशूत्रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार अन्वेंतु पूषा। अन्नु रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजंमानाय यज्ञम्। तदिश्वनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभङ्गिमंष्ठौ सुयमें भिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र १ हविषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूतावृमृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमो-ऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां मह्तो महान् हि। सुगन्नः पन्थामभयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरेणीर्भरन्तु। निवेशनी यत्ते देवा अदंधुः॥२३॥

ततार् मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाच ई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ

देवास्रीणिं च॥——[२]

नवीनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अर्शुमांप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानन्तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिन्दधांनाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मान्मतिं मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपंयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। सर्नः सिवता सुवत्सिनम्। पुष्टिदां वीरवत्तमम्। उदुत्यश्चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हव्यवाहर् स्विष्टम्॥२६॥

आ्यत्यंगम्तिःबंष्टम्॥——[३]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौ-ऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वृपुणीकांये स्वाहति॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेति। स एतं प्रजापंतये रोहिण्यै च्रुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनयागच्छत। उपं ह् वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥ सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र राज्यम्भिजंययमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र ह वे राज्यम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स एत र रुद्रायार्द्राये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽर्द्राये स्वाहां। पिन्वमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिर्वनस्पतिंभिः प्रजांयेयेतिं। सैतमदित्ये पुनंवस्भयां च्रं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिर्वनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवसुभ्याम्। स्वाहा भूत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्भन्निरंवपन्। तानेताभिरेवदेवतांभिरुपांनयन्। पृताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्विषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दुन्दुशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेति। त एतं पितृभ्यो मघाभ्यः पुरोडाश्र् षद्धंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आंध्रुंबन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांग्दाभ्यः। स्वाहांऽरम्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स एतमंर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्।

पृशुमान् ह् वै भंवति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याः स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेति॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवानाई स्यामितिं। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगांय स्वाहा फल्गुंनीभ्या स्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधींरन्। स्विता स्यामिति। स पृतः संवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रींहीणाम्। ततो वै तस्मे श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मे मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेतिं। स एतन्त्वष्ट्रे

चित्राये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥ वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांये स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेति। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वै संमानानांम्भि जंयति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहाँ। श्रेष्ठांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहतिं॥४०॥ अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमति। येन कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥४१॥

अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिः षोडंश् सोम् एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश् बृह्स्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुर्दश् त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्पौर्णमास्या

अष्टौ पश्चंदश॥———[४

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्वरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषुलोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेयं ह् वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स प्तिमन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वै स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं हु वै संमानानांम्भिजंयति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहाँ ज्येष्ठायै स्वाहाँ। ज्येष्ठांय स्वाहाभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूल र्रं हु वै प्रजां विंन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजायै स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रङ्कामंम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्झोऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वे ताः संमुद्रङ्कामंम्भ्यंजयन्। समुद्र ह वे कामंम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्धाः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्ययं जंयेमेतिं। त पृतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयति। य पृतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो

स्वाहेतिं॥४८॥

देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपूज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकमभिजंयेयमितिं। तदेतं ब्रह्मणे-ऽभिजिते चुरुं निरंवपत्। ततो वै तद्भंह्मलोकमभ्यंजयत्। ब्रह्मलोक १ ह वा अभिजंयति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहाँ। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४७॥ विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यः श्लोकः शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायैं पुरोडाशंत्रिकपालन्निरंवपत्। ततो वै स पुण्यः श्लोकंमशृणुत। नैनंं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ५ ह वै श्लोक र शृण्ते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्रोणायै स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्रुताय

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतानां परीयामेति। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतानां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्ये स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। हृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्वतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स हृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। हृढो हृ वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्वतिभेषजे स्वाहां। भेषुजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामितिं। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्स्यंभवत्। तेज्ञस्वी हु वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। तेजंसे स्वाहां ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिवैं बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेतिं। स

पृतमहंये बुध्नियांय प्रोष्ठप्देभ्यः पुरोडाशं भूमिंकपालं निरंवत्। ततो वै स इमां प्रंतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ हु वै प्रंतिष्ठां विन्दते। य पृतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांय स्वाहां प्रोष्ठप्देभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स पृतं पूष्णे रेवत्यैं चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पुशुमान् ह वै भंवति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशंन्द्विकपालन्निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रीन्नस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँ ऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांपभरंणीभ्यश्चरुं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यम्भि जंयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपुभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अंमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनैव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांये स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दुशापु एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्त्रयोदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहि्वै

बुध्नियः पूषाऽश्विनौ यमो दशं दृशाथैतदंमावास्यांया अष्टो पश्चंदश॥————[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासानमासानितृत्त्सं-वत्स्रमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स् सलोकतामाप्रयामिति। स एतश्रन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्याये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोऽहोरात्रानंधमासान्मासानितृत्न्त्संवत्स्र-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतामाप्रोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासानितृत्न्त्संवत्स्रमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतामाप्रोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहां प्रतीदृश्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहुर्तुभ्यः स्वाहाँ। सुंवृत्सराय स्वाहेतिं॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह। न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमंहोरात्राभ्यां च्रं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अतिं ह् वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमुक्तये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं च्रं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो स्वाहां। व्यूष्ठ्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुनिर्वपति। यथा त्वं देवानामिसं।

एवम्हं मंनुष्यांणां भूयास्मितिं। यथां हु वा एतद्देवानांम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिंताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत र सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा-ऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमिदंत्यै च्रुं निर्वपिति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्ततः प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥ चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्शाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश सूर्यो दशाथैतमदिंत्यै पश्चाथैतं विष्णंवे षद्भ्वप्त (सविताऽऽशूनां वीहीणामिन्द्रों महावीहीणामिन्द्रेः कृष्णानां वीहीणामहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितरः षद्वंपालर सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णुंस्रिकपालमहिर्भूमिंकपालमृश्विनौं द्विकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृग्निस्त्वष्टा वसंवो-ऽष्टाकंपालम्न्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्युमा पूषा पंशुमान्तस्या्र् सोमों रुद्रो बृह्स्पितः पर्यसि वायुः पयः सोमों वायुरिंन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं यमोंऽभिजिंत्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायें पौर्णमास्या अमावास्यांया अगत्यै विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स एतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त मेति त एतन्निरंवपन्। आपौऽकामयन्त मेति ता पुतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते पुतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयुतेति स पुतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रैष्ठ्यमिन्द्रो ज्यैष्ठ्यमिन्द्रों दृढः। अहिः सूर्योऽदिंत्यै विष्णंवे प्रतिष्ठायैं। सोमों युमः संमानानाम्। अग्निनों रीरिषदन्यत्रं रीरिषः॥)॥\_\_\_\_\_ -[६]

अग्निर्न ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥६॥ अग्निर्न्स्तन्नों वायुरिहेर्बुभियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा एकंपात्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥

अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तङ्गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पर्णः। यत्पंर्णशाखयां वत्सानंपाकरोतिं। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पुशवंः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंणिशाखया गाः प्रापयिति। स्वयैवैनां देवतया प्राप्यिति। यङ्कामयेतापुशुः स्यादिति। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपूर्येव भंवति। यङ्कामयंत पशुमान्त्स्यादितिं। बहुपर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥ यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकमभि जंयेत्। यदुदींचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरिति। उभयौर्लोकयोरिभ-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्येक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥

वायवं एवैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा करोति। यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण् इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमृङ्कर्मं। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमित्रया देवभागिमत्यांह॥४॥

वृत्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवैना इन्द्रायाप्यांययति। ऊर्जस्वतीः पयंस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् १ हि पयंः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अंयक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत माऽघश्च स् इत्यांह गुप्त्ये। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृणक्कित्यांह। रुद्रादेवैनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनाङ्गोपीथायं। तन्मौत्सायं पृशव उपंसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्याह करोति नवं च॥———[१]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंते प्रस्ति। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापृत्यो वा अश्वः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिन्दंधाति। प्रत्युष्ट्रं रक्षः प्रत्युष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वित्षष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुंः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह बर्हिरासद इत्यांह। बर्हिषः समृद्धौ। कर्मणो-ऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे

प्रतिप्रोच्यां हृदं कंरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिरं सायै। यावंतः स्तम्बान्यंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिर्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक इं स्तम्बं परिदिशेत्। तर् सर्वन्दायात्॥१०॥ यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृद्धम्सीत्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहिरं सायै। पर्व ते राध्यास्मित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिष्मित्यांह। नास्यात्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्शं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रुंहेमेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टील्लॅनोति। मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनृत्सम्भंरित॥१२॥ अदित्ये रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनुद्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रें देवतांना १ समंनह्यत। साऽऽर्भ्रोंत्। ऋद्धौ सन्नंह्यति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्मात्स्रावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंश्नात्वित्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रेसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहति। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंरामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मंणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरक्षमिन्विहीत्यांहु गत्यैं। देवङ्गमम्सीत्यां देवानेवैनंद्रमयित। अनंधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गर्माः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्य लोकस्य सम्ष्रि॥१५॥

स्योनित्वायं स्वधाकृंताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरित जायन्ते बृह्स्पितिः समंष्ट्री॥——[२] पूर्वेद्युरिध्माबुर्हिः करोति। युज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्युज्ञमसृजत। तस्योखे अस्त्रश्सेताम्। युज्ञो वै प्रजापंतिः। यत्सान्नाय्योखे भवंतः। युज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्नश्साय। शुन्धंध्वन्दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृंथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावंरुन्थे। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्याह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। श्तधार सहस्रंधारमित्याह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्यंलाशशाखायाँन्दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रंन्दर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयों रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यं ह्यंतदर्हः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्मांद्य स्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रप्स इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इस्कन्दंति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् स्र स्रंजित। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्तिं। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान्यजंमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासाङ्कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेत्यांह। इयं वे विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यथापूर्वन्दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्धे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवहै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयांम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १षि। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्ति। यदा खलु वै पवित्रंमत्येति। अथ तद्धविरिति। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् स् स् सृंजति। तस्मांद्पाश्चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मन्द्रा धनंस्य सात्य इत्यांह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन त्वातंनुच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥ सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवत्सर ५ सोमं न पिबंति। पुनर्भक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्त्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनर्भक्ष्यों ऽस्य सामपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयोनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥ अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिद्ध सदेवम्। उदन्बद्भवति। आपो वै रक्षोघ्रीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों हव्य र रेक्षुस्वेत्यांह गुप्त्यैं। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ये॥२७॥

असीत्यांहु धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयित दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्यात्सादयित पश्चं च॥————[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। युज्ञस्य वे सन्तितिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तायन्ते। युज्ञस्य विच्छितिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। युज्ञस्य सन्तंतिरसि य्ज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयात्सन्तंनोति। यज्ञंमानस्य प्रजाये पश्नाः सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रृद्धा वा आपः। श्रृद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥ यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। वज्जो वा आपः॥ वज्जमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। अपः प्रणंयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणंयति। आपो वै देवानां प्रियन्धामं। देवानां मेव प्रियन्धामं प्रणीय प्रचंरति॥ २९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताँ। देवतां पृवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। वेषाय त्वेत्यांह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट् रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदंहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित तं धूर्व यं वयं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषो। यश्चैव धूर्वित। यश्चैनन्धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयति। त्वं देवानांमस् सिस्नेतमं पप्रितमं जुष्टंतमं वहिंतमन्देवहूतंम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥ अहुंतमिस हिवधांन्मित्याहानांत्र्ये। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह् धृत्यें। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमां संविंक्था मा त्वां हिश्सिष्मित्याहाहिश्साये। यद्वे किं च वातो नाभि वातिं। तत्सर्वं वरुणदेवत्यम्ं। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांहु प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावंरुन्थे। स एवमेवानंपूर्वश् हवीश्षि निर्वपति॥३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गुप्त्यैं। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चंरति। यः पंरीणहिं। सुवंरिभ वि ख्येषं वैश्वानरञ्ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वानरञ्ज्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषिं गृहीत उदंवेपेताम्। दूरहंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह गत्यै। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या प्वैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्य १ रेक्ष्मस्वेत्यांह गुप्त्यै॥३४॥ युज्ञो वा आपो धामं प्रणीय प्रचरत्यतीयादेतद्वाहुन्यामित्यांह हुवीशिष् निर्वपति गत्यै चुत्वारि

च॥\_\_\_\_\_\_[×1

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयः सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भेर्प उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरवेना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पुंनात्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेना उत्पुंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवेना उत्पुंनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रुष्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्त्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गायित्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य् इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यित्रिन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे। संज्ञामेवासामेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनापः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यामित्याह। यथादेवतमेवनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्याह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता आरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह् प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रतथश्चंः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुरा गृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णों

रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरिध्यवहन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्केन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमिस वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तृनूर्सीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तृनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्ति। अथु वाचं विसृजन्ते।

देववीतये त्वा गृह्णामीत्याह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्त्समंधयित। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशिमं शिमुष्वेत्यांह शान्त्यें। हिविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना ह हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयित। त्रिर्ह्वंयित। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत व्यः संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनौः श्रृद्धादेवस्य यजंमानस्यासुर्ध् वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपाशृंण्वन्। ते पराभवन्। तस्मात्स्वानां मध्येऽवृसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्धदंता ते परा भवन्ति। उच्चैः समाहंन्त वा आंह विजित्यै॥४३॥ वृङ्क एंषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमिस प्रति त्वा वर्ष्वृद्धं वेत्त्वत्याह। वर्ष्वृद्धा वा ओष्धयः। वर्ःषवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। युज्ञ रक्षार्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्ना पशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत १ रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये॥४४॥ रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रेसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्कित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कन्दन्ति। ये शूर्पांत्। देवो वंः सविता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। हविषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकर्तवा आह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्पुंनाति रुश्मयो नयन्त्यग्रे युज्ञपंति युज्ञोऽदितिरस्कंन्दाय गृह्णामीत्यांह वदेत्यांह् विजित्या अपंहत्या अस्कंन्दाय त्रीणि च॥————[५] अवधूत् रक्षोऽवधूता अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्तवग्सीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिष्ठित्यै।

पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्व्वेता १ शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योवींत्यें। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कम्भिनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृंत्ये॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यें। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। पृतस्य यज्ञंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्तिं। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय

त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा पृतानि प्रस्केन्दिन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर्शसेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्देग्ध्रश् रक्षो निर्देग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षार्श्रस्येव निर्देहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिंधित्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिं छोके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। धरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥ धर्मास् दिशों हु इहेत्यांह। दिशं एवैतेनं हु इहित। इमाने वैतेर्ली कान्ह ईहित। हु इने तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्ने कपालान्यपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एकमग्ने कपालमुपं दधाति। एकं वा अग्ने कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मदिष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरेः। यदेवं कृपालाँन्युपदधाति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिक् सङ्स्करोति। आत्मानमेव तत्सङ्स्करोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिं लोके उनु परैति। यद्ष्टावृंपदधांति। गायत्रिया तत्सिम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कार्नन्पूर्वं दिशो विधृत्ये दृश्हित। अथायुंः प्राणान्यजां पृशून् यजमाने द्याति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्करोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूणामङ्गिरसान्तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानिं घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस इति चतुंष्पदयर्चा वि मुंश्चिति। चतुष्पादः पशवंः। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवंमेवैतेनं द १ हित सम्भवंति त १ स इस्कृतमात्मानं द्वादंश स इस्थिते त्रीणि

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्य अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यै। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापों अद्भिरंग्मत समोषंधयों रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिंन्वन्ति। अन्या वा एतासामन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मांदेवमांह। सः रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः स्ज्यध्वमित्याह। आपो वै रेवतीः। पुशवो जगतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पशून्। तानेवास्मां एकधा स॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अद्धः परि प्रजांताः स्थ समद्भिः पृंच्यध्वमितिं पर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥ आप ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयैं त्वाऽग्नीषोमाँभ्यामित्यांह व्यावृत्त्यै। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्विमेः प्रथयति। त्वचं गृह्वीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन् स् सर्तनं करोति। अथाप आनीय परिमार्ष्टि। मा स् एव तत्त्वचं दधाति। तस्मात्त्वचा मा सं छुन्नम्। घुर्मो वा पृषोऽशान्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यम्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यम्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपहत्ये। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित् रक्षा ईस्यजिघा रस दिवि नाको नामाग्नी रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा रस्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवैन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्यांह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्तें तनुवं माऽतिंधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्नें ह्व्य इ रंक्षस्वेत्यांह गृष्ट्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृजते। यज्ञमेव ह्वी १ ष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यै करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासयैत्। आविर्मस्तिष्कः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गुहां मस्तिष्कः। भरमंनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा १ सेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलितभावुको भवित। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायजुष्कंमिभवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः पृशवंः। प्राणैरेव पृशून्त्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा पृशवः पुरीषम्। यदेवमंभिघारयंति। यजंमानमेव प्रजयां पृशुभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इति। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुन्ः सं निधंष्वम्। अहं वस्तं जंनियष्यामि। यस्मिन्मृक्ष्यप्व इति। ते देवा अग्नौ तुन्ः सन्त्रंदधत। तस्मांदाहुः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणापः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोंऽजायत। सि द्वितीयंमभ्यंपातयत्॥६५ ततौं द्वितोंऽजायत। सि तृतीयंमभ्यंपातयत्। ततंस्त्रितों-ऽजायत। यद्न्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्याभ्युदिते। सूर्याभ्युदितः सूर्याभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिम्नुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्बंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धै। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यन् विसृत्यैवमाहाशाँन्त आह् गुर्ये छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृत्सूर्यांभिनिम्रुक्ते

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति स्प्यमादेते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥

व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥ तेजं पुवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीति। स पृथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्ननीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्में ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टि्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। ब्धान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥ द्रौ वाव पुरुषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति परमस्यां परावति शतेन पाशैः। यो उस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वे। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपंसुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽरर्रः पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृंव्यो वा अरर्रुः। अपंहतोऽरर्रुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥ भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीतिं। तमररुस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंच्यो वा अरर्रुः। अरर्रुस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपंहन्ति। द्वितीय र हरति॥७२॥ अन्तरिक्षादेवैनमपंहन्ति। तृतीयर् हरति। दिव एवैनमपंहन्ति। तूष्णीं चंतुर्थः हंरति। अपंरिमितादेवैनमपंहन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तार्वद्वेवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नो-ऽस्यामपीतिं॥७३॥ कांन्नो दास्यथेति। यावंतस्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते

वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राश्चोंऽजयन्। वसंभिदंक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चंः। आदित्यैरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। देवस्यं सिवतुः स्व इत्यांह् प्रसूंत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथिव्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंकामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदींचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवेनां देवयर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नयिति। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथों मिथुनत्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः पराभवन्ति॥७६॥

मूर्लं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूर्लं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्ठद्रक्षार्स्यनूत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुनुखिनीः प्रजाः स्युः। स्प्येनं छिनत्ति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षार्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयर्जनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पशवः पुरीषम्। प्रजयेवैनं पृशुभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पुतावंती वै पृथिवी। यावंती वेदिः। तस्यां पुतावतं एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥ क्रूरमिंव वा पुतत्करोति। यद्वेदिं करोतिं। धा अंसि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्याह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरप्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरयश्चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्याह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देव्यजंनीं कृत्वा॥८०॥ यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्ये। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्रहिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंद्धि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांये। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोष्ट्रीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्प्यस्य वर्त्मन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। उवाच् हासितो दैवलः। पृतावंतीर्वा अमुष्मिं ह्रोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मौद्धह्वीरासाद्यौः। स्प्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमर्पयित॥८२॥

वज्रो वै स्प्यः। यद्नवर्श्वं धारयेत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयित। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणेव यज्ञस्यं दक्षिण्तो रक्षार्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्प्येन् वा एष वज्रेणास्ये पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोप्धायं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्प्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माब्रिहरुपंसादयति युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुनत्वायं। अथो पुरोरुचंमेवेतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयैत्। अन्यत्रोहृतिपृथादि्धमं प्रतिपादयेत्। प्रजा वै ब्रहिः। अपराध्रुयाद्वरृहिषौ प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपृथेने्धमं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव ब्रहिषौ प्रजानां प्रजनंनमुपेति। दक्षिणमि्ध्मम्। उत्तरं ब्रहिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्रहिः। प्रजा ह्यौत्मन् उत्तरतरा ती्र्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृश्भिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पर्श्वं च॥————[१०]

तृतीर्यस्यां देवस्यांश्वप्र्शुं यो वै पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्त्सोंऽपोऽवंधूतं धृष्टिंदेंवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्प्यमा दंदे वज्रो वै स्प्यो दशं॥१०॥
तृतीर्यस्यां युज्ञस्यानंतिरेकाय पुवित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तर्हित्यै

द्वौ वाव पुर्रुषो यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पश्चाशीतिः॥८५॥ तृतीयंस्यां यजंमानः॥

> हिर्रः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मौष्टि। स्रुवमग्रै। पुमार्सम्वाभ्यः सङ्श्यंति मिथुनुत्वायं। अर्थ जुहूम्। अर्थोपुभृतम्। अर्थ ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥ अन्तरिक्षमुपभृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः सुर्चः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ लोकानं नुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पशुभिः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत वर्षुंकः पर्जन्यः स्यादितिं। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥ वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिं। यदिं

वृष्टिम्व न यच्छात। अवाचानाग्रा हि वृष्टिः। याद कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिष्टात्सम्मृंज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तरतः। एविमव ह्यन्नंमद्यतें। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डमुंत्तमृतः। मूलंन् मूलं प्रतिष्ठित्यै। तस्मांदर्बौ प्राञ्ज्युपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यश्चधस्तांत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृत्स्व्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्रं सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्वर्रं शुभयित। तस्मात्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्षि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविशितं। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवित। य एवं वेदं॥५॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्यंनानि पशवोंऽभि तिष्ठेंयुः। न तत्पशुभ्यः कम्। अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-उन्यत्राहंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता १ हि तस्मै प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यदद्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यतिं। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥ प्रतितिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा एतद्रूपम्। यत्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तुम्बुशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जंरत्कुक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवीं रमन्ते॥९॥ न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्रियो ह वै नंवदावः पंशूनाम्।

तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मदितान्युग्नावेव प्रहंरेत्। युत्रस्मिन्त्सम्मुज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जन्युग्नौ प्रहंरति। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतितिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१०॥

वेदस्याग्र ई सुख्सम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पृशवों रमन्ते हि सीः षद चं॥——[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्त्रीकः। न प्रजाः प्रजांयेरन्। पत्र्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति रुरुयात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्यंषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पित्रया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासाना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनाङ्केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयित। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किनत्यांह। एतद्वै पित्रिये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतम्पंनयित। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्ं। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥ योगक्षेमस्य क्रृप्त्यें। युक्तिङ्कंयाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रुन्थिं ग्रंशाति। आशिषं एवास्यां पिरं गृह्णाति। पुमान् वे ग्रुन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्मिर्यजंमानः॥१४॥

अथों अधों वा एष आत्मनंः। यत्पर्भीं। युज्ञस्य धृत्या अशिथिलम्भावाय। सुप्रज्ञसंस्त्वा व्यश् सुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। युज्ञमेव तिन्मिंथुनीकंरोति। ऊनेऽतिरिक्तन्धीयाता इति प्रजात्ये। मृहीनां पयोऽस्योषंधीनाश रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मिंहिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षींयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥१५॥

क्रोतिं व्रतोपनयंनं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥———[३] घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्यवेक्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। यद्वै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्ये। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्य्वेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्वंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽन् प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्थयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्प्यस्य वर्त्मन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽिसं सुभूर्देवानामित्याह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञंषयज्ञषे भवेत्याह। आशिषंमेवैतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्रांभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्राणापानौ स्थरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे।

त्रिर्यर्जुषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पृषां लोकानामास्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अथाज्यंवतीभ्याम्पः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताहुंः। यथां हु वे योषां सुवर्ण् हिरंण्यं पेश्लं विभ्रंती रूपाण्यास्तै। एवमेता एतर्हीति। आपो वे सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तुन्। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा १ सा। जामि स्यात्। यद्यज्ञुषाऽऽज्यं यज्ञुषाऽप उत्पुनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पुनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिंष्षमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यज्ञमानम्। शुकं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यचिंस्त्वाऽर्चिषीत्याह सर्वत्वायं। पर्याप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईश्चत् आह् शास्ते लोका देवतां भवति पर चं॥———[४]

देवासुराः संयेत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यव तेनावैक्षत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि हवी १ ष्यंभिघारयंति॥ २२॥

अथ् केनाज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषौंऽन्थो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। नि्मील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यंङ्वारयति। आज्यंं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृंह्वाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावुंपुभृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृशुषुं दधाति। चतुर्धुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः पृशवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यज्ञमान्देवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे सुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपुभृतिं। तस्मांदृष्टाशंफा। चृतुर्धुवायांम्। तस्माचतुः

स्तना। गामेव तत्सङ्स्केरोति। सास्मै सङ्स्कृतेषुमूर्जन्दुहे। यज्जुह्वां गृह्वाति। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृति। प्रयाजानूयाजेभ्यस्त सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभि्षारयंति गृहाति ध्रुवाया अत्रेष्यदी प्रयाजान्या जेन्यस्तहे चं॥———[५] आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासां मेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञन्नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रं मवृणीध्वं वृत्रतूर्यं इत्याह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्रं आपो वन्ने। आपो हेन्द्रं विन्नेरे। संज्ञामेवासां मेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनापः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णो उस्याखरेष्ठौ उग्नये त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरिस बर्हिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्र्हिरंसि स्रुग्ध्यस्त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजमानः स्रुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं ल्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ तर्तः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्यै काल आपेः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वधयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धौ। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षति। यत्रैतदेवङ्कियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छ्तेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रुन्थिं वि स्रश्ंसयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मांत्प्राचीन्श्रेरतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुः॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृंह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुख्यै। तस्मिन्प्वित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसन्त्वा स्तृणामीत्याह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्याह। देवेभ्यं एवैनंत्स्वास्स्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा व ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्यः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्यं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो व प्रस्तरः। यजमान एव तत्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्ध्वांऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥ विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपहत्यै। कस्यांश्चिद्मिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पाति॥३५॥ वीतिहों त्रन्त्वा कव इत्याह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयति। द्युमन्तु समिधीमुहीत्यांह समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्याह वृद्धैं। विशो युत्रे स्थ इत्याह। विशां यत्यैं। उदीचीनांग्रे नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूना ५ रुद्राणांमादित्याना ५ सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने प्रस्तर सांदयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥ असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुपुभृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियन्नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्त्सुकृतस्यं लोक इत्याह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सादयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यज्जनियमित्याह। युज्ञाय यजंमानायात्मनें। तेभ्यं पुवाशिष्माशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीणुंर्वीर्यंसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित

षट् चं॥———[६]

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंवि श्रातिमिध्म भवन्ति। एकवि श्राो वै पुरुषः। पुरुषस्यास्ये। पश्चंदशेध्मदारूण्य

दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्यशः संवत्सर औप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। वेदेनोपं वाजयति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजंमान आहवनीयंः। यजंमान एव प्राणन्दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितः मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्तः सं मृङ्घीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्ये। परिधीन्त्सं माँष्टि। पुनात्येवैनान्। त्रिस्तः सं माँष्टि। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अथो एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तत्सं माँष्टि। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयित॥४१॥

तिष्ठंन्न्रन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदेष्वर्युर्य्ज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढौ। वहन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमसि वि प्रंथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजमानं प्रजयां पृश्भिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्नेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं ऋमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमति। विजिंहाथां मा

मा सन्तांप्तमित्याहाहि रसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमसीत्यांह। यज्ञो वे विष्णुः। एतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानामेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥ इन्द्रियमेव यज्ञंमाने दधाति। समारभ्योध्वी अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यज्ञंमानः

सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यज्ञेमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो यज्ञो यज्ञपतिरित्याहानांत्ये। इन्द्रांवान्त्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यज्ञंमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रौ। यज्ञमानुदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यत्सर्इस्पर्शर्यंत्। भ्रातृंब्येऽस्य प्राणन्दंध्यात्। असईस्पर्शयन्नत्या क्रांमति। यजंमान एव प्राणन्दंधाति। पाहि माँ उग्ने दुर्श्वरितादा मा सुचेरिते भजेत्यां हूँ ॥ ४६॥ अग्निर्वाव पवित्रम्। वृज्ञिनमनृतुन्दुश्चेरितम्। ऋजुकुर्म ५ सत्य स्चंरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृंताद्दश्चंरितात्पाति। ऋजुकर्मे सत्ये सुचरिते भजति। तस्मदिवमा शाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आ्घारमाघार्यं ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव य्जस्य शिरः प्रतिं दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सञ्चोतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मा उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणन्दंधाति हि युज्ञो घारयित नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह भुजेत्यांह

धुवैवास्मिन्दधाति त्रीणि च॥———[७] धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्गह्मा। यद्गोताँ। यदंध्वर्युः।

यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्त्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक श्रिश्यित। नास्यं प्राणान्त्सङ्कर्षित। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासींनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। पृशवो वा इडां। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयति। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥ तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विरङ्गुलांवनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घारयति। चृतः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पशूनुपं ह्वयते। पशवो वा इडाँ। तस्मात्साऽन्वारभ्यौ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपहूतः पशुमानसानीत्याह। उप होनो ह्वयंते होता। इडांयै देवतीनामुपहवे। उपहूतः पशुमान्भविति। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगुधेयम्। यामुपह्वयंते। प्राणाना सा। वार्चं चैव प्राणा इश्चावं रुन्धे। अथ वा पुतर्ह्युपंहृतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिंषदों मीमा १ सा। यजमानं देवा अंब्रुवन्। हविर्नो निर्वपेति। नाहमंभागो निर्वप्स्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥ न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीति याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं क्रोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठति। बुर्हिषदं करोति॥५४॥ यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बुर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः

प्रंतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्बांहुः। दक्षिणा वा पृता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा करोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणः। इदः होतुः। इदमध्वर्योः। इदम्ग्रीध् इतिं। यथैवादः सौम्यैं ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधैं प्रथमाया देधाति॥५६॥

अग्निमुंखा ह्यद्धिः। अग्निमुंखामेवर्ष्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विरिम घारयति। षद्मम्पंद्यन्ते। षङ्गा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिहरित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कार्मम्न्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदंध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवावृत्मनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीत्सकृत्संकृ मृड्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं यज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तत्स्वगा कंरोति। स्वस्तिर्मानुषेभ्य इत्याह। आशिषंमेवैतामा शौस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्याह। शुंयुमेव बार्हस्पत्यं भागधेयेन समर्धयति॥५९॥

चुरत्युष्वर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्रहिषदं करोत्यृत्विजो दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति चुत्वारि

अथ सुचावनुष्टुग्भ्यां वाजवतीभ्यां व्यूहति। प्रतिष्ठा वा अंनुष्टुक्। अन्नं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूंहति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींम्पभृतम्। जुनिष्यमांणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोह्यं सपत्नान् यजंमानः। अस्मिँ होके प्रतितिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्तरमंनक्ति।

इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य पृवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानन्तेजंसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिक्तः। वियन्तु वय इत्याहः। वयं पृवैनं कृत्वाः। सुवृगं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायै गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययित। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छ ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावेदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अग्नेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुरेवात्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अग्नेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुरेवात्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परि्षिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥ यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिंवीयमाण इत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सुजातानेवास्मा अनुकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयाता इत्याहानुंख्यात्यै। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य समिष्टि॥६५॥ सुचौ सं प्रस्नावयति। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयति। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजंमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। स्ड्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषान्तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भवति। इन्द्रियं वे त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवेने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसिंत्यै पाहि दुरिष्टी पाहि दुंरद्मन्ये पाहि दुश्चंरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषद्य योनि इ स्वाहेतींध्मसंवृश्चंनान्यन्वाहार्यपचंनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिंरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चंनानि॥६८॥ अतिरिक्ताः फलीकरंणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमास्व रुन्थे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन वेदिं विविदुः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरिति पुरस्तातस्तम्बयुजुषों वेदेन वेदि सम्मार्ध्यनुवित्त्यै॥६९॥ अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनुत्वाय प्रजाँत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दतें प्रजाम्। वेद १ होता-ऽऽहंवनीयांत्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तत्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात त १ सन्तंतमुत्तरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥ तङ्कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा

अध्वर्यः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुक्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्यर्यज्ञं प्रयुक्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुक्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावंरुन्धे पुर्यधंत्था इत्यांह् सिमंष्ट्रे भागुधेयंन्धत्तमित्यांह् वा

इंध्मसं वृश्चनान्यनंवित्त्यै लभते यर्जमानः॥————[९]

यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवताँभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवैनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यङ्कर्मं सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यजमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥ आशिषंमेवेतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततो उनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भेवति। अस्मिल्लोके प्रतितिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिथुनम्। आपो रेतः प्रजनंनम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥ प्रजाः प्रजनयन्। यद्वे यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यते। ब्रह्मणा वे तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतरिह् योक्नं ब्रह्मणा। आदायेनत्पत्नी सहाप उपंगद्वीते शान्त्यै। अञ्चलो पूर्णपात्रमा

आदायेन्त्पत्नीं सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्चलौ पूर्णपात्रमा नंयति। रतं पुवास्यां प्रजान्दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिंष्ठति॥७५॥ स्वितृप्रंम्तो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिश्रन्षष्ट एकं च॥———[१०]

परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विष्टि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थाविम्त उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मंणा सःशितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नंद ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्यंन हिवणां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्राऽतिं रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पर्मान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। श्रुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकभ्यो निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांह स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तभ्यायेत्। श्रुचैवैनंमर्पयित॥७९॥

प्रत्युंष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपों देवीरिग्निना धिष्णिया अथु सुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥

प्रत्युष्टमर्यज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकाले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युंष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्ष्त्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुश्र्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय माग्धम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नृर्मायं रेभम्। निरंष्ठाये भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायें रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यंवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सन्धर्यं जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्। आर्त्यं परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। प्वित्रांय

भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदुर्शम्। निष्कृत्यै पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्ट्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गृन्धर्वाप्सराभ्यो व्रात्यम्। सप्देवजनभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेँभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पि्शाचेभ्यों बिदलका्रम्। यातुधानेँभ्यः कण्टकका्रम्॥५॥

उत्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्नामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमीय बधिरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादांयै प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यै स्तेनहृंदयम्। वैरंहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्ये क्ष्तारम्ं। औपंद्रष्टाय सङ्गृहीतारम्ं। बलांयानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पत्पूलीम्। प्रकामायं रजियत्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकार्य पेशितारम्ँ। मृनुष्यलोकार्य प्रकरितारम्ँ। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्ँ। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्ँ। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्ँ। वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्ँ॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायांश्वपम्। पृष्ट्रौ गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्त्रधम्। अध्यक्षायानुक्ष्तारम्॥९॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥ यमयं यमस्म्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवत्सरायं

यम्य यम्सूम्। अथव्भ्याऽवताकाम्। स्वृत्स्राय पर्यारिणीम्। परिवृत्सरायाविजाताम्। इदावृत्सरायापस्कद्वंरीम् इद्वत्सरायातीत्वंवरीम्। वृत्सराय विजंजराम्। सुर्वृन्त्सराय पिलंक्रीम्। वनाय वनुपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥ सरीभ्यो धैव्रम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्॥ उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्। नुड्वलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनैभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सानुभयो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवृध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्ख्ध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥ बीभृत्सायं पौल्कसम्। भूत्यं जागरणम्। अभूत्ये स्वपनम्। तुलायं वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यं जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगुल्भम्। स्थ्शूरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुःश्चलूमा लंभते। वीणावादङ्गणंकङ्गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमण्यं पाणिसङ्घातन्नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आनुन्दायं तलुवम्॥१५॥

अक्षुराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया

आदिनवद्र्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पि्शाचेभ्यः सैलुगम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुचूष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिण्मा लंभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवें चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शन्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रिये कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥ वाचे पुरुषमा लंभते। प्राणमंपानळ्याँनमुंदानर संमानन्तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लंभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहस्वमितदीर्घम्। अतिकृष्यमत्यश्रेसलम्। अतिशुक्रुमितिकृष्णम्। अतिश्रिक्षण्-मितिलोमशम्। अतिकिरिट्मितिदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मितिमेषि आशायै जामिम्। प्रतीक्षायै कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय सुन्धयें नुदीभ्यं उत्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मृन्यवें युग्यैं

दर्शदश् सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांयै बीभृत्सायै दर्शदश् हसाय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश् भूम्यै दर्श वाचे षडथ् नवैकान्नविर्शितिः॥१९॥

ब्रह्मणे युम्यैं नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपंद्ये। ऋतं प्रपंद्ये। अमृतं प्रपंद्ये। प्रजापंतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपंद्ये। इदम्हं पंश्चद्येन वज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूभ्वः स्वंः। हिम्॥१॥

सृत्यं दर्श॥———[१]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। हविष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुम्रयुः। अग्र आयांहि वीतयें। गृणानो हव्यदांतये। नि होतां सत्सि ब्रहिषिं। तन्त्वां समिद्भिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥ अच्छां देव विवाससि। बृहदंग्ने सुवीर्यम्ं। ईडेन्यों नमस्यंस्तिरः। तमा रसि दर्शतः। समग्निरिध्यते वृषां। वृषां अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर हविष्मंन्त ईडते। वृषंणन्त्वा वयं वृषन्ं। वृषांणः समिधीमहि॥३॥ अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेंदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक

ईड्यंः। शोचिष्कंशस्तमींमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्वर हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व हं व्यवाहं नम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्रे। त्वां वंर्धन्ति मतिभिवसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषणनानि सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

श्रुवाय्यंमिधीमृह्यसिं सप्त चं॥= <del>----</del>[२] अग्ने महा अंसि ब्राह्मण भारत। असावसौं। देवेद्धो मन्विंद्धः। ऋषिष्टुतो विप्रांनुमदितः। कविशस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। रथीरंध्वराणाम्। अतूर्तो होतां।

तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहुर्देवानांम्॥५॥

चमसो देवपानः। अरा इंवाग्ने नेमिर्देवा इस्त्वं पंरिभूरंसि। आ वेह देवान् यर्जमानाय। अग्निमंग्न आवेह। सोममावेह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। मुहेन्द्रमावंह। देवार आँज्यपार आवंह। अग्नि॰ होत्रायावंह। स्वं मंहिमानमा वंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वंह षट् चं॥=

अग्निरहोता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो स्रुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा १ ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधो अग्र आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपादम् आज्यंस्य

वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहैंन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवाः आज्यपान्। स्वाहाऽग्निः होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

इन्द्राग्नी पश्चं च॥————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययाः। सिर्मिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वश् सोमासि सत्पतिः। त्वश् राजोत वृत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मना। शुम्भांनस्तुनुवृश् स्वाम्। क्विविंप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्मिष्टां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु॥९॥

स्वार पर चा----[६] अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपार

रेता १ सि जिन्वति। भुवों यज्ञस्य रजंसश्च नृता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानंन्दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥ वय स्यांम पतंयो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भुवत्स भुवत्पुनंमिधः। स द्यामौर्णोदन्तिरिक्षः स सुवंः। स विश्वा भुवों अभवत्स आभवत्। अग्नीषोमा सवेदसा। सहूती वनतङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम सक्रंतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् श्वतं गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वांश्वेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुंरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्र्व्यंस्य भूरैंः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि र्यिम्॥१२॥ स्जित्वांन सदासहम्ं। वर्षिष्ठमूत्रयं भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यों वृष्टिमा ईव। स्तोमैंर्वत्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रों नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा उश्तो यविष्ठ। विद्वा ऋतू १२ ऋतू पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व होतॄणाम्स्यायंजिष्ठः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांडग्निर्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्वोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांडुग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडुग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेरहोतुंः प्रिया धार्मानि। यक्ष्तत्स्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्ट्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्वधृत्त्रः र्यिं चर्षिण्प्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥———[७]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं

यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यजंमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिवष्करंण उपहूतः। दिव्ये धामृत्रुपंहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मृत्रुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहृतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्यतामुपंहृत हिविष्करंण उपंहृतश्रुत्वारं च॥———[८] देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराश १ संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायुजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान् देवानयांट। या १ अपिप्रेः। ये तें होत्रे अमंत्सत। ता १ संसनुषी १ होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पश्चं च॥———[९]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आध्मं सूक्तवाकम्। उत नमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वः सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृंथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौं मयोभवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चर्णा चं स्वधिचर्णा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत॥२१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोँऽऋत। अग्निरहोत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधुद्धोत्रांयान्देवङ्गमायाँम्। आशाँस्तेऽयं यर्जमानोऽसौ। आयुरा शाँस्ते। सुप्रजास्त्वमा शाँस्ते। सजातवनस्यामा शाँस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यन्थामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिविषा-ऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुंषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंवामस्येदं चं। नमों देवेभ्यंः॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिद॰ ह्विरंजुषत महेन्द्र इद॰ ह्विरंजुषत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं

च् त्रीणि च॥——[१०]

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वक्षिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शश्चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥———[११]

आप्यांयस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियन्तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नींरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्रीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनामुष्टी चं॥——[१२]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंश्चीं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुत्रे। उपंहूतेयं यज्ञमाना। इन्द्राणीवां-ऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हविष्करंण उपंहूता। दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षंभा ह्वयता्मुपंहूत र सुपुत्रा षद्वं॥-----[१३]

स्तयं प्रवोऽग्नें म्हानृग्निर्होतां स्मिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतं देवं ब्र्हिर्दिं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यांयस्वोपंहूतन्त्रयोंदश॥१३॥

स्त्यं व्यक्ष स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिष्शत्॥३०॥

स्त्यमुपंहूता॥

### हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धत्तात्। यद्घा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। सिमंद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तौत्। ब्रह्मं वन्वानो अजर स्वीरम्॥१॥ आरे अस्मदमितें बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व महते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वा वार्जस्य सिता यद्श्रिभिः। वाघद्विविह्वयांमहे। ऊर्ध्वा नः पाह्य हिसो ने कतुनां। विश्व सम्वित्रणन्दह। कृधी ने ऊर्ध्वा च रथांय

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्पर्य आ विद्रथे वर्धमानः। पुनिन्ते धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिवीत् आगात्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तन्धीरांसः क्वय उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतनिर्णिख्स्वांहुतः।

जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवं:॥२॥

अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाट्। त॰ स्वाधों यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचं ऋर्ग्निमृतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस्रुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीर्न्दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥—— होतां यक्षदग्नि समिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्ष्तनूनपात्मिदितेर्गर्भं भुवनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्पथो अनक्तु वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्रराश १ सं नृशस्त्रं नृ १: प्रेणेत्रम्। गोभिर्वपावान्त्स्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथमया वा हिरंण्यैश्चन्द्री वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निमिड ईंडितो देवो देवा अविक्षदूतो हं व्यवाडमूरः। उपेमं युज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता ५ स्वासस्थं देवेभ्यः। एमेनदद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्याज्यंस्य होत्र्यज्॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृ शः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। सङ्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करिद्वा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं युज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांरमचिष्टुमपांक र रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकामकर्शन १ सुपोषः पोषेः स्यात्सुवीरों वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावसक्षिद्धयो जोष्टार १ शुशमुन्नरः। स्वदात्स्विधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्घेत्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षद्ग्रिः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदेसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहा स्वाहांकृतीनाः स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवार आंज्यपान्त्स्वाहाऽग्निर

होत्राञ्ज्षंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

यज्ञैः॥६॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं स्वीरों वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं च्त्वारिं च
(अग्निन्तनूनपांतृत्रराशर्श्संमृग्निम्ड ईडितो ब्रहिर्दुरं उषासानका देव्यां तिस्रस्वष्टांर्
वनस्पतिमृग्निम्। पश्च वेत्वेको वियन्तु द्विवीतामेको वियन्तु द्विवेत्वेको वियन्तु होत्यंजं॥)॥[२]
सिमिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः।
आ च वहं मित्रमहश्चिकित्वान्। त्वन्दूतः कृविरेसि प्रचेताः।
तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्त्स्वंदया सुजिह्व।
मन्मांनि धीभिरुत यृज्ञमृन्धन्। देवृत्रा चं कृणुह्यध्वरन्नंः।
नर्शिश्चस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं

ते सुऋतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यश्चे वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होतां। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदित्रये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ञते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्ये। अधि श्रिय रंशुक्रिपश्नदधांने। दैव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमांना यज्ञं मनुषो यजंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारंती तूयंमेतु। इडां मनुष्वदिहं चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप श्राद्भवनानि विश्वां। तम्द्य होतरिषितो यजीयान्। देवन्त्वष्टांरिमहं यंक्षि विद्वान्॥९॥ उपावंसृजत्मन्यां सम्अन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १षिं। वनस्पतिः शिमता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुंना घृतेनं। स्वो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युक्तैः स्योनं यर्जध्यै विद्वान्धौ चं॥——[३]
अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं
यिज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु
प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निरह्व्यान्यंक्रमीत्।

# दधद्रलांनि दाशुषें॥११॥

अर्जेद्गिः। असंनुद्वाज्ञि। देवो देवेभ्यों ह्व्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कर्ल्पमानः। युज्ञस्यायुंः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मेध्या

दुरंः। आशासाना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरता स्तृणीत बुर्हिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यश्रक्षंगमयतात्। वातं प्राणम्-ववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

शुला दोषणीं। कुश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं।

क्वषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तौ। षड्विरेशितरस्य वङ्क्रीयः। ता अनुष्ठ्योच्यावयतात्। गात्रेङ्गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवङ्कनतात्। अस्रा रक्षः सरसृजतात्। विनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उरूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिंगो शमीष्वम्। सुशमिं शमीष्वम्। शुमीष्वमंधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना शमितारौं। ताविमं पृशु श्रंपयतां प्रविद्वा श्मौं। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

धृत्ताद्वाहू मा रांविष्ट् तथांतथा॥———[६]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवप्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्चोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्ं। तुभ्य ई स्तोका घृंतश्चर्तः। अग्ने विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिम्ध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ई श्लोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र तें व्यन्दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्दंवशोविंहि॥१८॥

देववींतय उद्भृंतुत्रीणि च॥-----[७]

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकंविभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता हित्रां होत्र्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वान्धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरन्दूत्यांय। हिवध्मन्तः सदिमन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहान्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टं र्यिं यशसं पूर्वभाजम्।

इन्द्रौग्नी वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देणौः। माच्छौदा रुश्मी १रिति नार्धमानाः। पितृणा १ शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्याङ्कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीधिषणांया उपस्थै। अग्नि संदीति स्पुदर्शं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वान्दूतमंर्ति १ हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मुनोता। अस्या धियो अभंवो दस्महोता। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्यै।

अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तन्त्वा नरंः प्रथमन्देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिञ्जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशन्तम्भि देर्श्तम्बृहन्तम्। वपावन्तं विश्वहां दीदिवा स्मम्। पदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपन्नमृक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यज्ञियांनि। भृद्रायान्ते रणयन्त् सन्दंष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्वस् रायं उभयांसो

जनानाम्। त्वन्राता तंरणे चेत्योभूः। पिता माता सदमिन्मानुषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तन्त्वां वयन्दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तन्त्वां वय स्पूधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशों अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृषभं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतींषणि मि्षयंन्तं पाव्कम्। राजंन्तमृग्निं यंज्वतः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंद्भिमधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं पिर् वेदा नमोंभिः। विश्वेत्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विंधेम। नमोंभिरग्ने सुमिधोत ह्व्यैः। वेदींसूनो सहसो गी्भिरुक्थैः। आ ते भुद्रायाः सुमृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिर्वाजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितृरं वि भाहि। नृवद्वसो सदमिद्धैह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौंश्रवसानिं सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुताते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधते राजनित्वे॥२६॥

जागृवाश्सो अनुंग्मन्मानुंषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥———[१०]

आभंरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत् श्र्मांभिः। इमे नु ते रृश्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न् आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांमृद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषोंभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः श्वातंत्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उत्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता हिवेः। होत्र्यजं। देवेभ्यो वनस्पते ह्वी हिर्णयपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं विक्षे पृथिभी रजिंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पतिंमभिहि। पिष्टतंमया रभिष्ठया रशनयाधित। यत्रैंन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। यत्रु वन्स्पतेः प्रिया पाथा १सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया १सिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजं। पिप्रीहि देवा उंशतो यंविष्ठ। विद्वा ऋतू र्ऋतू एकं यजेह। ये देव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व होतृंणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि स्वंष्ट्रकृतम्। अयांड्रिग्निरंन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्वनस्पतेः प्रिया पाथा सि। अयाङ्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्र्तस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होतर्यजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथारंसि सप्त चं॥———[११]

उपों ह् यद्विदथं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्टान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारं मृमृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयां डिग्निरिन्द्राग्नियोश्छ गंस्य ह्विषेः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्गेवानां माज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व १ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥——[१२]

देवं ब्रहिः सुंदेवं देवैः स्यात्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः प्रिश्रेयेतात्यन्यात्राया ब्रहिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वत्स ईमेनास्तरुण आमिमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानकाऽद्यास्मिन्यज्ञे प्रयत्यंह्वेतामिपं नूनन्दैवीर्विशः प्रायांसिष्टार् सुप्रीते

सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवी जोष्ट्री वसंधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा ५ सि यूयव्दान्यावंक्षद्वसु वार्याणि यजमानाय वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजी देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्नयावंक्षत्सिग्ध् सपीतिम्न्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश र सावाभर द्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सर्खती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षत्सरंखतीम । रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्संस्त्रिशीर्षा षंडुक्षः शतमिदेन १शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृहस्पतिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनंवसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो वनस्पतिंर्वर्षप्रांवा घृतनिंणिंग्द्यामग्रेणास्पृंक्षुदान्तरिंक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हिस्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजी। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-

च्युतित्रकाम्धरंणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बर्ही श्ष्यिमि ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्सुद्रविणा मन्द्रः कृविः सृत्यमंन्माऽऽयजी होता होतुर्होतुरायंजीयानग्ने यान्देवानयाड्या अपिप्रेर्ये ते होत्रे अमंत्सत् ताश् संसनुषीश होत्रान्देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्टकृ चाग्ने होताऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

यजैकं च॥₌

१३1

देवं ब्र्हिः। व्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहंती। वसुवनं वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥ देवी देवा देव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी स्वया होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराश्रभः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥ वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमन्मायजी होता। होतुर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेत्सत। ता र संसुनुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृ चाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

बीतां बेत्वभूरेकं च॥----[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशंं बृध्नन्निन्द्राग्निभ्याञ्छागं सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवींवृधेतां पुरोडाशेन त्वाम् द्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥३७॥

अ्ग्रिम्द्यैकम्॥———[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्षत्सिमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैव्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीर्भिस्त्व इह्याभंरतमुपोंह्

यद्देवं ब्र्हिः सुंदेवं देवं ब्र्हिर्ग्निम्द्य पश्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्मिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनंः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥सप्तमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषौंऽग्नौ कामान्प्रवेशयित। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनिंष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनङ्कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एन्ङ्कामा अनु प्रयाँन्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवित। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योँऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥ मनंसैव यज्ञश् सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। तश् सम्भरेत्। इदन्त एकं प्र उत् एकम्॥३॥

तृतीयेंन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये

देवानां पर्मे ज्नित्र इति। ब्रह्मंणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायेत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं प्शून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषं वृत्सा अपाकृता धयंन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयांम्ना ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुर्न्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स पुवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृत्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयित। ये यजंमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायन्दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय व्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं एवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवंरुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृत्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजमानस्य सायं च प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् हविरार्तिमार्च्छति॥७॥

ऐन्द्रं पश्चेशरावमोदनित्रर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं येजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभयीः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे। अथोत्तरंस्मै हृविषं वत्सानपाकुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्थो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्थ एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

द्धाति यज्ञ उत् एक्न्थयंन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्यपार्कुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तुरामोषंधीरन्यतुरानुभयांनुर्धो वै॥)॥———[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्यय्चां वंल्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयूर्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिंष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्यात्मञ्जायेत। किलासों वास्यादेर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरनिंमिषाऽभि चष्टे। सत्यायं ह्व्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहुंत्या हृतायामुत्तराऽऽहुं तिः स्कन्देंत्। द्विपाद्धिः पृशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यदुत्तरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥ चतुंष्पाद्धिः पृशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययूर्चा स्मिधमाधायं। तूष्णीमेव पुनंजुंहुयात्। वनस्पतिनेव यज्ञस्यार्ताश्चानांर्ताश्चाहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्वा पुनंरहोत्व्यम्। सेव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गार्ः स्कन्देत्। अध्वर्यवे च यजमानाय चाक इस्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रें च पत्निये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुद ईः। अग्नीधें च प्रशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौस्य प्रशून्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्रियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंम्ना यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीर्मुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्दैत्। तं प्रहंरत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्त्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहाम। गोपोषं नो वीरपोषं चं युच्छेति। ब्रह्मणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नृभि जुंहुयात्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मेध्यमेन् यदवंबृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरो यद्वेक्षिणा

यत्प्रत्यग्यदुदर्ङ्॥॥——[२]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भविति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भेवति॥१८॥

ब्राह्मणन्तु वंस्त्यैं नापं रुन्ध्यात्। यद्वाँह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तम्भाग्धेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान््वे दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भा स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्रभीन्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्मौद्दर्भा नाध्यांसितव्याः। यदि दर्भान्न विन्देत्। अप्सु होतव्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतास्वेवास्याग्निहोत्र ध हुतं भवति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापंः परिचक्षीत॥२०॥ यामेवाप्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न पंरिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तुनुवौ स॰ सृंज्येते। यस्याहिताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सर्मुज्यन्तै। अग्नये विविचये पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यांश्चैवास्यांमेध्यां चं तुनुवौ व्यावर्तयति। अग्नर्ये व्रतपंतये पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंति इस्वेनं भागधेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लेम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड्रं स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिन्माहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यत्स्रवैत्। रेतौऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंक्रिरत्यांह। रेते एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र् इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामव चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्रावेवास्यांग्रिहोत्र हुतं भवित भवत्यासीत पिर्चक्षीत लम्भयित दधित देवानां बृह्स्पितिः पश्चं च (वि वे यद्यन्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बेंऽप्स् होत्व्यम्॥ )॥—[३] याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टात्स्वतंश्च याः। ताभी रिश्मपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनसस्पितना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्रयुज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायुत्रिया सोम् आभृतः॥२४॥

सोम्पीथाय सन्नियतुम्। वकंलमन्तरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वत्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहैं। आदित्यअयोतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवताभ्यः। वसूनुद्रानांदित्यान्। इन्द्रंण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चदशीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥ अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास १ हविरिदमेषां मियं। आमावास्य १ हिवरिदमेषां मियं। अन्तराऽग्नी प्शवंः। देवस १ सदमा गंमन्। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिमभि संवसानाः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि॥२७॥ स्व आयतंने मनीषयां। इह पशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं

गृहपंतिमभि संबसानाः। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने

मनीषयाँ। अयं पिंतृणामृग्निः। अवाँह्वव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं केरत्। अजस्त्रन्त्वाः संभापालाः॥२८॥

विज्यभांग्रं सिमंन्धताम्। अग्नं दीदांय मे सभ्य। विजित्ये श्रारदंः श्तम्। अन्नंमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रारदंः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदम्हम्ग्निज्येष्ठभ्यः। वस्भयो युज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स स्रंज। अग्ने व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्मे राध्यताम्। वायौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जम्भि सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशुष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्चस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भंरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी १ स्तिस्रः समिधंः। युज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणुं धृष्टिम्। सं भंरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्रियुगं पुरा। तासां पर्वं राध्यासम्। पुरिस्तरमाहरन्ं। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥ ३२॥ आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवानि शरदेः शतम्। अपरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगौङ्कतुमच्चनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भंवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणींमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्त्सींदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृतमम्। पयों हृव्यं करोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वुशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रं हव्यशोधंने। प्वित्रं स्थो वैष्णवी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥ अयं प्राणश्चांपानश्चं। यज्ञंमान्मिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतांरौ। प्वित्रं हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र ज्ञुंरिमधानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अप्रंस्न र स्वाय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुिमः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि य्ज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय ह्विः कृण्वन्तः। शिवः श्रग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्यायुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितंनीताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवत्रोत्पूंताः। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिः। गान्दोहपिवते रज्जम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। पृता आ चंरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुपजायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजामि। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं युज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजमानाय द्रविणन्दधातु॥३८॥

उत्सन्दुहन्ति कुलश्श्रतुंर्बिलम्। इडाँ देवीम्मधुंमती १ सुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमानममृत्त्वे देधातु। कामधुक्षः प्रणौं ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानाम्। मनुष्यांणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हृव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृत्सेभ्यों मनुष्यैभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना रे हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णो ह्व्य र हि रक्षंसि। उभावृग्गी उपस्तृणते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यङ्गोपंतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृह्णामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदिंत्य व्रतपते सुसम्भृतां

मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनेर्गच्छतु पुशून् (याः पुरस्तांदिमामूर्जीमिह प्रजा

इह पुशवोऽयं पिंतृणामृग्निः। )॥———[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदम्में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमृह सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपन्त्वां वसुविदम्। पृशूनान्तेजंसा। अग्नये जुष्टंमिभ घारयामि। स्योनन्ते सदंनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्त्सीदामृते प्रतितिष्ठ। व्रीहीणाम्मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथसुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उत्स्रांति जिन्ता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वित्रस्थे। आत्मन्वान्त्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गच्छ सुवेर्विन्द यजमानाय मह्यम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्ट्रं स्वन्दत्तम्। स्वं पूर्तर् स्वरं श्रान्तम्। स्वरं हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्योः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धरेमनुं षिञ्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्विष्टमिद हिवः। मनुना दृष्टाङ्घृतपंदीम्। मित्रावर्रुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्ये-कृतोमुंखाम्॥४७॥

इडे भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पन्ताम्मे दिशं:॥४८॥

दैवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवृत्सरो में कल्पताम्। क्रृप्तिंरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥ विधेमं ह्विषां वयम्। भर्जतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त। निर्मागं भंजामः। अपस्यिन्व। ओषंधीर्जिन्व। दिपात्पंदि।

विधेमं ह्विषां व्यम्। भर्जतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त।
निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि।
चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेर्रय। ब्राह्मणानांमिद हिवः॥५०॥
सोम्याना सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसुंभिः सम्मुरुद्धिः। समिन्द्रेण् विश्वंभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभी गच्छत् यत्स्वाहां। इन्द्राणीवांऽविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥
उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्।

उपनिषदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। संजानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिर्जरमा रंभेताम्। दशंते तनुवीं यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यर्जमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यर्जमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भागः शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतमः हहो। अहं देवानाः सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम्ष्टं न मिथुंर्भवाति। अहन्नांरिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदांभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयंम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स् सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहाँ। अमावास्यां सुभगां सुशेवाँ। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्याये स्वाहाँ। अभि स्तृणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिम्मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजमानस्य ब्रध्ने॥५४॥

अभीत्वेर्षे करोमि क्रमीत्प्ताऽऽत्मनं एक्तो मुंखां मे दिशोऽध्यंक्षेभ्यो ह्विर्गार्हपत्या कल्पय्त्रशंस्तिः सा नी दोहतार सुवीर्यरं सह चं॥————[५] परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजीमानं भुनक्ता। अपार रस् ओषंधीनार सुवर्णः। निष्का इमे यर्जमानस्य सन्तु कामदुधाः। अमुत्रामुष्मिं ह्लोके। भूपंते भुवनपते। महुतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणंन्त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यङ्करिष्यामि। देवं सिवतरेतन्त्वां वृणते। बृह्स्पितिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रये। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टु ज्ञगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टु क्पूङ्की। पृङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्यांणाम्। बृहंस्पते यज्ञङ्गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तप्स्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित् मानुषीषु। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः।

घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं। मुर्मृज्यमांना मह्ते सौभंगाय। मह्यंन्धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिंभूंत्वा मंहिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पया रेसि। युज्ञियां युज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वंरीश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन हृदयेनेष्णता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका व्युनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शुग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पृष्टिं मे पिन्वस्व। आयुर्त्राद्यम्मे पिन्वस्व। प्रजां पृशून्में पिन्वस्व॥६०॥ अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीन्दंधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषा रेसि निरितो नुंदातै। विच्छिनद्मि विधृंतीभ्यार सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विधंमाम्येनान्। अहरू स्वानांमृत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमांने अरांतिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी संकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजाम्मयि धारयतम्। पश्नमयि धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृता। धृता प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्तस्रुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृं व्यान् ये चं जिन् ष्यमाणाः। दोहैं यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मत्सपत्नाः। यो मां वाचा मनंसा दुर्मरायुः। हृदाऽरातीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥ इदमंस्य चित्तमधंरन्ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मत्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्तरः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदंः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सींद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मत्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उत्संः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतंः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रयताम्। शतम्मे सन्त्वाशिषः। सहस्रम्मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापतिरसि सर्वतंः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय प्शवोऽचिकित्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्। शृतं मिये श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चद्वलुमिन्द्रैं प्रजापितिः। इदन्तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपरिष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिधे मान्धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वंविन्दत्। गुहां स्तीङ्गहंने गह्वंरेषु। स विन्दतु यजमानाय लोकम्। अच्छिंद्रं युज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यजुंषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्त्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांतै। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय् मह्मम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवंनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मान्द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्ँ। विच्छिन्नं यज्ञ समिमन्दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतामिमन्नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चामिं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि र्वृश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मान्द्वेष्टिं जातवेदः। यश्चाहन्द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। या॰ श्चाहन्द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा ससृवा॰सम्॥७१॥

वाजं जिगिवाश्सम्। वाजिनं वाजितम्। वाजितियायै सम्मांजिम्। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्व्रहः शृतश् ह्विः। इध्मः पंरिधयः स्रुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुंः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सम्मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥ दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्यत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तश्च शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचत्। ओषंधे मो अहश् श्रुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्रिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फुलीक्रियमांणानाम्। यो न्युङ्गो अंवृशिष्यंते। रक्षंसां भागधेयम्। आपुस्तत्प्र वंहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच शूर्णै। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालै। अवप्रुषो विप्रुषः संयंजामि। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्ति बह्धीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। स्पल्लौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्रोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तंरां दिवम्ं। हुद्रोगम्ममं सूर्य। हुरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्ं। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हिर्माणं नि देध्मसि। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तं ममं रन्थयन्। मो अहन्द्विषतो रेधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्रं। सर्वं पाप समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परांपत। शुरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषाङ्कश्चनोच्छिंषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमें पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्रेऽन्तरिक्षेऽहम्पत्तेर भूयासं प्रजापंतिरसि स्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्ञजितं पृथिवी ह्रंयतामृग्निराग्नींध्राद्वश्चतः सस्वारसरं हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दप्पस्यहतामृष्टौ च॥———[६] सक्षेदं पंश्य। विधेतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पनिष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरिष्ठो अक्षिभिर्विभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रृद्धां मनंसा। दीक्षान्तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजंमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाकर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर पृङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥ तान्ते युनज्मि। आऽहन्दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋत॰ सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चं मे सत्यश्चांभूताम्। ज्योतिरभूव॰ सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्रध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षन्दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयां त्वा दीक्षयां दीक्षयां दीक्षयां दीक्षयां दीक्षयां दीक्ष्यां दीक्यां दीक्ष्यां दीक्यां दीक्ष्यां दीक्यां दिक्यां दिक्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्ष्यां दीक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्यां दिक्य

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां

दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयाँ प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययाँ प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षताम्। अन्तरिक्षन्त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षताम्। दीक्षताम्॥ दीक्षताम्॥ ८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। सामांनि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

अपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्वं सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षं दक्षंपितेह सींद। देवाना रं सुम्नो महते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविशस्व। पितेवैधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विश। सृत्यम्मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु।

स्त्यमंस्मि। अहन्त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं हव्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जातवेदः। आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तात्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यर्जमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। चुत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। पश्चे पशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। सप्त सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। सर्खायः सप्तपंदा अभूम। सख्यन्ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्यात्ते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पादेः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरिक्षं पादेः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादेः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादेः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पादेः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जन्धुक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानान्धेनु सुदुघामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमों अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेद्मित्यं। वसुंमती १ रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नामां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविधे यो निविष्टो। तयोदिवानामधि भागधेयम्। अप जन्यंम्भयन्नंद। अपं चुक्राणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्त्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधात्॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर १ हंसः पृद्धिः प्रपंद्ये दीक्षा ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योषंघयो दीक्षा द्यौक्षत्यां दीक्षत्यां विश्वः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं चा——[७] यदस्य पारे रजंसः। शुक्रञ्चोतिरजांयत। तन्नः पर्षदिति द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहां। यस्माद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभेयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषे। यस्माद्भीषा न्यषदः। ततों नो अभेयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उदुंस्र तिष्ठ प्रतितिष्ठ मारिषः। मेमं युज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यर्जमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेंपिष्ठाः पुलायिष्ठाः सुमज्ञाँस्थाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषे॥९४॥ य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहां। न वा उंवेतन्त्रियसे। आशांनान्त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौ। इन्द्रौग्नी चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहुंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहुंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्नी अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानन्तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। सरसृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृषि मीढ्षेऽहंतस्य च सप्त चं॥———[८]
अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रेण् प्रेषिता उपं। वायुष्टं
अस्त्व १ श्राभूः। मित्रस्ते अस्त्व १ श्राभूः। वर्रुणस्ते
अस्त्व १ श्राभूः। अपांक्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य
गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानाङ्ककुभः प्रयुतो नपातारः।

व्युनेन्द्र ई ह्वयत। घोषेणामीवा ४ श्वातयत॥ ९६॥

युक्ताः स्थ् वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्मात्स्थस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसम्म आसुंषवुः। स्मरे रक्षाः स्यविषषुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञ्र चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽसि शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यम्मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय् त्यदिन्द्रियम्महृत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भांतु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। युज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥ तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्र तें महे विदथें शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्र तें वन्वे। वनुषों हर्यतम्मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चार् सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिंवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिम्माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्गर्रणश्च राजाँ। तौ ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं पृतम्। तयोरन्नं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकंर्मा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानंम्मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित तः हुवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बलिना चरांमि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनुणा अस्मिन्नंनुणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अंनुणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्यथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमून श्रेयोऽवसानमा गंन्म।
शिव नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदर्श्वंवदूर्जस्वत्।
सुवीरां वीरैरन् सश्चरेम। अर्कः पृवित्र रजंसो विमानः।
पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा
संविदाने। घृतं दुहाते अमृतं प्रपीने। पृवित्रंमको रजंसो
विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशो
महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चात्यत् श्रीणीता् सत्यमाहुरंशीमहि गुणे कुंरु विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रजंसो विमानुस्नीणिं

उदंस्ताम्प्सीत्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानमित्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तम्मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहांऽन्तरिक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्यांय च। अस्मास्वंष्रिया यूयन्दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रप्सो यस्तं

उद्र्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वम्भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्ये स्वाहां। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्श्स निविदो यज्र्र्श्ष। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पृष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नो यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिंक्षत्रे प्रतिंतिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिंतिष्ठाम् गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिंतिष्ठाम् भव्यैं। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिंश्रितम्। दिवे चं विश्वकंर्मणे। पृथिव्ये चांकर्न्नमः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो यज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमहि। ये देवा येषांमिदम्भांग्धेयंम्ब्भूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्भिर्म्निर्मस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंर्प्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपींषते। विश्वांनि विदुषे भर। अरङ्गमाय जग्मवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रों-ऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मध्मतः। उपहूत्स्योपंहूतो भक्षयामि॥११०॥

बुद्ध इंन्ड्रियेण गा मृतिरंख अंग्रिशी च॥——[१०] ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञाना रं ह्विषामा ज्यंस्य। अतिरिक्त इर्मणो यर्च ही नम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृत्ययन्। स्वाहां कृता ऽऽहुं तिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्त इर्मणो यर्च ही नम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृत्ययन्। स्वाहां कृता ऽऽहुं तिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतन्देवहेडंनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मेरुतस्तिन्निधेतन। तृतम्म आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय १ संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयन्तमंस्स्परि। उद्वत्यश्चित्रम्॥११२॥

इमम्में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमभीवेभ्यः परिधिन्दंधामि। मैषान्नंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतभीवन्तु श्रदः पुरूचीः। तिरो मृत्युन्दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनेष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषजन्दुरिष्टे स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहाँ। दौराँध्ये स्वाहा देवींभ्यस्त्नूभ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋख्यै स्वाहा समृंख्यै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्रिं तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधो जिहे। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा

रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनाँज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व हि वेर्त्थं यथातथम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकुत्रा मनंसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा १ ऋतुशो यंजाति॥११५॥ देवा १ श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पश्चं च॥————[११] यद्वेवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्रत। ऋतस्यर्तेन मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचा-ऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। कुरोतु मामनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन त्व संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रता १ हंसः। यदन्यकृतमारिम। सजातश १ सादुत वां जामिशुरुसात्। ज्यायंसः शरसांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वमस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्भांम्॥११७॥ शिश्ञैर्यदर्नृतश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः।

यद्धस्तांभ्याश्रकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुमुंप्जिघ्नंमानः। दूरेप्थ्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानि। अदीव्यन्नृणं यद्हश्रकारं। यद्वादांस्यन्त्सञ्जगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयि माता गर्भे स्ति॥११८॥ एनंश्रकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्तितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनुणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूतंनं यत्पुंराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। अतिं क्रामामि दुरितं यदेनंः। जहांमि रिप्रं पंरमे स्थस्थैं। यत्र यन्तिं सुकृतो नापि दुष्कृतंः। तमा रोहामि सुकृतान्नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनंः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनंसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्र मुंश्चतु। दुरिता यानि चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अप्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तंन्दुरितश्चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमम्मे वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवद्धारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यद्देवा देवां ऋतेनं सजातशर्साद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींच्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरंक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अप्स जाता यदापं इमम्में वरुण तत्त्वां यामि त्वत्रों अग्रे स त्वत्रों अग्रे त्वमंग्ने अयासिं। )॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्वधिता परूर्षेष। तत्सन्धत्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमत्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतान्तत्ते। निष्ट्यांयतान्देव सोम। यत्ते त्वचंम्बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मना॥१२२॥

त्वया तत्सीम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्विरं आवृणानः। अनांगास्तनुवों वावृधानः। आ नों रूपं वंहतु जायमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्त्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमेने पथीनाम्। पृतञ्जांनीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छाँत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरंस्मे। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जाति मान्वेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा श्तापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधृत्पश्चं च॥\_\_\_\_\_\_

यिद्देविक्षे मनसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणैश्वर्क्षुषा यच श्रोत्रेण। यद्रेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अन्द्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपों विमोक्रीर्मिय तेर्ज इन्द्रियम्। यद्वा साम्ना यर्जुषा। पुशूनाश्चर्मन् हिवषां दिदीक्षे। यच्छन्दों भिरोषं धीभिर्वनस्पतौं। अ्द्यो लोका दिधिरे तेर्ज इन्द्रियम्॥१२६॥ शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपों विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। येन ब्रह्म येनं क्षत्रम्। येनेन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वरुणो येन राजां। विश्वे देवा ऋषंयो येन प्राणाः। अन्द्यों लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपों विमोक्रीर्मिय तेर्जे इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं॥१२७॥ अग्नेः प्रियतंम १ हविः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियन्धामे। इन्द्रंस्य प्रियतमः हिवः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतम १ हिवः स्वाहाँ। वय १ सोम व्रते तवं। मनस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कुव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतंत्र आगन्ं। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता र्यिः। सर्चतात्रः शचीपितः। परम्मृत्यो अनु परेहि पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजार् रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनिजिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयतार् र्यिः। सर्चतात्रः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांबुद्धो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियन्थामांशीमहीबाुभिनंः शीयतार र्यिरेकं च॥-[१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेऽनागस् उदंस्ताम्प्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्णाा यद्दिदीक्षे चतुर्दश॥१४॥

सर्वान्भूतिमेव यामेवाप्स्वाहुतिं ब्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानामस्मिन्यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः

प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यिस्र्रिष्शद्ंत्तरशतम्॥१३०॥

सर्वाञ्छचीपतिः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्गृहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता १ सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्नी रशना भेवति। द्वादंश मासाः संवत्स्रः। संवत्स्रमेवावं रुन्थे। मौञ्जी भेवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्थे। चित्रा नक्षंत्रम्भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। केश्श्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्च च॥**————[१**]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्नोऽन्नं जायते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौदनं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥ चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति। उभयतोरुक्मौ भंवतः। उभयतं एवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धंरित शृतत्वायं। सर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्र्ञन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती श्प्यवं रुन्धे॥४॥ यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नशनान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। रेत आज्यम्। यदाज्यें रशनान्युनत्तिं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समंध्यति। दर्भमयीं रशना भंवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदर्थः। पवित्रं वै दर्भाः॥५॥ यद्दर्भमयी रशना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनम्मध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविशत्। तन्महर्त्विजाम्महर्त्विकम्। यन्महर्त्विजः प्राश्ञन्ति। महिमानंमेवास्मिन्तद्वेधित। अर्श्वस्य वा आलेब्यस्य रेत उदेक्रामत्। तत्सुवर्ण्र् हिरंण्यमभवत्। यत्सुवर्णे हिरंण्यन्ददांति। रेतं एव तद्वंधाति। ओदने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्।

## रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥

व्याति रुखे दुर्भा अभव्यद चं॥———[२] यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंत्येऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नाति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वम्मेध्यम्भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मिति। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वम्मेध्यंम्बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंते प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्य आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्कंण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्ये। यज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रशुना केर्त्व्या ३ त्रयोदशार्त्नी ३ रितिं। ऋषुभो वा एष ऋंतूनाम्। यत्संवत्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋषुभ एष युज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोद्शमंर्बि र रंशनायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्क्रोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्वेत्याह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्याह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्त्स्रमारपन्तीत्याह। सृत्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्याह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धर्तासीत्यांह। धर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवेनं वश्वान्रे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृश्भिः प्रथयित। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्येषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धूर्तासि धुरुण् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रुप्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषंमेवेतामाशांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनई स्वृगा करोति। स्वाहाँ त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां एव देवताया आलुभ्यतें। तयैवैनु समर्धयति॥१२॥

बुधाति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह् सप्रथस्मित्यांह देवेश्य इत्यांह् पश्चं चा——[३] यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयिति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नयिति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वर्रुण् इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा आतृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य आतृंव्यः हन्ति। सेधुकम्मुसंलम्भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्मे साधयति। पौर्श्वलेयो हंन्ति। पुर्श्वलवां वै देवाः शुच्न्न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर्र हन्ति। पाप्मा वा एतमींप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्जी वा अश्वंः प्राजापत्यः। वज्रंणेव पाप्मानम्भ्रातृंव्यमवं क्रामति। दृक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानमे्वास्माच्छमंलुमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो

भंवति। आयुर्वा ड्षीकाः। आयुर्वास्मिन्दधित। अमृतं वा ड्षीकाः। अमृतं मेवास्मिन्दधित। वेत्स्शाखोपसम्बद्धा भवित। अप्सुयोनिर्वा अश्वंः। अप्सुजो वेत्सः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चमभ्युदूहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाित। अहं च त्वं चं वृत्रहृन्नितिं ब्रह्मा यजंमानस्य हस्तं गृह्णाित। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाित। अभिकत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भ्वति प्रावयति मिमीते पश्चं च॥———[४]

चृत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। शृतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्युः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रन्दंधाति। शृतेनां राजिभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येंनेष्ट्वा। अयर राजांप्रतिधृष्यों ऽस्त्वितिं। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलेंनेवास्मिन्बलें दधाति। श्तेनं सूतग्राम्णिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितिलायें। बहुहिर्ण्यायें बहुह्स्तिकांये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्वितिं। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्रुतेनं क्षत्तसङ्गृहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजा सर्वमायुरेत्वितिं। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्गृहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंर्दधाति। श्रतरशंतम्भवन्ति। श्रतायुः पुरुषः श्रतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। चतुः श्रता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उक्षिति दिश एकं च॥———[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यन्निक्तमनोलब्धमुत्सृजन्तिं। यत्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहुतंमेवेनं करोत्यस्कंन्दाय। अस्कंन्नर् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वाह। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीतः। अपिरिमिता अन्वाहः। अपिरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुहोति। इयं वा अग्निवैश्वान्रः॥२१॥

अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवेनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयेवेनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवेनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपाम्मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनंं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वरुंणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवतांभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अर्न्न विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषों-ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। एता ५ ह वाव सौंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्केन्दाय। अस्केन्न ९ हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजित्यै वैश्वान्रः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते पट् चं॥——[६] प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामन्त्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यान्त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिंष्ठौ बिलेष्ठौ। ओर्ज एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोर्जिष्ठो बलिष्ठः। वायवे त्वेति पृश्चात्। वायुर्वै देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥ जवमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशुः सारसारितंमः।

विश्वैभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यंशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हरस्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वंः पशूनान्त्विषिमान्हरस्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽन्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्याह। तस्मादश्वमेधयाजिन सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापत्योऽर्श्वः। अथ कस्मादिनमन्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंताः। तं यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षतिं। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापृत्योऽश्वः पश्चं च॥————[ ७ ]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदर्श्वस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृत्सृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वहृतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्न् हे हि तत्। यद्धृतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहें कृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अश्वचिर्तानिं। चरितैरेवेन् समंध्यति॥२८॥ तदांहः। अनांहृतयो वा अश्वचिर्तानिं। नैता होत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहः। होत्व्यां एव। अत्र वावेवं विद्वानश्वमेधस् सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँद्धोत्व्यां इतिं। बहिर्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्ने उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्टाः पुरस्तांत्स्वष्टकृतः। आहुवनीये उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन पुवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृष्ट्यै। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥ यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभि्र्यजमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवर्गाक्षोकात्पंद्येत। पापीयान्त्स्यादितिं। स्कृदेव

होत्व्याः। न यजंमानं पृश्मिर्व्यर्धयित। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। न पापीयान्भवित। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जागृतोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धै। एकमितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुंकः॥३१॥

अर्थ्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती श्रीणं च॥———[८] विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनंमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वोन्पशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना श्रेष्ठमं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठमंगाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियन्नांमधेयम्। प्रियेणैवैनंन्नामधेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनंं गमयति।

अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तम्भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्यांय त्वा भविष्यते त्वेत्युत्सृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला एतं देवभ्योऽश्वम्मेधांय प्रोक्षिंतङ्गोपायतेत्यांह। शृतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं पृवेनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परौं परावतङ्गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रिन्तः स्वाहेह रमितिः स्वाहेतिं चतृषु पत्सु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनंम्बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वम्मेध्यः रक्षंन्ति। तेषां य उद्दचं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ् य उद्दचं न गच्छंन्ति॥३५॥ राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽब्लों-ऽश्वमेधेन यजंते। यदमित्रा अर्थं विन्देरन्ं। हुन्येतांस्य यज्ञः। चतुः शता रक्षन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षंयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तः॥३६॥

गुच्छुति भुवतः पुत्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥-----[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणि वैश्वदेवानि जुहोति। चत्वार्यौद्धहणानि। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥ एकंवि॰शतिं वैश्वदेवानि जुहोति। एकंवि॰शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि॰शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्द्वप्रस्यं विष्टपम्। तत्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै। अप वा एतस्मौत्प्राणाः क्रोमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। स्प्ताहं प्रचंरन्ति। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

रु-थे प्राणान्दीक्षामवं रु-थ उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥**———————[१०**]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजापृत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवेनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यैं स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृहृत्यैं स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचेवेन्मुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां

पूष्णे प्रंपथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृशवो व पूषा। पृश्विन्मुद्यंच्छते। त्वष्ट्रं स्वाहा त्वष्ट्रं तुरीपांय स्वाहा त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा व पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। अथों रूपैरेवैन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो व विष्णुंः। युज्ञायैवैन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तंब्ये स्वात्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥————[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते। अथौं प्रातः सवनमेव तेनौप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रसिवत्र एकांदशकपालं मृध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभं मार्ध्यं दिन् सवनम्। मार्ध्यं दिनादेवैन् सवनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँप्रोति। त्रिष्टुमं छन्दंः। स्वित्र आंसवित्रे द्वादेशकपालमपराह्णे। द्वादेशाक्षरा जर्गती। जार्गतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगंत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगंतीं छन्दंः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पराँ परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृंतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भंवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो वृजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभुश्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥——[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मात्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं महिमानं दधाति। तस्मात्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मात्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मौत्पुरा-ऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्मात्स्त्री युंवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। सभेयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स सभेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे हु वै तत्रं पर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥

अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सप्त चं॥-----[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नेश्वमेधर्मधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोत्रास्त्विति। तेभ्यं पृतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोतिं॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुना जुहोति॥५१॥

महतीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकेर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यष्ठाजाः। यष्ठाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बौः। यत्क्रम्बैर्जुहोति॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्त्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्त्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यत्मक्तंवः। यत्मक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रींणाति। मृसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांनाः रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वे नामैते। एतेर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा विराट्। विराद्गत्स्त्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोति क्रम्बैर्जुहोति सक्तुंभिर्जुहोति प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति चत्वारिं च (अन्नहोमानाज्येनाग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैर्धानाभिः सक्तुंभिर्मसूर्यैः

प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नांनि द्वादंश। )॥=

[88]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा इंस्यजिघा॰सन्। स पृतान्प्रजापंतिर्नृक्त॰ होमानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपाहन्। यन्नंक्त॰ होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा॰्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणेव यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदंं करोति। प्राणो वा आज्यम्ं। मुख्त

एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभ्यतं एवास्यं प्राणं देधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। द्वाभ्या इस्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। असम्भिक्ष्यामुष्मि इश्व। श्वाताय स्वाहेत्यांह। श्वातायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्ं। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पृव युज्ञाद्रक्षार्थस्यपंहत्त्यन्तो ज्ञहोति श्वाय स्वाहेत्यांह सम चं॥———[१५]
प्रजापितिं वा एष ईं प्स्तीत्यांहुः। यो ऽश्वमेधेन यजंत इतिं।
अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह।
प्रजापितिर्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः इस्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति।
एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पृक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्ववीर्यः। आयुरेव वीर्यमवंरुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्थे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाप्नोति। मध्यांय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाप्नोति। अन्तांय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्री स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावंरुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्री स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति।

अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पुकोत्तरं ज्रीति प्रयुतीय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाह्व्यंिष्टः सम चे॥——[१६] विभूमीत्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोर्वैनं लोकयोनिम्धेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्र स्वृवं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित। पृथिव्ये स्वाहा-ऽन्तिरक्षाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामिय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामिय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामिय क्वाहेति पूर्वदीक्षा जुहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्विनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्विति देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्वः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टे। भुवो देवानां कर्मणेत्यृतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवुर्गस्यं लोकस्याप्त्यै।

भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्यांतिज्ञिहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६५॥

द्द्धः स्वाह्य हनूँभ्या् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जंहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुश्चति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेंभ्यः स्वाहेत्योषधिहोमाञ्जंहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्तिं। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस् मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अप्सु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अद्भो वा अन्नं जायते। यदेवाद्भोऽन्नं जायते। तदवं रुन्थे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व एव द्विषन्तुं भ्रातृंब्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्धे जायंतु एकं

87.7 AGUA 81. 31. 181.7 MAGATUM ANGMATUMA ANGMATUM ANGMATING 840

अम्भार्रस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्रस। तस्य वसवो-ऽधिपतयः। अग्निज्यीतिः। यदम्भार्शस जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्धे। वसूना सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्रस जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्रस॥६८॥ तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्रस जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणाः सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महार्रस जुहोति। असौ वै लोको महा रेसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥ यन्महा १सि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना १ सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेतिं यव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। मयोभूर्वातों अभि वांतूस्रा इतिं गृव्यानिं जुहोति। पशूनामवंरुद्धै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

स्तित्य स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरंक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्धे। कस्त्वां यनक्ति स त्वां यनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्मैं लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो॥७१॥

यः प्राण्तो य आंत्मदा इतिं मिह्मानौं जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजंमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जायतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्च्सानिं जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे। जित्ते बीजमितिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै। अग्रये समनमत्पृथिव्ये समनमदितिं सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेतिं भूताभ्व्यो होमौं जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति। सर्वस्यास्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदर्ऋन्दः प्रथमं जायंमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनौप्रोति। सर्वं जयित। यौऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ र रक्षा इंस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा रस्यपंहन्। यन्नक रहोमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा रस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो स्वाहेत्यंन्ततो जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्रो॥७४॥ व नमारंसि सूर्ये ज्योतिः सर्वत्ये सम्ष्ट्रो म्वं वर्ण वर्ण वर्षे स्वाहा (१८)

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पुक्वि॰शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपां भवन्ति। राज्ञुंदाल एकंवि॰शत्यरिक्षमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धे। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्तिं। अवद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांमुन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेतस्शाखायामश्वंस्य। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेतसः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पश्तियुञ्जन्ति। आरोकेष्वारण्यान्धारयन्ति। पश्नुनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूह्रँभन्ते। प्रार्ण्यान्त्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपहत्यै॥७६॥

अश्वंस्य व्यावृंत्ये श्रीणं च॥———[१९] राञ्जंदालमग्निष्ठं मिंनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्धस्यावंरुद्धै। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्धेनोभ्यतः परिंगृह्णाति। षञ्जेल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्च्सस्यावंरुद्धै। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धै॥७७॥

षद्वांला्शाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शित्वें देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं द्वमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष स्वां लोकः। सुव्गस्यं लोकस्य सम्पष्टौ। श्वतं प्शवों भवन्ति॥७८॥ श्वतायुः पुरुषः श्वतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मात्स्त्यात्। दक्षिणतौंऽन्येषां पश्नामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो

वा अर्थः॥७९॥

एषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितरेषां पशूनामंबद्यतिं। शृतदेवृत्यं तेनावं रुन्धे। चितें ऽग्नाविधं वैतसे कटेऽर्श्वं चिनोति। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेतसः। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तौत्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्त्सम्यश्चौ दधाति। अर्थं तूपरं गोंमृगमितिं सर्वहुतं एताञ्ज्होति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मांनमेवैन सर्तनुं करोति। सात्मा-ऽमुष्मिँ होके भंवति। य एवं वेदं। अथो वसोंरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवत्सरो वा ईलुवर्दः। परिवत्सरो बंलिवर्दः। संवत्सरादेव परिवत्सरादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मदिश्वमेधयाजी जरसां विस्रसामुं लोकमेति॥८१॥ तेजुसोऽवंरुद्धै भवुन्त्यश्वों गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारि च॥———————[२०]

पुक्वि रशौँ ऽग्निर्भवति। पुक्वि रशः स्तोमः। एकंवि रशतिर्यूपौः।

यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्। एवमेव तत्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकिविष्शाः। ते यत्संमृच्छेरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। द्वाद्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्शः स्तोमः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशों ऽग्निः स्याद्वादशः स्तोम एकांदश यूपाः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकवि १ श प्वाग्निः स्यादित्यांहुः। पुकृ वि १ शः स्तो मः। एकंवि शतिर्यूपाः। यथा प्रष्टिंभिर्यातिं। तादगेव तत्॥८४॥ यो वा अश्वमेधे तिस्रः ककुभो वेदं। कुकुद्ध राज्ञाँ भवति। एकवि शौं ऽग्निर्भवति। एकवि शः स्तोर्मः। एकंवि शतिर्यूपाः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः ककुर्मः। य एवं वेदं। ककुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वंमेधे त्रीणिं शीर्षाणि वेदं। शिरों ह राज्ञां भवति। एकवि १ शों ऽग्निर्भवति।

पुक्वि १ शः स्तोमंः। एकंवि १ शति यूपाँः। पुतानि वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि। य पुवं वेदे। शिरों हु राज्ञां भवति॥८५॥ हाद्यः स्तोमः स पुव तिच्छरी हु राज्ञां भवति षद चं॥———[२१]

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्ये। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रंतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽअंसा नयंति। एवमेवैन्मश्वंः सुवर्गं लोकमअंसा नयति। पुच्छंम्नवा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋक्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंख्तो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तत्स उपार्करोति चृत्वारिं च॥———[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वं पृश्नियुअन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तत्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्नीवं पुरस्तां छलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौत्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्नीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्नन्यों बाहुबुलीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ सुक्थ्योः। सुक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राजन्यं ऊरुबुलीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों क्वचें एवैते अभितः पर्यूहते। तस्माँद्राजन्यः सन्नंद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रम्धस्ताँत्। प्रतिष्ठामेवैतां कुरुते। अथों इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उत्सेधमेव तं कुरुते। तम्मांदुत्सेधम्भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धुत्ते कुरुते पश्च च॥———[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुंष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्न किञ्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवेभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीप्सित विभूरंश्वनामान्यम्भार्ंस्येकयूपो राज्ञुंदालमेकविर्शो देवाः पुरुषस्त्रयोविरशितः॥२३॥

साङ्ग्रहुण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ नवमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तमंष्टाद्शिभिरन् प्रायुंङ्का तमांप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्थ यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञम्व तैरास्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। संवत्स्रस्य वा एषा प्रंतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवृत्सरों ऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवृत्सरम्व तैराक्षा यजमानोऽवंरुन्थे। अग्निष्ठें ऽन्यान्पशूनुंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवन्वालेभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सङ्स्थापयेंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरियुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इतिं। यत्पृशून्नालभेत। अनंबरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुत्मृजेत्॥३॥ यज्ञवेश्मं कुर्यात्। यत्पशूनालभेते। तेनैव पृशूनवंरुन्थे। यत्पर्यग्निकृतानुत्मृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यज्ञवेशसम्भवति। न यज्ञमानमरंण्यम्मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयति। एते व पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्यानः क्रामन्ति। सम्निक्तं ग्रामयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुत्सृजेत्स्यंतुस्त्रीणिं च॥\_\_\_\_\_[१]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेति। स एतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्या इश्चांरण्या इश्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववां रुन्ध। ग्राम्येरेव पशुभिरिमं लोकमवां रुन्ध। आर्ण्येरमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुन्तैः। अनंबरुद्धो वा एतस्यं संवत्सर इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवत्सरं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवत्सरः। यचातुर्मास्यानिं। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। प्रत्यक्षमेव तैः संवत्सरं यजमानोऽवंरुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवत्सरं प्रयुङ्के। संवत्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गन्तु लोकन्नापंराभ्नोति। प्रजा वै पृशवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृशवं आलुभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यजंमानोऽवंरुन्थे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्दृशिभिरनु प्रायंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाप्ता दृशिभिरवांरुन्थ। यद्दृशिनं आलुभ्यन्तें॥७॥

विराजंमेव तेरास्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। एकांदश दुशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नवंवावंरुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवं भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मान्नहरूषाः पृशवः समृंद्धे॥८॥

आरुण्याँ हो को विश्वनं आलुभ्यन्ते नानां रूपाः पृशवो हे चे॥———[२] अस्मै वै लोकार्यं ग्राम्याः पृशव आलंभ्यन्ते। अमुष्मां आरुण्याः। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवंरुन्थे। यदांरण्यान्। अमुन्तैः। उभयांन्पृशूनार्लभते। गाम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयों लोकयो रवंरु छै। उभयांन्पृशूनार्लभ ग्राम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयंस्यान्ना द्यस्यावं रु छै। उभयांन्पृशूनात् ग्राम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अभयंषां पशूनामवं रु छै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामात्र्यं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मात्सत्यात्॥ १०॥

अस्मिँ होके बहवः कामा इति। यत्संमानीभ्यो देवताभ्योऽन्यें-ऽन्ये पृशवं आलभ्यन्ते। अस्मिन्नेव तह्नोके कामाँन्द्रधाति। तस्माद्रिमँ होके बहवः कामाँ। त्रयाणान्नेयाणार्थ सह वृपा जुंहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां कृस्यै। पर्यम्भिकृतानार्ण्यानृत्सृंजन्त्यहिर्भमाये॥११॥

अवंरुद्धा उभयांन्यश्नालंभते स्त्यादिहर्रसाये॥———[३]
युअन्ति ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रुध्नः।
आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः।
अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्।
वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष् इत्यांह॥१२॥

इमे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्में लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षत्राण्येवास्में रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामांनेवास्में युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्में युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्ता एता एवास्में देवतां युनिक्ता सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवेन् राज्ञांङ्गमयति। जीमूर्तस्येव भवित् प्रतींक्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एति। यस्यं पृशुरुपाकृतोऽन्यत्र वद्या एति। एतङ्स्तोतरेतेनं पृथा पुनरश्वमावंर्तयासि न् इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा व ह्विषो गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमानि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तत्सम्भंरन्ति॥१५॥ भूर्भुवः सुवरितिं प्राजापृत्याभिरावंयन्ति। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयन्ति। भूरिति महिंषी। भुव इति वावातां। सुवरितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रंम्भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवंरुन्थे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रेष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्ं। इन्द्रियन्निष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवंरुन्धे। आदित्यास्त्वां-ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्ं। प्रावो जगंती। तेजंसैवास्में प्रावनंरुन्धे। पत्नयोऽभ्यंअन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी (३) ञ्छाची (३) न् यशोम्माँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्धि प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यंन्दधते। यदि नावजिन्नेत्। अग्निः पशुरांसीदित्यवंन्नापयेत्। अवं हैव जिंन्नति। आक्रानं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमन्तंमत्रयते। एषां लोकानांम्भिजित्ये। समिद्धो अञ्चन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्यायं॥१९॥

परित्स्थुष् इत्यंह्मे एवास्मै युनक्त्यभिजित्यै भरन्त्यश्वमेशो रुन्ये रूपश्चिप्रति श्रीणि चा[४] तेजंसा वा एष ब्रह्मावर्चसेन व्यृद्धाते। यो ८श्वमेधेन यजते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मावर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भविति। दक्षिणतआयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधौ ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भविति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होतां। आग्नेयो वै होतां। तेजो वा अग्निः। तेजं पुवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्त्रो- ऽर्धस्तेजस्वतंरः। यूपंमभितों वदतः। युज्मानदेवत्यों वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च् समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥ दिवंमेव वृष्टिमवंरुन्थे। किङ् स्विदासीद्धृहद्वय इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयंः। अश्वमेवावंरुन्थे। किङ् स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह।

व बृहद्वयः। अश्वम्वावरुन्य। किङ्गस्वदासात्पशाङ्गलत्याह। रात्रिर्वे पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्ये। किङ्स्विदासीत्पिलिप्पिले श्रीर्वे पिंलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावंरुन्ये॥२२॥

कः स्विदेकाकी चेर्तीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चेरति। तेजं एवावंरुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जायते पुनः। आयुरेवावंरुन्थे। किः स्विद्धिमस्यं भेषजिमत्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्थे। किः स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥ अयं वै लोक आवपंनम्महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पृच्छामि त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्यांह। वेदिर्वे परो-उन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत् इत्यांह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावंरुन्धे। पृच्छामि वाचः पंरमं व्योमेत्यांह। ब्रह्म वै वाचः पंरमं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्धे॥२४॥

होतां भवित वै वृष्टिः पूर्विचेत्तिरुन्नाद्यंमेवावंरुन्थे महदित्यांह सोमो वै वृष्णो अर्श्वस्य रेतंश्चत्वारि

अप् वा एतस्माँत्प्राणाः क्रांमन्ति। योँऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणायं स्वाहाँ व्यानायं स्वाहेतिं संज्ञ्च्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्माँत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियन्त्वाँ प्रियाणाँम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनान्त्वां निधिपति हवामहे वसो ममेत्याह। अपैवास्मै तद्धुंवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येंवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनंन्धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥ ये यज्ञे धुवंनन्तन्वतें। नवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिकं इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनांम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं एवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यत्सूचीभिरसिप्थान्कत्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। गायुत्री त्रिष्टुङ्गगृतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्दशा रज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मं कल्पयति। कस्त्वां छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि र्रमायै॥२९॥

हुवते कामन्त्यूर्ण्याथामित्यांह जगतीत्यांह कल्पयत्येकं च॥———[६]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋामिति। यो ऽश्वमेधेन

यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रेयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्में राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावंरुन्धे। शीते वाते पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावंरुन्धे। यद्धरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वे हरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पृष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पशूत्र पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँ द्वेशीपुत्रन्नाभिषि इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विशं चैवास्मे राष्ट्रं चं समीची दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँ द्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतङ्गभे पस् इत्यांह। विड्वे गभंः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्रं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीवें वृक्षस्याग्रम्। श्रियमेवावं रुन्धे॥३३॥ प्रसुंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रम्मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वं घातुं कम्। अप् वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूंतं वदंन्ति। दिधेकाळणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवात्मन्दं धते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

राष्ट्रस्य मध्यं पुर्ष्यति गर्भो रुन्धे दधते चृत्वारि च॥—————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुन्नाशंक्रोत्। सोंऽब्रवीत्। ऋध्रवदित्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदिति। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रवन्। योंऽश्वमेधेन् यज्ञंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुर्रुषः। विराजमेवालंभते। अथो अत्रं वै विराट्। अन्नमेवावंरुन्थे। अश्वमालंभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापतिमेवालंभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवावंरुन्थे। गामालंभते॥३६॥ लुभुते गामालंभते पर्मौंऽष्टौ चं॥•

यज्ञो वै गौः। यज्ञमेवालंभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नंमेवावंरुन्थे। अजावी आलंभते भूम्ने। अथो पृष्टिवें भूमा। पृष्टिमेवावंरुन्थे। पर्यमिकृतं पुरुषश्चारण्या इश्चोत्सृं जन्त्यिह इसारे उभौ वा एतौ पृशू आलंभ्येते। यश्चां वमो यश्चं पर्मः। तें उस्योभयं यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिह्रंता भवन्ति। नैनंन्द्ङ्क्वां पृशवों यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिह्रंता हि इसन्ति। यों ऽश्वमेधेन यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहति। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवंः संवत्सरः।

ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारीहित। शक्करयः पृष्ठम्भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आर्लभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवैष बुलिर्ह्वियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वार्ण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इति। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवंरुन्थे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभि
सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्थ्यां भवन्ति। अन्तृत एव
ब्रंह्मवर्च्समवंरुन्थे। सोमाय स्वराज्ञंऽनोवाहावंनुङ्गाहावितिं
द्वन्द्वनंः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजिंत्ये। पृशुभिवां
एष व्यृंध्यते। यौंऽश्वमेधेन यजंते। छुगुलङ्कल्माषंङ्किकिदीविं
विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पृशुभिरेवात्मान् स्
समर्धयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौंऽश्वमेधेन यजंते।
पिशङ्गास्त्रयो वासन्ता इत्यृत्पृशूनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् स्
समर्धयति। आ वा एष पृशुभ्यो वृश्यते। यौंऽश्वमेधेन
यजंते। पर्यग्निकृता उत्सृजन्त्यनांव्रस्काय॥४०॥

ल्युन्ते लुम्ते लाष्ट्रान्यश्नालंभतेऽष्टौ चं॥———[९]
प्रजापितिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे
महिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादोंऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे
महिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भवति। यज्ञमानदेवत्यां

वै व्पा। राजां मिह्मा। यद्यपाम्मंहिम्नोभ्यतंः परियजंति। यजमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांत्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टात्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्यपाम्मंहिम्नोभ्यतंः परियजंति। तानेवोभयांन्प्रीणाति॥४१॥

पृश्यिजंति पद्गा——[१०]
वैश्वदेवो वा अश्वः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या
देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत। देवताभ्यः

देवता अपिभागाः। ता भांगधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदेन्दध्यात्। स्तेगान्दश्ष्ट्राभ्याम्मण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भांगधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः

सुमदंं दधाति॥४२॥

चतुर्दशैतानंनुवाकाञ्चंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमासशः संवत्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयंः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंगः। यत्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्यै। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। गोमृगकण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पुशवो वै गोंमृगः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टुकृत्। रुद्रादेव पुशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्ह्यतैं। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥ अश्वशफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्ह्यतें। न तत्रं रुद्रः पुशून्भिमंन्यते। अयस्मयेन कम्ण्डलुंना तृतीयाँम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्ह्यतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥

द्यात्यर्भवन्मन्यते प्रजा अन्तर्दथाति हे चं ॥————[११] अर्श्वस्य वा आलेब्यस्य मेध् उद्येकामत्। तदेशस्तोमीयम्भवत

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्येन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृह्ती॥४६॥

बृहत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥

बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्धयति। तायद्भूयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यंधयेत्। षद्भिर्शतं जुहोति। षद्भिर्श्वदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपद्वे पुर्रुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयित। तदांहः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ (३) न्द्विपदाँ (३) इतिं। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुर्रुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्वेव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहंतिं प्रतिष्ठित्ये॥४८॥ द्विपदां अन्ततो जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञकतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकतुभिर्नान्वंविन्दत्।

तं यज्ञकृतुभिरन्वैच्छत्। तं यज्ञकृतुभिनिन्वविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। यत्संवत्स्रमिष्टिंभियंजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विनदन्ति। न वा इमाङ्कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्येतुमर्हतीति। यत्सांवित्रियो भवन्ति। स्वितृप्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतङ्गन्तोः। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजेते। अश्वमेव तदन्विच्छति। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मात्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वमेव तदन्विंच्छति। तस्मादिवां नष्टेष एंति। यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्विंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं कंल्पयति॥५१॥ भवन्ति धृत्यां एनमन्विंच्छत्येकं च॥—

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रङ्कांमित। यौंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणौ वींणागिथेनौं गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणौ।

ब्राह्मणो वींणागाथिनो गायतः। श्रिया वा पुतद्रूपम्। यद्वीणा। श्रियमेवास्मिन्तद्धेत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियमश्जुते। वीणाँ उस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गायंताम्॥५२॥ प्रश्नेश्शंकास्माच्छ्रीः स्याँत्। न व ब्राँह्मणो श्री रंमत् इतिं। ब्राह्मणो उन्यो गायेँत्। राजन्यो उन्यः। ब्रह्म व ब्राँह्मणः। क्षत्रश्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायंताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रङ्कांमेत्॥५३॥

न वै ब्रांह्मणे राष्ट्र रमत इति। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणञ्जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गायेत्। नक्तर्र राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षुत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभयतों राष्ट्रं परिंगृहीतम्भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायेंत्। इष्टापूर्तं वै ब्राह्मणस्यं॥५४॥ इष्टापूर्तेनैवन् स समर्धयति। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममहिन्निति राजुन्यः। युद्धं वै राजुन्यंस्य। युद्धेनैवैन स समर्धियति। अक्लंप्ता वा एतस्यर्तव इत्यांहुः। यों ऽश्वमेधेन यर्जत इतिं। तिस्रों उन्यो गायंति तिस्रों उन्यः। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्मैं कल्पयतः। ताभ्यार् स्ड्स्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति॥५५॥

गार्येताङ्कामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥———[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवयजते। नैनं लोकेलोके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंत्सश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्याये स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्याये स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषजं करोति। एताः हु वै मुंण्डिभ औदन्यवः। भूणहृत्यायै प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापिं प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मै तस्मै भेषजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहृतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तृत एव वर्रुणमवंयजते। खुलुतेर्विक्किथस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवंयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं ज्रंहोति हे चे। [१५] वारुणो वा अर्श्वः। तं देवत्या व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायत्यांह। वारुणो वा अर्श्वः। स्वयैवेनं देवत्या समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्श्वः। स्वयैवेनं देवत्या समर्धयति। नमोऽिधंपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावंरुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिम्मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन र समानानां करोति। मान्धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाश उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमाश्चिनम्। तान्प्शूलंभते प्रतिष्ठित्ये। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावंरुन्धे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

जाशः। स्वतानन्द्रः। यदन्द्राश्चा नवाता। दर्गा ब्रह्मक्षत्रे पृवावंरुन्थे। यदािश्वेनो भवंति। आशिषामवंरुस्यै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतितिष्ठति। अग्नयेऽ १ होमुचेऽष्टाकंपाल इति दर्शहिवष्मिष्टिं निर्वपित। दशाक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्वान्नाद्यमवंरुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इति याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहार्भिजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥———[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीनाः राजाः। याभ्यं एवैनं विन्दति॥६३॥ ताभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सांवित्रो भवंति। सवितृप्रंसूत पृवैनंम्भिषज्यति। पृताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णं चुरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लीण्यंस्य भिषक्। स पृवैनंम्भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्वपेत्। यदिं मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अर्थः। स्वयैवेनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपेन्मृगाखरे यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवेनंमूर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अर्श्हसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येतिं। यद रहोम्चें निर्वपंति। अर्ह्स एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्यश्र रेतः। यत्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवैनुश्र स समर्धयति। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन्र स समर्धयति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तिः क्रियते॥ इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोंणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्त्स इस्थिते निर्वपेत्। द्वाद्शिभिवें विधिभियं विद्यानि विद्यान

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापितिर्वा ओद्नः। युज्ञः प्रजापितिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाँः संवत्सरः। संवृत्सर एव प्रतितिष्ठति॥६९॥

आप्यते संवत्सर एकं चा [१८]

पूष वै विभूर्नामं युज्ञः। सर्वर्ध ह वै तत्रं विभु भवति। युत्रेतेन

युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रभूर्नाम युज्ञः। सर्वर् ह वै तत्रं प्रभु

भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

सर्व १ हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं यज्ञः। सर्व १ हु वै तत्र विधृंतम्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृंत्तो नामं यज्ञः। सर्व १ हु वै तत्र व्यावृंत्तम्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं यज्ञः। सर्व १ हु वै तत्र प्रतिष्ठितम्भवति॥ ७१॥

यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै तेज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं युज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा अतिव्याधी नामं युज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्जन्योऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै दीर्घो नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितम्भवति युज्ञैतेनं युज्ञेन् युज्ञेन् षट्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान् विधृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश॥)॥———[१९]

तार्प्यणाश्वरं संज्ञंपयन्ति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन्रं समर्थयन्ति। यामेन् साम्नां प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्यं चं कृत्यधीवासे चाश्वरं संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवंरुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भवति। तेज्ञसोऽवंरुद्धे॥७३॥

रुको भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेराप्त्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुकाः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणांत्रोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासने। दिवर् हिरण्यकशिपुनौ। आदित्यर रुक्मेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतामाप्रोति। एतासामेव देवतानार सायुंज्यम्। सार्षितारे समानलोकतामाप्रोति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥———[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वर सवर्येत्याह्वयन्ति। तस्माद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यत्सद्यो वाजांन्त्सम-जंयत्। तस्मौद्वाजी नाम। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरा-यतंनम्। सूर्योऽग्नेयोनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिंमन्तमेवैनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥ योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावंरुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावंरुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतनम्। यदंश्वमेधें उग्नौ चित्यं उत्तरवेदिश्चिनोतिं। तावंर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावंरुन्धे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतितिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिंरायतंनश्चत्वारिं च॥————[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुम्भूतम्मधायालंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा एतद्देवानामहंः। यत्संवत्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांत्संवत्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादर्श्वः। यत्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुम्भविति। य एवं वेदे। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिरूपो जायते। य एवं वेदे। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वम्धेन् यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। काम्प्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृत्त्वमंकामयन्त। तेऽमृत्त्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन् यज्ञंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८ प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यज्ञते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव

गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तौत्प्राजापृत्यमृष्मं तूपरं बंहरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्यास्यै। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनांप्रोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंव्यजंत एति वेदं॥——[२२] यो वा अश्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यत्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं

जुह्नति। यो वा अश्वस्य मेध्यस्य पदे वेदे। अश्वस्यैव

मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नित॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणि च॥———[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युञ्जन्ति तेज्साऽपंप्राणा अपृश्रीरूर्ध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञकृतुभिरपृश्रीब्रांह्मणौ सर्वेषु वारूणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिरस्माँ ह्योक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वरं हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

## हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

## ॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नेः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशंम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापाम्पः सर्वौः। अस्माद्स्मादितोऽमृतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिर्द्धिया। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वः। देवीः पर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्युष्णिमपा रक्षंः। अपार्श्युष्णिमपारघम्। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्नं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिंनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्टयम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वैरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादत्ते। सर्वस्मौद्भवंनादिध। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभंवात्काचित्। अक्षय्यात्स्यन्दते यंथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायुन्ति। सो्रुः सतीं न निवंतिते। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सरः श्रिताः। अणुशश्च मंहशश्च। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संन्न निवर्तते। अधिसंवर्त्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥ अणुभिश्च महद्भिश्च। समारूढः प्रदृश्यते। संवत्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसत्वः प्रदृश्यंते। पटरो विक्लिधः पिङ्गः।

पृतद्वंरुण्लक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक १ हि शिरो नांना मुखे। कृत्स्रं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जित्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्रकृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वाहि माया अवंसि स्वधावः। भुद्राते पूषिन्निह रातिरस्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृश्ववंः। नाऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वे संवत्सरस्य प्रियतंम रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुंरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥७॥

साकुआनारं सप्तथंमाहुरेकजम्। षडुंद्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपुशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखायमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याज सखिविद्रं सखांयम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदीरं शृणोत्यलकरं शृणोति॥८॥ न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमांनः। विनंनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृल्गाः। शुक्लकृष्णौ च षष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्र्रदंक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवृत्स्रस्यं सिवृतुः। प्रैष्कृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तन्निबोधंत। शुक्कवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिवी सर्वाम्॥१०॥ ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासा ५सि। आदित्यानां निबोधंत। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता सह। अदुःखो दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनांव्यथंयन्निव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्लादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रं इयन्ते। संवत्सरात्ता भ्रं इयन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

[३]

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंन्ने क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तिन्नबोधित। कनकाभानि वासार्सा। अहतांनि निबोधित। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रंदः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। श्राचंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिन्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योत्स्यंमानस्य। ऋद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिप्णोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृंहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वत्पसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्मं सुप्रथा आवृंणे॥१४॥

अतिंताम्राणिं वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ठें च। विश्वे देवा विप्रहर्नता अग्निजिह्वा असश्चंता नैव देवों न मृत्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्षंचन विद्यंते। दिव्यस्यैका धर्नुरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥ तस्येन्द्रो विद्यंरूपेण। धनुर्ज्यामछिनत्स्वंयम्। तिदेन्द्रधर्नु-रित्युज्यम्। अभवंर्णेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धर्नुरार्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवंग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवंग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिंदधाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं न वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु न हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शांरशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्नते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानींभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रप्सो अर्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवर्तिमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उप्सुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्योन्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै दुद्याताम्। यो द्रुद्यति। भ्रश्यते स्वर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलौन्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर सनिव्चनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमातपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्।

इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेंमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्च्योतिर्लभुन्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधिनिर्द्धमित।

भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षंण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पश्रकर्णो वात्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥ आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरुं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवंतमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रिंतपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिव्मनुप्रविष्टाः। तान्-वेतिं पृथिभिदिक्षिणावान्ं। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्निः। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्पप्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता। तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंण्याम्रायः। दिग्भ्राज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां वज्रिन्त्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानां सूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिंता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

केदमभ्रं निविशते। काय ५ संवत्सरो मिथः। काहः केयं देव रात्री। क मासा ऋतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निंविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अप्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये समाहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदंना। इरांवती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों मयूर्वैः। किं तिंद्वष्णोर्वलमाहुः। का दीप्तिः किं परायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोदसी उभे। वाताद्विष्णोर्वलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयों वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चेतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वेत्थाऽस्तो गृहान्॥३०॥

क्श्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्प्नन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्दे-शेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथा-ऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपांण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जंनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमापद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥ आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तें वासवैः। अपैतं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्त्सप्त वांसवाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥ ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरिति। कश्यपः पश्यंको भवति। यत्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्थां राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥ ३३॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः परुषाः श्यामाः। कपिला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्याः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम हिन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारि्वम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवृचीः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुक्रंमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहस्रो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधांश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैरुदीरिताः। अमूँल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥ उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षंरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुंवत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरैः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

स्ह्स्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम स्हस्रंवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यदांज्तं वांमन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भद्रा वां पूषणाविह

रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथंः स्थ सखायौ। ताविश्वनां रासभाँश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगत र्थ सूर्ययां सह। त्युग्रोंह भुज्युमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुनौंभिरौत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः शतपंद्धिः षडिश्वः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुबिधाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्य सुतृप्तं विदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमोँ द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाँ ऽत्येत्यन्ये। रक्षसानिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृत्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वत्सौ।

अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृत्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥ ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरितौ वत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वत्सौ॥४६॥ उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय रात्रीं गर्भिणीं पुत्रेण संवंसति। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौ रश्मयः। यथा गोर्गर्भिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियिष्णुः प्रजिया च पश्भिश्च भवति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमियंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्मासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्।
महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुंणेष्वारभम्।
प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः।
अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तत्समांशत।
ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः सप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः

शङ्कृंतोऽवसन्। अर्थं सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्रे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्धानि वर्रणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तत्संवित्वरिंण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तत्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठर्ं सर्वधातंमम्। तुरं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वांन्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमा्ड्स्र्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयि यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियः स्तीः। ता उमे पुरस आहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्थः। क्विर्यः पुत्रः स इमा चिंकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धथ्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसितः रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासिंतम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृंष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंता नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चिरंत्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजंनम्। एकचक्रंमेक्धुरम्। वातप्रांजिगृतिं विंभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥ नास्याक्षों यातु सञ्जंति। यच्छ्वेतांन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। रथे यंक्वाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्वं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शित्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिरंशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

————[११] आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

एवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरंरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। दुध्न्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरंरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतेः। कालैर्हिरत्वंमापृत्रेः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रंयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। स्वत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्त्व। सुब्रह्मण्योश् सुब्रह्मण्योश् सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसो-ऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्रूरथाः। ताम्रवर्णास्तथाऽसिताः। दण्डहस्तौः खाद्ग्दतः। इतो रुद्रौः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषां वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं

महीमू षु। अदितिर्द्यौरिदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्चजनाः। अदितिर्जातमिदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैत्सप्तिभैः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रैरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजाये मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरिदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चाँर्यमा च। अश्रशंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भो हुर्सः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमिति। गर्भः प्रांजापृत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंर्भिण्यः]

831

योऽसौ तपत्रुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ योंऽस्तमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोत्सृपत॥६५॥

इमे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत मोत्सृपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत मोत्सृपत। अय संवत्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपीत च॥६६॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप मोत्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपीति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृप। इय रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपीति च।

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीट्वम्॥६७॥

\{\g\}

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीढ्वम्॥६८॥

[86]

आरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीढ्वम्॥६९॥

१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। प्रभ्राजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुकिवैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजताना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। श्यामाना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। किपलाना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अर्धाना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अवपतन्तीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अवपतन्तीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अपूर्मुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन र रिद्वम्॥ ७१॥

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रिष्ठुम्॥७२॥

१८]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं न्रकः। तस्मान्नः परिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं न्रकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः परिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

१९]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वायो। एवा हीन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

-[२०]

आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च

सूर्यश्च। सह संश्रस्करिद्धंया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वंः॥७५॥ देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपाश्चंष्णिमपारघम्। अपाँघ्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हिंत। वर्ज्नं देवीरजींता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देवहितुं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिंर्दधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा । शत्यां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु।

दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥७७॥

२१

योऽपां पुष्पं वेदे। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भविति।

चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योंऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥ य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षेत्राणामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे॥८२॥ योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पर्जन्यंस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पर्जन्यंस्यऽऽयतंनम्। आयर्तनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायर्तनं वेदं॥८३॥ आयतंनवान् भवति। सुंवृत्सुरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवत्सरस्यऽऽयतंनं वेदं। आयर्तनवान् भवति। आपो वै संवत्सरस्यऽऽयर्तनम्। आयर्तनवान् भवति। य एवं वेदं। यों ऽप्स् नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

ड्मे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रसमुदंयरसत्र्। सूर्ये शुक्रर समाभृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेंऽमुष्मिन्नादित्ये समाभृताः। जानुद्व्यीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियेत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विहायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति।
कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययं
चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता
अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे
चातुर्मास्येषुं॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतर्छं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कम्भिं चिन्ते। स्त्रियम्भिं चिन्वानः। संवृत्स्रं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते॥८७॥

नाचिकेतम् शिं चिन्वानः। प्राणान्यत्यक्षेण। कम् शिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम् शिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् शिं चिन्ते। वैश्वसृजम् शिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् शिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम् शिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्योकान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। इममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इतिं। य पुवासौ। इतश्चाऽमुतंश्चाऽव्यतीपाती। तमितिं। यों ऽग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्नंवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नंवति। य एवं वेदं॥८९॥

आपो वा इदमांसन्त्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदश् सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥ सतो बन्धमसंवि निरंविन्दन्। इदि प्रविद्यां कवरों

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा समासीत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नर्खाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूत सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुषस्य पुरुष्त्वम्।

स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायापंः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांऽरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यस् इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। पुवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। पुवा हि पूष्त्रितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धवाप्सरस्थ्रोदंतिष्ठत्र्। सोध्वा दिक्। या विप्रुषो विपरापतत्र्। ताभ्योऽसुरा रक्षा रिस पिशाचाश्चोदंतिष्ठत्र्। तस्मात्ते पराभवत्र्। विप्रुद्ध्यो हि ते समभवत्र्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९६॥ आपों हु यह्वंहृतीर्गर्भमायत्रं। दक्षं दर्धाना जनर्यन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदश्समंभूत्। तस्मादिदश्सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदश्सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदश्सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंमभि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवुरुद्धां। तदेवानुप्रविंशितः। य एवं वेदं॥९८॥

चतुंष्टय्य आपो गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघो विद्युत्। स्तुन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्या गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। एता व ब्रंह्मवर्चस्या आपः। मुख्त एव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्चसितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। पृता वै

तेंज्ञस्विनीरापंः। तेजं पुवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधंस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीगृह्णाति॥१००॥

ता उत्तरत उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धार्वन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥ असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवाज्योऽत्रं जायंते। तदवंरुन्धे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातरशना ऋषयोऽचिन्वन्। तस्मादारुणकेतुकः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यन्ता। केतवो अरुंणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा । शतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसमितिं। श्तरांश्चैव सहस्रंशश्च प्रतिंतिष्ठति। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदे॥१०३॥

जानुद्धीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संवृत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। पुतावद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्रर्खिया इति। वाय्वश्वां रिष्मुपत्यः। लोकं पृंणच्छिद्रं पृंण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेति। पश्चिवतंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिंनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वे विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तिरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। प्ररोरंजाः पादंः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथों आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्वितिं। अथं ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिंनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। चैश्वसृजम्भिं चिन्तानः। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्तानः। कम्भिं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्गि चिंन्वानः। कम्गि चिंनुते। इममारुणकेतुकम्गि चिंन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषांणौ सङ्स्फालयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषौँ ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावौन् भवति। य एवं वेदे। पृशुकामश्चिन्वीत। स्ंज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापेः। पृशूनामेव संज्ञाने ऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषुजम्। भेषुजमेवास्मै करोति। सर्वमायुरिति। अभिचरईश्चिन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वज्रंमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षिति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा पृषोंऽग्निः। पृतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पृष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठेत्। पृतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वे च देवाः। यज्ञं

र्च नस्तन्वं च प्रजां च। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सर्गणो मरुद्भिः। अस्माकं भूत्वविता तनूनाम्। आप्नंवस्व प्रप्नंवस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुं:खनिधनाम्। प्रतिमुश्रस्व स्वां पुरम्॥११४॥ मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयन्न्। ते ते देहं कंल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत मा स्वंप्त। अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचेऋा नवंद्वारा॥११५॥ देवानां पूर्रयोध्या। तस्या १ हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतंनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभाजमाना हिरेणीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुर ई

हिरण्मंयीं ब्रह्मा॥११६॥ विवेशांऽप्राजिंता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुभ्यान्। यत्कुंमा्री मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुवेधति। अशृतांसः शृंतास्श्र॥११७॥ यज्वानो येऽप्यंयज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं चं ये विदः। सिकंता इव संयन्ति। रिश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्लिभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारींषु क्नीनींषु। जारिणींषु च ये हिताः। रेतंः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयांन् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥ अदो यद्गह्मं विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्येवास्मि स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

विशींणीं गृधंशीणीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध है श्वेतकुक्षम्। निजङ्घ रेशबुलोदेरम्। सृतान् वाच्यायया सह। अग्रे नाश्य सुन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेंन कि श्रुकावंता। अग्रे नाशंय सुन्दर्शः॥१२१॥

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्युंयोत। मयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भगंः। पुन्क्राह्मंणमैतु
मा। पुन्द्रविंणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय्
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिंच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माममृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

अद्मस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सप्तान्नः। ये अपोऽश्नन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैंश्रवणः। रथर्ं सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मैं भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असांम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदुर्शने चं ऋौश्चे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्नता। सुरहार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिलुर् हरेत्। हिर्ण्यनाभये वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बिले हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयुः स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्ध्यन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्ध्यन्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स में ऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स में कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वेश्रवणायं। महाराजाय नमः। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्भिरग्निं परिचरेत्। पुनर्मामैत्विन्द्रियमि- त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥ अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापतये। चन्द्रमसे नक्षित्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंत्सराय। वरुणायारुणायेति व्रतहोमाः। प्रवर्ग्यवदादेशः। अरुणाः काँण्डऋषयः। अरण्येऽधीयीरत्र्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥ महानाम्रीभिरुदक सं इस्पर्श्य। तमाचौर्यो दद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकंति भूमिम्। एवमंपवर्गे। धेनुर्दक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षोमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायंधर्मेण। अरण्येऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तनूभिः। व्यशंम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिंर्दधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय इस्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्यंण तपंसैव देवास्तेऽसंरा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते पर्रा ऽभवन्ते न स्वर्ग लोकमायन् प्रसृतेन वै यज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृतेनासुरान् पराभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यजंत एव तत्तरमाँ चज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजये चजेत वा यज्ञस्य प्रसृंत्या अजिनं वासों वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत १ संवीतं मानुषम्॥१॥

प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तु ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा पुतानि रक्षा रेसि गायत्रिया-ऽभिमन्नितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं हु वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायां गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्धं विक्षिंपन्ति ता एता आपों वज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मुन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानम् अवधून्वन्त्युद्यन्तं मस्तं यन्तं म् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राँह्मणो विद्वान्त्सकलं भद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

यद्देवा देवहेळेनं देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्त्र्तस्यतेन मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन त्व॰ संरस्वति। कृतान्नः पाह्येनंसो यत्किं चानृतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुंणौ सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नों मुश्चन्त्वेनंसो यदन्यकृतमारिम। स्जात्श्र॰्सादुत जांमिश्र्साज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेनस्तस्मात् त्वमस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥ यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवन्द्या १ शिश्नेर्यदनृतं चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकृम यानि दुष्कृता। येन त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अजंहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आँक्षि। यत्कुसींदमप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसातिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

यददीं व्यत्रृणमहं बुभूवादित्सन्वा सञ्जगर् जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रंश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तांभ्यां चकर् किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुंपजिन्नंमानः। उग्नं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्नं पृश्ये राष्ट्रभृत्विल्बिषाण्य यदक्षवृत्तमनुंदत्तम्वत्। नेन्नं ऋणानृणव

इत्संमानो यमस्यं लोके अधिरञ्जुरायं। अवं ते हेळ् उद्त्रमिम् में वरुण तत्त्वां याम् त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूराद्दूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मत्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामिस। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मत्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्मिह मनंसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यिद्विलिष्टम्॥५॥

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यम्भिर्वरेण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्मर्रं सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चार् गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूरंषि पवस् आ सुवोर्ज्यमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्। अग्ने पवंस्व

स्वपां असमे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वयिं मिय पोषम्॥६॥ अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। असमे दींदिहि सुमना अहेळञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्रान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमनस्यमानो वय एस्याम प्रणुंदा नः सपलान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा ५ सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह वस्वस्मभ्यमार्भर। अग्ने यो नोंऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यंः। तं वय समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपिं दध्मसि॥७॥ यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्रुक्त सर्वं पाप समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा इस्तानंग्रे सन्देह या इश्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिप्सांच सर्वाङ्स्तान्मंष्मषा कुरु। सःशिंतं मे

ब्रह्म सश्शितं वीर्या(१)म्बलम्। सश्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः। उदेषां बाहू अंतिरमुद्धर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनेः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्। वैश्वानरो मेऽदंब्यस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांसु। स एतान्पाशांन् प्रमुचन् प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वानरः पवंयात्रः पवित्रैर्यत्संङ्गरमभिधावाँम्याशाम्। अनोजानन्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तत्सुंवामि। अमी ये सुभगें दिवि विचृतौ नामु तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वं द्वकमोर्चनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृंधि बन्धान्मुंश्रासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वांन् पथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिंगृभ्गीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं जरसंः परस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टुं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहि श्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिंर्माताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विवित्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यमृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्रमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मोदनुणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृत्मेनः कदाचन। सर्वस्मांत्तस्मांन्मेळिंतो मोग्धि त्वर हि वेत्थं यथातथम्॥१०॥

**ξ**]

वातंरशना हु वा ऋषंयः श्रमुणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभू बुस्तानृषंयोऽर्थमाय ७ स्ते निलायं मचर ७ स्तेऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वं विन्दञ्छू द्वयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चरथेति त ऋषींनब्रुवृन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केन वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसं स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनुं यददीव्यन्नुणमुहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दधदित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानुराय प्रतिवेदयाम इत्युपंतिष्ठत यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहत्याया-स्तरमान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुंह्यात्पूतो देवलोकान्त्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्येत् यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदंर्वाचीनमेनौं भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित

एतैः संतृति जुंहोति संवत्सरं दींक्षितो भंवति संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भेवति यो मासः स संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्वि शाति १ रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्वि शातिरर्धमासाः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादंश मासाः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षेतो भवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा र समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुर्गुप्सेतानृंतात्पयौ ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवाग् राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथीं सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तुं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् हु वै पृश्नी ईस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भवंभ्यानंर्षत्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषींणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकामास्त एतं ब्रह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पयंआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजूरंषि घृताहुंतयो यत्सामानि सोमाहृतयो यदर्थविङ्गिरसो मध्वाहृतयो यद्वाँह्मणानीतिह्मसान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशृर्सीर्मेदाहृतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वगं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतति प्रतायन्ते सतति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यद्ग्रौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बलि १ हरंति तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्राह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मंनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यत्स्वाध्यायमधीयीतैकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्भंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू ईषि घृतस्यं कूल्या यत्सामांनि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधोः कूल्या यद्ग्रांह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश १ सीर्मे दंसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पयंआहितिभिरेव तद्देवा इस्तंपियति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यत्सामानि सोमाहितिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वा-हितिभिर्यद्वांद्वाणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र सीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तंपियति त एनं तृप्ता आयुषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्यंन च तर्पयन्ति॥१४॥

[08

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उंपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्धिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्ष्र्षेषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यज्र् १ष यत्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यत्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंर्वाङ्गिरसौं ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां महदुंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषधीना रसो यद्भाः सर्ग्सम्व ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्त्ररौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यज्रंस्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पर्ममक्षरं तदेतद्वाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरे पर्मे व्योम्न् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा कंरिष्यिति य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इति त्रीनेव प्रायंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान सिवता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयेव प्रतिपदा छन्दा सि प्रतिपद्यते॥१५॥

१११

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंत्रुत व्रजंत्रुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य पुवं विद्वान्त्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्व्रयये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥१६॥ मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्वाँह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनींकं चक्षुंर्मित्रस्य वरुंणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षः सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतांयते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण् इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिंणा॥१७॥

<del>---</del>[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियुर्वृषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवित् यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंत्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानो ऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अयित सर्वां होका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परेस्मि -स्तृतीयें लोके अंनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पिंतृयाणाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जेग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपौघ्नन्नाहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिर्दक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्देसाः स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूँत्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्युंक्ता। यस्तित्याजं सिखविद् सर्खायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अंस्ति। यदी र् शृणोत्यलक रे शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मौत्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अवांङ्त वां पुराणे वेदं विद्वा १ संम्भितों वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयंं च हु समिति यावंतीर्वे देवतास्ताः सर्वा वेद्विदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माद्भाह्मणेभ्यो वेद्विद्धों दिवे दिवे नमंस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर इंस्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स यन यज्ञकतुनां याजयेत्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्सद आसंन स्तृत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्धुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

कृतिधावंकीणी प्रविशति चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः

प्राणैरिन्द्रं बलेन बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्याया । रात्र्यामिश्रं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कार्माय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते हुत्वा प्रयंताञ्जलिः कवांतिर्यङ्काग्निम्नित्रयेत सं मांऽऽसिश्चन्तु मुरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रतिं हास्मै मरुतः प्राणान्दंधति प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरत्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत स इत्थं जुंह्यादित्थमभिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वर ई स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२२॥

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म

प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नमुस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदेय संवत्सुरः प्रजनंनमृश्विनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादावग्निः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शांकरः शिशुंमारस्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जंयति जयंति स्वर्गं लोकं नाध्विन प्रमीयते नाप्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यंः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमिस् त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठों ऽसि त्वां भूतान्युपं पर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमंः शिशुकुमाराय नमं:॥२३॥

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतीच्यै दिशे याश्चं देवतां पुतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां पुतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां पुतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां पुतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्तराये दिशे याश्चं देवतां पुतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानिश्चरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमंः पृथिव्ये नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ चित्तिः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बुर्हिः। केतों अग्निः। विज्ञांतमृग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥

अध्वर्युः पश्चं च॥——[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृंततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श॥——[2]

अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहां॥३॥

अभिर्होता प्रशे॥———[३] सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा।

अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचेस्प्तेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेरयस्व स्वाहां॥४॥

महाहंविरहोताँ। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवृक्ता। अनाधृष्यश्चाँप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यांभिग्रौ। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं।

विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोर्ममपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्यै

स्वाहाँ॥५॥

अपात्रीणि च॥———[५]

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातौंऽध्वर्युः। आपोंऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भृवः सुवेः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥ वाग्घोता नवं॥———[६]

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तिरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदः सर्वम्। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥———[७] अग्निर्यज्ञिभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषां। अङ्गिरसो धिष्णियैर्ग्निभिः। म्रुतंः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषां। अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रैरेक च॥-----[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतैंः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराद। यज्ञस्यं पुङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितिः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पुर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो

दिशंः। चर्तस्रोऽवान्तरिद्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्विशः पर्द्रण-[९] देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि

दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम्रं समुद्रमाविंश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वर्रुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनेवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गृन्धुर्वाप्सराभ्यः स्नगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायापः॥१७॥ उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्तराय रथम्ँ। वैश्वान्तरः प्रत्नथा नाक्मारुंहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्जनयंञ्जन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्तराय रथम्ँ। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीरसः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुंषुमर्पः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥————[१०]

सुवर्णं घ्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्तर शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतारो यत्रैकं भवंन्ति। समानसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥ अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनाना सर्वांत्मा। सर्वांः प्रजा यत्रैकं

आत्मा जनानाम्। ब्रह्मेन्द्रंमुग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान ५ सवितारं बृहस्पतिम्। चतुंर्होतारं प्रदिशोऽनुं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपुसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। त्वष्टांर ५ रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥ अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं कवयो निचिक्युः। शतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहिंतः पश्चंहोता। अमृतंं देवानामार्युः प्रजानाम्॥२२॥

भवंन्ति। चतुर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन

इन्द्र्र् राजांन् सवितारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मि रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निपाँन्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्भिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याँण्डकोश १ शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्र्रं रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कलां विचंक्षते। पाद् षड्ढोतुर्न किलांविवित्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्बा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढोतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनस् चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्रुप्ता चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदंयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मेतद्वह्मंण उज्जेभार। अर्क इ श्चोतंन्त हत्यं मध्यें। आ यस्मिन्त्सप्त पेरवः। मेहन्ति बहुला इश्वियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृहुश्वामिन्द्रं गोमंतीम्। अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी र्शिमरिन्द्रः। प्रम १ हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सिवृता मे नियंच्छत्॥ २६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः

पंटरी सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रेः कामव्रं देदातु। पश्चारं चुक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरिरस्य मध्यै। अजंस्रं ज्योतिर्नर्भसा सपंदेति। स न इन्द्रंः कामवरं दंदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥ एको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रमजरमनेर्वम्। येनेमा विश्वा भुवंनानि तस्थुः। भद्रं पश्यंन्त उपंसेदुरग्रें। तपों दीक्षामृषंयः सुवर्विदंः। ततंः क्षत्रं बलमोजंश्च जातम्। तदस्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवंनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्युः परमे व्योमन्॥२८॥ रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। श्तर सहस्राणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्वमिदं जर्गत्। प्रजां पशून्धनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रश्मिः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पशून् विश्वरूपान्। पतङ्गमक्तमसुरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचंक्षते। मरीचीनां पदिमंच्छन्ति वेधसंः। पृतङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्धुर्वोऽवदुद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपाँन्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ता १ अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मास् नियंच्छतम्। प्र प्रं यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा स्मानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वेषा सम्तों बहुधैकंरूपाः। वेषा समानामिह रन्तिरस्तु।

रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोर्मतीं मे नियंच्छुत्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष एवेद सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृत्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावानस्य महिमा। अतो ज्यायार्श्च पूर्रुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्वं उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांक्रामत्। साश्नान्शने अभि। तस्मौद्धिराडंजायत। विराजो अधि पूर्वेषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥ यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धयः। त्रिः सप्त समिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंधुन्पुरुषं पृशुम्। तं यृज्ञं बर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृंहृतंः। सम्भृतं पृषदा ज्यम्। पृशू इस्ता इश्चंक्रे वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृंहृतंः। ऋचः सामानि जिज्ञिरे। छन्दा इसि जिज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मां दजायत॥ ३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर्

तस्मौत्। तस्मौज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यहैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तिरक्षम्। शीष्णो द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिदिशः श्रोत्रौत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंर्णं तमंसस्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरेः। नामानि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रक्तः प्रविद्वान्प्रदिश्श्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूरुंषः पुरौंऽत्रृतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नासं हे चं (ज्यायानिध पूरुंषः। अन्यत्र पुरुंषः॥)॥[१२] अन्द्यः सम्भूतः पृथिव्ये रसाँच। विश्वकर्मणः समवर्ततािध। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रैं। वेदाहमेतं पुरुंषं महान्तम्ं। आदित्यवंणं तमसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भविति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां प्दिमेच्छन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वशे सप्त चं॥———[१३]

भूतां सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमांणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जंहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जंहात्येकम्॥४१॥

यतं आबुभूवं। सन्धां च या सन्द्धे ब्रह्मणैषः। रमते तस्मिन्नुत जीर्णे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वोश्चरन्ति जानृतीः। वृत्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमुग्नि । हंव्यवाह १ सिमैन्त्से। त्वं भूती मात्रिश्वा प्रजानाम्॥४२॥ त्वं यज्ञस्त्वमुवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमंस्ते अस्तु सुहवो म एधि। नमों वामस्तु शृणुत १ हवंं मे। प्राणांपानावजिर १ सञ्चरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जीहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जंहितम्। अमुष्यासुंनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

उतो बहुनेकमहर्जहार। अतन्द्रो देवः सदमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्य दत्तं तमहर हंनामि। असंज्ञजान सत आबंभूव। यं यं ज्ञजान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तंमेति। तद्वे त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगंः प्रजापंतेः। भुजंः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणंयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानीङ्गसाथां नवं॥——[१४] हरिष्ट् हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागात्। अयनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः।

प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनंः। कामेन मे काम आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यद्मीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नाधमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेक्राण्मानुंषीणाम्। मृत्यं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवं वीरारश्चलारि च। [१५]
त्रिणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भासि
रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते
योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

आ प्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सप्रथंस्तमः॥४८॥

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषस्ं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्यां उभूदो ते यन्ति ये अंपुरीषु पश्यान्॥४९॥

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं

त्वा सादयामि॥५०॥

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे

स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहाँ ब्रह्महत्यायै स्वाहा सर्वसमै स्वाहाँ॥५१॥

चित्तः संन्तानेनं भवं युक्ता रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निः हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मतस्नाभ्यां महादेवमन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनः शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



## ॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यें वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयुः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदेस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापृती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यें वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यों मन्नकृत्यों मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतों मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदंस्तां जुर्हां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृहतो विंपश्चितः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। देवस्यं सवितुः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसवे। अश्विनौर्बाह्भ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्यामादंदे। अभ्रिरसि नारिरसि। अध्वरकृद्देवेभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा

सर्चां। प्रेतु ब्रह्मण्स्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधसम्। देवा यज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे म॰साथाम्। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंम्द्य। म्खस्य शिरंः। म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवंग्रीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासंमद्य। म्खस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्यासंम्द्या म्खस्य शिरंः। म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा अंसि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंम्द्या म्खस्य शिरंः॥५॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मृखस्य शिरोंऽसि॥६॥ यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य

रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्केन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

प्ते शिरं ऋतावरीरऋद्यासंम्य म्खस्य शिरः शिरः शिरां शि

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवो देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्ग्रिः। सुबाहुरुत शक्त्यौ। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृश्मिष्ठंह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृणत्तुं त्वाक्। छृन्धे

हविः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥———[३]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घमम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशावधिश्रय। प्रतिप्रस्थातुर्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुर्युक्त् सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुंमतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियृष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यह्रंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥———[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घुर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा म्खायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा क्रतंवे स्वाहाँ। ओजसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सिवता मध्वांऽनक्तु॥१२॥ पृथिवीं तपंसस्त्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरिस तपोऽसि। स॰सीदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति

यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वृपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥ अनाधृष्या पुरस्तात्। अग्नेराधिपत्ये। आयुर्मे दाः। पुत्रवंती

दक्षिण्तः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृत्राधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरतः॥१४॥ मित्रावरुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृंतिरुपरिष्टात्। बृह्स्यतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि

भूरिपुत्रा। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥
सूपसदां मे भूया मा मां हि॰सीः। तपोष्वंग्रे अन्तरा॰
अमित्रान्। तपाश॰संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो
अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ
परिचितः। स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा
असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्छि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरेस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्वम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधुं॥१८॥

अनुक्कसादीदुत्त्रतः पाहि प्रतिमा असि यज्तन्ते अन्यञ्जागंतम्स्येकं च॥————[५]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदींचीः। दशोध्वां भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव धर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्रांह्वर्म रुचितस्तवं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मियं रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दिक्षणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोदर्ङ्कः। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मी रुचीय॥२१॥

रोच् $\mathbf{q}$  धेहि नवं च॥———[ $\mathbf{\xi}$ ]

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनु वां देववीतये। सम्ग्निर्ग्निनां गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य सम्गिरतपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सं सूर्येणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोरन्तरिक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥ ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानांम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानांम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्द्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वृर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिह ला मा मा हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपतिर्विशामिस। विश्वासां मानुषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्थ शृतश् हिमाः। त्न्द्राविण्थं हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमिती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सन्दिशि। माऽहश्र रायस्पोषंण् वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुवं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥————[9]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामादंदे। अदित्ये रास्नांसि। इड एहिं। अदित एहिं। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदांपय। यस्ते स्तनः शश्यो यो मयोभूः। येन् विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्तः। सरंस्वति तमिह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिंन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमसि। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुर्मं पात वसवो यजंता वट्। स्वाहां त्वा सूर्यस्य र्श्मयें वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥ अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामन्मतो भर्तु रं शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि रसीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हि रसीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि रसीः। सुवंरसि सुवंमें यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सृतिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमश्विना। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घृमं पांतश्हार्दिवानम्॥३३॥

अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसाताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमो दिवे। नमः पृथिव्ये॥३४॥ दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंमपान्गंच्छ। पितृन्धंमपान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृंथिव्या अष्टौ चं॥—————[९]

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यर्जमानाय पीपिहि। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा मैं न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्वा वार्तः स्कुन्दयात्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सुह निर्धं गंच्छ।

यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने स्मित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिंरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नो॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वार्जवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रशिमभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवर्च्सायं पीपिहि स्कृन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविद्धानें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींग्ने। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्याः शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तृनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायाः। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यसे। वृत्र्णुरंसि श्रं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो स्रिक्तिनीभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो अपह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। विधिषीमिहिं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रिन्तुर्नामांसि दिव्यो गन्ध्वः। तस्यं ते पृद्वद्वंविद्वानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपितः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। सर रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौऽस्मान्द्वेष्टि। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिंऋदृदृषा हिरेः। मृहान्मित्रो न दंरशृतः। सर सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावां। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः। मृहान्त्स्थस्थं ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नर्मस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंम्। आपों दृहशुषीः। तृहतेनाव्यांयन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रों रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधी॰ रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गन्धवों रजसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या।४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमविन्द्चरंणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्मन्थवीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षुं परिजानाद्हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमृहं मनुष्यों मनुष्यान्। सोर्मपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप् ओर्षधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्में भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रं स्निम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवीचः॥५०॥ याऽऽग्रींष्ट्रे तान्तं पुतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा श्रं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंतो विद्य

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि

वनस्पतीनामोषंधीना १ रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

नवानः। कुञ्च नगः सुवृगन्॥ ५१॥

अस्कान्द्यौः पृंथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। या दक्षिणतः। या पश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

**-**[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहां॥५४॥

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुतथ्यांय स्वाहां पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहाँ। पूष्णे सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥

उदंस्य शुष्मौद्भानुर्नार्त बिभेर्ति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मत्सुतंष्टो रथो न वाजी। अर्चन्तु एके महि साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। घर्मः शिरस्तदयमग्निः। पुरीषमसि सं प्रियं प्रजयां पशुमिर्भुवत्। प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते

चितंयो नवं च॥

अग्र इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

अग्निरंसि वैश्वान्तरंऽिस। संवत्सरंऽिस परिवत्सरंऽिस। इदावत्सरंऽसीद्वत्सरंऽिस। इद्वत्सरंऽिस वत्सरंऽिस। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्द्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवत्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्य १ हंसः। विधुन्दंद्राण १ समेने बहूनाम्। युवानु १ सन्तं पिलुतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्रिषः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सुन्धिं मुघवां पुरोवसुः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नुंतं पुनंः। पुनंरूजां सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः परमधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्तरा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानंः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शृतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्स्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयंः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवस्रंरहीडिषाता सपूर्णाः॥—————[२०]

भूर्भुवः सुवंः। मिय त्यिदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या

-[૨૪]

मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजसा सह। क्षत्रेण यशसा सह। सत्येन तपसा सह। तस्य दोहंमशीमहि। तस्यं सुम्नमंशीमहि। तस्यं भृक्षमंशीमहि। तस्यं तु इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपहृतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णा चं। असुक्रानांहृतिश्च। अश्नन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरिनेरा। एतास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयः श्चा निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥ उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसह्वाइश्च सहमानश्च सहस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवस्त्वा पचन्तु। संवृत्स्ररस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

२६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः कूराणि॥६८॥

**?**७]

विगा इंन्द्र विचरंन्तस्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतोऽस्य प्रहेर भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते नमंः। दूशकृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आस्हस्रकृत्वंस्ते

चोभयोः॥७०॥
—————[२९]
यदेतद्वंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय।
तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आत्यार्तिमार्च्छत्॥७१॥

यदींषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वदिति वाचंमेताम्।

तामिन्द्राग्री ब्रह्मणा संविदानौ। शिवामस्मभ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥

दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदिं दक्षिणुतो वदांहिषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥

-[३२]

इत्थादुर्लूक आपंत्रत्। हिरण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आर्गतः। तमितो नांशयाग्रे॥७४॥

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वाचं वदसिं। द्विषतों नः परांवद। तान्मृत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु। अग्निनाऽग्निः संवेदताम्॥७५॥

प्रसार्यं सक्थ्यौ पतंसि। सव्यमिक्षं निपेपिं च। मेहकंस्य

चनामंमत्॥ ७६॥

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन जमदंग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हतः। क्रिमीणाः राजाः। अप्येषाः स्थपतिर्हतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ क्षुद्राः। अर्थो कृष्णा अर्थौ श्वेताः। अर्थो आशातिका हताः। श्वेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

आहरावंद्य। शृतस्यं हिवषो यथां। तत्सत्यम्। यदमुं यमस्य

-[३९]

जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपर्थेन शपामि। घोरेणं त्वा भगेणां चर्श्वषा पेक्षे। रोदेण त्वाङ्गिरमां मनेमा ध्यायामि।

भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वाऽसौ॥७९॥

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोंऽमुं नांशय। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं

द्धिष्मः॥८०॥

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णां नृम्णायि नृम्णां नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

पृथिवी समित्। तामुग्निः समिन्धे। साऽग्निः समिन्धे।

ताम्ह र सिमेन्थे। सा मा सिमेद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिमेन्ता रूप्ताहाँ। अन्तरिक्ष र सिन्॥८२॥

तां वायुः सिनिन्धे। सा वायु सिनिन्धे। ताम्ह सिनिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनिन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिनित्। तामादित्यः सिनिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामृह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदंसि सपत्रक्षयंणी। भातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्योः स्मित्। तामांदित्यः सिमंन्धे। साऽऽदित्य सिमंन्धे। तामह सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा॥८५॥ वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिमंन्ता इ स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्। तां वायुः समिन्धे। सा वायुः समिन्धे। तामृहः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ता क्ष् स्वाहाँ। पृथिवी सिनत्। ताम् ग्निः सिनंन्थे। साऽग्निः सिनंन्थे। ताम् हः सिनंन्थे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन् सिमंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते ऽग्नें व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मित्सिर्मिन्धे व्रतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चंसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥■[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भंवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशि। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयासम् मा वास्तोंशिछत्समह्यवास्तुः स भूयाद्यौँ उस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासि प्रतिष्ठावंन्तो भूयासम् मा प्रतिष्ठायाँश्छितसमह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्यौं उस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व १ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥ दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वातु यद्रपंः। यद्दो वातते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह आवंह वातु आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ेषि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः स्वः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनौर्तां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाख्णं प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्नयः पर्वताश्च यया वार्तः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तभः परिपातम्स्मानरिष्टभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नों मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कर्या निश्चेत्र आ भुंवदूती सदावृंधः सखाँ। कर्या शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मश्हिष्ठो मत्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षु णः सखीनामिवता जीरतृणाम्। शतं भंवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंभुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नो देवीर्भिष्टंय आपो भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशाना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचरे शमयत्। अन्तरिक्षर शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुचर् शमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिचीः शान्तिर्दिशः शान्तिंरवान्तरदिशाः शान्तिंरग्निः शान्तिंवायुः शान्तिंरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिर्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिर्मे अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा मा्ड् श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना ५ रसेनोत्पूर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता ५ अनु। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरत्। पश्यंम शुरदः

शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत शृणवीम श्रदेः श्रतं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाहिभ्राजमानः सरि्रस्य मध्यात्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवंं दाधार पृथिवी । सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीचीं भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

प्रावतीं दधात ब्द्धां जिन्वंथ हुशे सप्त चं॥———[४२] नमों वाचे या चोदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतये नम् ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतो मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उप्स्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै सत्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशे ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तत्सहासदितिं। तेषाँ कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्डवो दंक्षिणार्द्ध आंसीत्। तूर्घ्रमुत्तरार्द्धः। परीणज्ञंघनार्द्धः। मरवं उत्करः॥१॥ तेषां मखं वैष्णवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुत्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। स्व्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मोदिषुधन्वं पुण्यंजन्म। यज्ञजंन्मा हि॥२॥ तमेक र सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृष्णुवन्ति। सौऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥ तत्स्मयाकांना इस्मयाकत्वम्। तस्मांद्वीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेतव्यम्। तेजंसो धृत्यै। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता

उंपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम र रंन्धयाम। यत्र क्वं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेतिं। तस्मांदुपदीका यत्र क्वं च खनन्ति। तदपोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धर्नुर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत् प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यद्स्याः समर्भरन्। तत्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तः स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीष्णां यज्ञेन यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुंवृगं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिंधत्तमितिं। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापिं गृह्यतामितिं। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिद्धाति। तेन् सशींष्णा यज्ञेन् यजमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। तस्मदिष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

जुल्क्रो होते तृन्दन्ति महाबीयुत्वमंब्रुवन्नजयन्त्म् च॥——[१]
सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः
प्रावः। प्रशूनेवावंरुन्धे। चतंस्रो दिशः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति।
छन्दा १सि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं
वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै
याज्यायै॥८॥

देवतांये वषद्वारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा इस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों ह्व्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। ह्विष्कृतं यजमानमुग्रो प्रदेध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायत्री छन्दाङ्स्यत्यंमन्यत। तस्यैं वषद्गारौं ऽभ्यय्य शिरौं ऽच्छिनत्। तस्यैं द्वेधा रसः पर्णपतत्। पृथिवीमुर्द्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्द्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंते प्रस्त्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। वर्ज्ञं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदाह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधस्मित्यांह॥१३॥ पाङ्गो हि यज्ञः। देवा यज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयंः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। यज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य यज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्याह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एतः रसंं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्ं। यद्वंल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसंं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ं ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रंमत॥१६॥ तन्नाद्धियत। स पूर्तीकस्तम्बे परात्रमत। सौऽद्धियत।

सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसः पृश्न्याविंशत्॥१७॥ तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरति। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरत्। ग्राम्यान्पश्रञ्छुचाऽपंयत्। कृष्णाजिनेन सम्भरति। आर्ण्यानेव पृश्रञ्छुचार्पयति। तस्मात्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः प्रावः कनीया सः। शुचा ह्यंताः। लोमतः सम्भरित। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। परिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवो हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धेते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्ये। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेर्ज एवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला केरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः सश्सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपालैः सश्सृजति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचार्पयति। शर्कराभिः स॰सृंजिति धृत्यैं। अथो शन्त्वायं। अज्ञलोमेः स॰सृंजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनूः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा स॰सृंजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः स॰सृंजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञ॰ स॰सृंजिति॥२०॥

याज्यांयै न जुंहुयादविश्द्वेणुः शान्त्यै पृङ्किराधस्मित्यांह हरित दिहन्ति प्राक्रंम्ताविशत् प्रजायंमानानाः स्जित शृन्त्वायाष्टौ चं॥———[२] परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्च्सस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निभ प्राण्यात्। यत्कुर्वन्निभ प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचापयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्रं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनों गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वे वेणुंः। तेजंः प्रवृग्यंः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वे मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवृग्यंः॥२२॥

तस्मदिवमांह। युज्ञस्यं पुदे स्थु इत्यांह। युज्ञस्य ह्यंते

प्दे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोंभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पुतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दार्श्स निष्पत्॥२५॥

छन्दोंभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। वारुणोंऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्वंपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश् आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भेवोध्वंस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषोऽन्धो भवितोः। यः प्रवग्यम्नवीक्षेते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवे त्वा साधवे त्वा सृक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्षण् साधु। असौ सृक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै। इदमहममुमां मुष्यायणं विशा पृशुभिं ब्रह्मवर्च सेन् पर्यूहामीत्यांह। विशैवेनं पुशुभिंब्रह्मवर्चसेन पर्यूहति। विशेतिं राज्नन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवैनं पर्यूहति। पशुभिरिति वैश्यंस्य। पुश्मिरेवेनं पर्यूहति। असुर्यं पात्रमनां च्छृण्णम्॥२८॥ आर्च्धृणति। देवत्राकः। अजुक्षीरेणाऽऽच्छृंणति। पुरुमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। परमेणैवैनं पयसाऽऽच्छ्रंणत्ति। यर्जुषा व्यावृत्त्यै। छन्दोभिराच्छृंणत्ति। छन्दोभिर्वा एष त्रियते। छन्दोभिरेव छन्दा इस्याच्छृणित्ति। छृन्धि वाचिमत्याह। वाचंमेवावंरुन्धे। छृन्ध्यूर्जिमित्यांह। ऊर्जमेवावंरुन्थे। छुन्धि हविरित्यांह। हविरेवार्कः।

देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्याह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥

स्याद्यत् प्रवृग्र्यश्र्छन्दोभिः करोति वीर्यसम्मित्ं छन्दा स्सि निष्पत्पृणेत्याह

सुक्षितिरनाँच्छ्ण्णुञ्छन्दा्र्स्याच्छ्ंणत्त्यष्टौ चं॥———[३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्घमम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्ह् बृह्स्पतिः। यद्व्रह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचरित। आत्मनोऽनांत्र्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंर्द्धयित। मदंन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्ये। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्ये। त्रिष्टुभंः सतीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यजंमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपंहत्ये। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमित्मवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्बांह। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥ यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्मुश्राः। यन्मौश्रो वेदो भवंति। ऊर्जैव

यज्ञस्य शिरः समर्द्धयित। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनिकत्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्तः। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँस्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वर्रहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं पुवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। सश्मीदस्व महा असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। पुते वाव त ऋत्विजंः। ये दंर्शपूर्णमासयौः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूङ्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्धे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तरुतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मैं समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशति। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रश्मर्यः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्य र रिश्मिभिः पर्यूहिति। तस्मांदसावांदित्योंऽमुिष्मिं क्षेत्रेके रिश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्भामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंद्भतं भा आँर्च्छत्। यद्वैकंद्भताः परिधयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्थे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादेश मासाः संवत्सरः। संवत्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मासमवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्द्धिरसीत्यांह व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंम्भयतः परिंगृह्णाति। अर्हंन् बिभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रेष्टुंभमसि जागंतमसीतिं धवित्राण्यादत्ते। छन्दोभिरेवैनान्यादत्ते। मधु मध्विति धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजंमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां तुन्वमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह वा अस्य प्रियां तुनुवमाऋांमिति। यत् त्रिः पुरीत्यं चतुर्थं पर्येति। पुता १ ह वा अंस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुप्त्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेंव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री। सर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्य सर्वतः

## पवते॥४२॥

अग्निश्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवेनं वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। समारुचितो रोच्येत्यांह। आश्चिषेमेवेतामाशाँस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्ट्रंभेन् छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन र् रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्ट्रंभेन् छन्दंसा। समारुचितो रोच्येत्यांह। आश्चिषेमेवेतामाशाँस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागतेन् छन्दंसा॥४३॥

समांरुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रांचयत्वानुंष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवेनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रांचयत्यानुंष्टुभेन छन्दंसा। समारुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वेर्देवैरुपरिंष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैनं विश्वेर्देवैरुपरिंष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दंसा। समारुचितो रोचयेत्याह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते॥४४॥ रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवैष मंनुष्येषु। सम्राह्मर् रुचितस्तवं देवेष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मंनुष्येष्वायुष्माङ्स्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासमित्यांह। रुचित एवैष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी भवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मिय रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामाशां स्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोंचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदंनमेतैर्यजुंभी रोचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥ पृक्षाद्रोंचयित् जागंतेन छन्दंसा पाङ्केन छन्दंसा समारुचितो रोंच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते

शास्तेऽष्टौ चं॥———[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत् प्रवग्र्यः। ग्रीवा उपसर्दः। पुरस्तांदुपसदां प्रवग्र्यं प्रवृंणक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। त्रिः प्रवृंणक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों युज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्द्धमासाः। अर्द्धमासेभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावांनग्निष्टोमः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानिं। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्टे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥ न ह्यंष निपद्यंते। आ च पर्गं च पथिभिश्चरंन्तमित्यांह।

आ च ह्यंष पर्रा च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूंचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समग्रिरग्निनां गुतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां ग्तेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषों ऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्रिस्तपंसा ग्तेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ छोकान्त्सन्दं-धाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तुपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥ गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष पुव पिता। यत् प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्येष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् ह्येष कंवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट्र सं सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रंवर्ग्यं च संश्वास्ति। आयुर्वास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशास्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पितिये दश्मः। नव व पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यजंमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। युज्ञस्य शिरोंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव युज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति॥५५॥ रुचितमवेंक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना सृष्ट्राः। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजन्यों वर्षति। वर्षुंकः प्रजन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्च्सम्। ब्रह्मवर्च्सिनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवैक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवैक्षेत। यत्पत्यविक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यै प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यै प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृंणक्त्यनिंपद्यमान्मित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयति

क्ये कर्गुनामित्यांह प्राणाः प्रतिदेधाति भवन्ति वाचयति च्त्वारि च॥———[६] देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रशनामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्य देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अस्य प्रतानि प्रतानि वा अस्य प्रतानि। एतानि वा अस्य प्रतानि। एतानि वा अस्य प्रतानि। एतानि वा अस्य मनुष्यनामानि॥५८॥

मनुष्यनामैरेवैनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः।

ऋतुभिरेवैनामाह्वयति। अदित्या उष्णीषमसीत्याह। यथायजुरेवैतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वै वृत्सः। पूषा त्वोपावंसृजुत्वित्यांह। पौष्णा वै देवतंया प्शवं:॥५९॥ स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदांपुयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं करोति। यस्ते स्तनः शशय इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्म॰ शिरषोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिरषेत्याह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहस्पतिस्त्वोपं सीद्तित्याह॥६०॥ ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मंणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ पेरंव इत्याह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सर्रस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिंन्वस्व बृहस्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेर्येन समर्द्धयति। द्विरिन्द्रायेत्याह॥६१॥ तस्मादिन्द्रों देवतानां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्ट्रंभोऽसि जागंतमसीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः।

अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्राश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्भरोति। अथों अश्विनांवेव भांग्धेयेन समर्द्धयति॥६२॥

घुर्मं पात वसवो यजंता विडित्यांह। वसूनेव भागधेयेंन् समर्द्धयित। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षार्रसि यज्ञर हंन्युः। विडित्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्वरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञर रक्षार्रसि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यो र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मा एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवेनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छति। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हति। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु १ शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदंर्द्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्नंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहि १ सायै॥६५॥

सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नयेँ त्वा वस्मिते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योँ ऽग्निर्वस्मान्। तस्मां एवेनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वे सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवेनं जुहोति। वर्रणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अप्सु वै वर्रुण आदित्यवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। बृहस्पतंये त्वा विश्वदेंच्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृतस्रो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां पुवैनं जुहोति। एताभ्यं पुवैनं देवताभयो जुहोति। दश सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्यीतिषा स्वाहा रात्रिज्यीतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहेत्याह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोके ऽह्नां परस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तात्। तस्मादसावांदित्यों ऽमुष्मिं होकें ऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥

म्नुष्यनामानि पृशवः सीद्त्वित्याहेन्द्रायेत्याहार्द्धयति घ्रन्ति गृह्णात्यहि रंसायै पञ्चां ऽहाद्तित्यवंते

स्वाहेत्यांह पितृमानेंति चृत्वारिं च॥-------[७]

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्रा एवेनं पाति। विश्वां देवानंयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भाग्धेयेन समर्द्धयित। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्द्धयित। स्वाहाऽग्रये यिज्ञयांय शं यर्ज्ञिनिरत्यांह। अभ्येवेनं घारयित। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घुमं पांतर हार्दिवानमहंदिवाभिकृतिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भागधेयेन समर्द्धयित। अनु वां द्यावांपृथिवी मर्स्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घुमस्य युजेतिं। वर्षद्वृते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुयजित स्वगाकृत्यै। धुममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गुच्छेत्याह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म्पान्गच्छे-त्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशांस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमाशांस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन स्मह निर्धं गमयित। पूष्णे शर्रसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भागधेयेन समर्द्धयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उदंश्चं निरंस्यित। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपंस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यद्नविक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंर्मे दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अहां मा पाह्येषा तें अग्ने समित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिंज्योतिंर्ग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मितिं॥७९॥

यद्यर्जुषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अुग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव हांतव्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ हविर्मधुं हिवरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतम्ऽग्नावित्यांह॥८०॥ प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैनमिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्याह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। स्वधाविनोऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेर्जसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्येण चरन्ति। प्राश्नंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥ संवत्सरं न मा १ समेश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तत्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। विभाजिं सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मादेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजूरंषि विभाजः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इतिं प्रातः सरसांदयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इतिं सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्र समंद्धयति॥८२॥

अक्रुश्विनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिंन्वयित धार्येत्यांह वाचों धर्मपास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायत्सप्त चं॥————[८]

घर्म या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुच्मवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ ह्योकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥ एष्वंव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्याह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तं यद्विशा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जिह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥ प्राश्चमुद्वांसयति। तस्मांदसावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शुफोपयमान्ध्वित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मानमेवैन् ५ सर्तनुं करोति। सात्माऽमुष्मिँ श्लोके भवति। य पुवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥ युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोता ऽन्ववैति। साम वै रंक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधनमुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुव लोकेभ्यो रक्षाङ्स्यपहिन्ति। पुरुषः पुरुषो निधनमुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥ यत्पृंथिव्यामुद्वासयेत्। पृथिवी १ शुचा ऽपंयेत्। यद्प्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽर्पयेत्। यद्वनस्पतिंषु। वनस्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्धा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां पृष पृव नाभिः। यत् प्रवार्यः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीष्मिति द्र्या मधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जीवैनमन्नाद्येन समर्द्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंऋदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥ वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्।

चिदंसि समुद्रयोनिरित्याह। स्वामेवैनं योनिं गमयति।

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश्सोम गन्ध्वमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांणस्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वि-त्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतानि वोचिदत्याह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मै कल्पयति। पुतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगा इत्याह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥ म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पशून्त्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव पुशून्त्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सुन्त्वित्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्म इत्याह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयति। उद्तयं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुवर्गो लोकः। यत्सौरी भवंतः। तेनैव सुवर्गाह्योकान्नेति॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह दधात्यन्वित्यं रक्षस्वी रक्षसामपहत्यै वै हिरंण्यमाहार्द्धयित् ह्येष

गृणात्वत्यांह मनुष्यांनित्यांहास्येषाँऽष्टो च॥———[९] प्रजापतिं वे देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदेँभ्यो न व्यंभवत्।

तद्गिर्व्यकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षरत्। तानि शुक्तयजूङ्ष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पुतयोर्न्यत्। देवानामन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तत्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्द्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवृग्यः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवृग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्णैव मुख् सन्दंधात्युन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वया ५सि पर्यासंते। परि वै ता समां प्रजा वया ईस्यासते॥ ९६॥ तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा पुतज्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्रोंचित। स्वामेवेनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याञ्चोतिंरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥ यं द्विष्यात्। यत्र स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वैश्वानुरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वानरेणाभि प्रवंतियति। औदुंम्बर्या शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥ इदम्हम्मुष्यांमुष्यायुणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहति। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दुर्मा उपदीकंसन्तताः स्युः। तदुद्वांसयेद्वष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावयीं नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदीरयति। असावेवास्मा आदित्यो वृष्टिं नियंच्छति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घुर्मो यन्ति॥———[१०]

प्रजापंतिः सम्भियमांणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावेष आदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसींया १ सं यथाना ममुंप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यां तिंमस्मै कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मांदेवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सुम्नाडिति नक्तम्। पृते वा पृतस्यं प्रिये तनुवौं। पृते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवौं॥१०१॥

प्रियेण् नाम्ना समर्द्धयित। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छिति जनतामायतः। गायत्री देवभ्योऽपाकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यणैवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यणाप्तवन्। यचंतुर्विर्शित्कृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभविति। गायत्रीमाप्तोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छिति। वैश्वदेवः सर्संन्नः॥१०२॥ वसंवः प्रवृक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः

पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पृतानि नामान्यकुरुत। य पृवं वेदं। विदुर्रनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत् इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥ तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा पृष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यद्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वृद्धित्तं त्व्वा स्रमंत्रं ह्यमंने वाय्यते दंधात्येषः॥———[११]
स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन कामा एएति।
यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यते। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्रवृज्यते। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यते।
आदित्यो भूत्वा र्ष्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यते। चन्द्रमां
भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवत्सरमेति। यत्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ ह्योकानेति। यद्दंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ छोका इ-स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वा- ङिमाँ छोका इस्तपंत्रेति। य पुवं वेदं। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजमेति तपति॥——[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥



## ॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

परेयुवारसं प्रवतो महीरनुं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वत स्क्रमंनं जनानां यम राजान हिवधां दुवस्यत। इदं त्वा वस्नं प्रथमन्वागुन्नपैतदूंह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंह्धा विबंन्धुषु। इमौ युंनज्मि ते वही असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंन सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिंददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रैभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥ आयुर्विश्वायुः परिपासति त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्रासंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद १ हविः। अग्नयें रियमते स्वाहाँ। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानिं मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जुरस् आयंति। पुरुंषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी स्ती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नों लोको पर्यसाऽभ्यावंवृत्स्व॥२॥

इयं नारीं पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत उपं त्वा मर्त्य प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहि। हस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वमभि सम्बंभूव। सुवर्ण् ९ हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रियै ब्रह्मंणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयेम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायोजंसे बलांय। अत्रैव त्विमृह व्य र सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयेम। मणिर हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पुष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्वमिह वय र सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमातीर्जयेम॥३॥ इममंग्ने चमसं मा विजीह्नरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्।

एष यश्चम्सो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोण्डिव मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्हंषाणो दर्धद्विधृक्ष्यन्पर्यृङ्खयांतै। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। युदा शृतं कुरवीं जातवेदोऽथेमेनं प्रहिंणुतात्पृतृभ्यः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेमेनं परिंदत्तात्पृतृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुर्गच्छतु वातमातमा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं तें शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तन्वों जातवेदस्ताभिर्वहेम सुकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदो वहेम १ सुकृतां यत्रे लोकाः॥४॥

विद्वान्भ्यावंवृत्स्वाभिमांतीर्जयम् शरीरेश्वत्वारि च। ———[१]
य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो
रक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहांऽपुर्ये कर्मकृते स्वाहा यमत्र

नाधीमस्तस्मै स्वाहाँ। यस्तं इध्मं ज्ञभरंत्सिष्विदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्मात्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वदयं जांयतां पुनः। अग्नये वैश्वानरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥५॥

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोंरवीति। दिविश्विदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे मिह्षो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। स्वंशंनस्तुनुवे चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। नाकं सुप्णमुप् यत्पतंन्तः हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतं यमस्य योनौं शकुनं भुंरुण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौं चतुरक्षौ शबलौं साधुनां पथा।

यौ ते श्वानौ यमरिक्षतारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्या राजन्यिर देह्येन स्वस्ति चौस्मा अनमीवं चे धेहि॥६॥

अर्था पितृन्त्सुंविदत्राः अपींहि यमेन ये संधमादं मदन्ति।

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा ५ अनुं।

धेह्युत्तंरेमाष्टौ चं॥.

तावस्मभ्यं दशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुमुद्येह भुद्रम्। सोम् एकेंभ्यः पवते घृतमेक उपासते। येभ्यो मध् प्रधावति ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजंः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ताङ्श्चिदेवापिं गच्छतात्। तपंसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंगताः। तपो ये चंक्रिरे महत्ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सः रंभध्वमुत्तिष्ठत प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम ये असन्नशेवाः शिवान् वयमभि वाजानुत्तरेम॥७॥ यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्र सहस्रंधारं वितंतमन्तरिक्षे। येनापुनादिन्द्रमनौर्तमार्त्ये तेनाहं मा सर्वतंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिंमिच्छमांनाः। धाुतुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्रय्या वर्चसा स॰सृंजाथ। उद्वयं तमंसस्परि पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुंनातु सविता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

यन्तें अग्निममंन्थाम वृषभायेंव पक्तंवे। इमन्त १ शंमयामसि

क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनंः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिंके शीतिंकावति हार्दुके ह्रार्दुकावति। मुण्डूक्यां सुसङ्गमयेम इस्विग्नि श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शमुं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शर्मु ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्तुनुवे शर्मु ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥ अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंतश्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेषु सङ्गेच्छतां तुनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः स स्वधाभिः समिष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्ते कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः स्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तुनुव् सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं तु एकं पुर ऊतु एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थै। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। यमेन् त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवृतुः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनातु। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अवंशीयता स्धस्थे पश्चं च॥ आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता र सुप्रयतेह बर्हिष्यूर्जाय जात्ये ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत इस्वमुं लोकं विदाने स्वासस्थे भंवतिमन्देवे नः। यमाय सोम र् सुनुत यमार्य जुहुता हविः। यम ४ हं युज्ञो गंच्छत्यमिदूंतो अरंङ्कतः। युमायं घृतवंद्वविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे हव्यं जुहोतन। इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकुन्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जर्गतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजानपुरोध्यः। युमङ्गायं भङ्ग्यश्रवो यो राजांनपरोध्यंः। येनापो नद्यों धन्वांनि येन द्यौः पृंथिवी दढा। हिरण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिरण्याक्षानंयः शफान्। अश्वाननश्येतो दानं यमो राजाभि तिष्ठति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत्। यमाय सर्वमित्रस्थे यत् प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पञ्च यथा षड्यथा पञ्च दशर्षयः। यमं यो विंद्यात्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिंविंजानते॥१२॥ त्रिकंद्रुकेभिः पतंति षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायुत्री त्रिष्टुप्छन्दा रेसि सर्वा ता यम आहिता। अहरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृतवादिनः। ते राजिन्नह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणा इश्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति॥१३॥

पृथिकृत्यों विजान्तेऽन् वेनित्त॥————[५] वैश्वान्रे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुत्स १ शृतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामृहं प्रपितामहं बिभर्त्यिन्वंमाने। द्रप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्थर्रन्तं द्रप्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इम॰ संमुद्र॰ शृतधारमुत्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्ये। घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्रे मा हि॰सीः पर्मे व्योमन्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामिन्नयाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वेर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय् शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते

सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी र रेतसाऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरों देवता। प्रजापंतिवः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अ्ष्रिया अंगन्म स्प्त चं॥———[६]

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अह ५ रिषम्। एता स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादंनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातरं भूमिंमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवी र सुशेवाम्। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबाधिथाः स्पायनास्में भव स्पवश्रना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येंनं भूमि वृणु। उङ्गर्श्वमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासों मधुश्रुतो विश्वाहाँस्मै शरुणाः सुन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबत्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥ एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते

असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम बुर्हिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं युमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बांधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बांधेथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यम्राज्ये विरांजिस। नुळं प्रवमारोंहैतं नुळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नुळप्लंबो भूत्वा सन्तंर प्रत्रोत्तंर॥१८॥ स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरूपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढोंता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरींरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा र रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शर्मु ते सुन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशः शुग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥ अपूपवाँन्यृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपिर। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवानां घृतभागा इह स्थ। पुषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशाँक्षरा ता रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवाना ५ शृतभांगाः क्षीरभांगा दिधंभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा तें यमुसादंने स्वधा निधींयते गृहेंऽसौ। श्ताक्षरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता र रेक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फरन्तीरुत्तर देवतंया हे चं॥———[७] पृतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कामदुघाः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण् इद्विदुः। तासां त्वा मध्यादादेदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तुम्बमाहेरैतां प्रियतेमां ममे। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाइ स्तुम्बमाहेर् रक्षंसामपहत्ये। य एतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनः। दर्भाणाई स्तुम्बमाहेर पितृणामोषधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृण ता अस्य सूर्ददोहसः। शं वातः शं हि ते घृणिः शर्मु ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रुणेन च। वरणो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्यै निर्ऋंत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृंतिरसि विधारयास्मदघा द्वेषा रेसि शमि शमयास्मदघा द्वेषा रेसि यव यवयास्मदघा द्वेषा रेसि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु॥२२॥

फलं पुनातु॥———[८]

आ रोहताऽऽयुंर्जुरसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमार्युः करतु जीवसे वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभियंन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांतरायू ५ षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तुनुवै कूरं चकार मर्त्यः। कृपिर्बभस्ति तेर्जनं पुनर्जुरायु गौरिंव। अपं नः शोशुंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशुंचद्घं मृत्यवे स्वाहां। अनङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो वहिंः सुम्पारंणो भव॥२३॥ इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आर्युः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पुदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रतुरां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भेवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देदाहे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवी अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रै।

यदार्श्वनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परिं। तेनामृतंस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामिस। यथा त्वमृद्धिनत्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविम्म उद्धिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषांश्रेसि युवीऽसि युवयास्मद्घा द्वेषांश्रीस॥२४॥

भ्व जम्भ्याम्सि त्रीणि च॥——[९] अपं नः शोशुंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः

श्रोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भेः अग्ने सूरयो जायेमहि प्रते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचद्घम्। स नः सिन्धुंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशुंचद्घम्। आपंः प्रवणादिंव यतीरपास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुन्रागा्ड् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशुंचद्घम्। न वै तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशुंचद्घम्॥२६॥

अ्घम्घं चृत्वारिं च॥———[१०]

अपंश्याम युवतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्धेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ट्यै। मयैतां माइस्तां भ्रियमाणा देवी सती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियेष्ठामुग्निं मध्रमन्तमूर्मिणुमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् स॰संदेम। स॰ रय्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तये। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना इस्वसादित्यानां ममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुष् जनाय मागामनागामदितिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणौन्यत्तु। ओमुत्सृजत॥२७॥

विधिष्ट द्वे चं॥\_\_\_\_\_[११]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः

शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा समेत् पश्यंत। सौभाँग्यम्स्ये द्त्त्वायाथास्तं वि परंतन। इमां त्विमंन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगां कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिंमेकादशं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासा सि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्यामि। ऋतं विदिष्यामि। सत्यं विदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्कक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥ सत्यं विदिष्यामि पर्यं व॥————[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥———[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-ज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या स्निधः। प्रवचन र् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाक्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा मंहास्र्हिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

स्थिराचार्यः पूर्विक्पिमित्यिष्प्रजं लेकिन॥——[३] यश्छन्दंसामृष्मो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँत्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरींरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मध्मत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्।

मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मध्मतमा। कर्णाभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयापिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती

वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा रसि मम् गावश्च। अन्नपाने च सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पशुभिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शर्मायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥ यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग प्रविंश स्वाहाँ। तस्मिन्त्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वयिं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धातरायंन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशों ऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

भूर्भुवः सुविरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुविरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते।

भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायः। सुव्रित्यांदित्यः।
मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि
महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति
यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा पृताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

भूमी लोकी यज्र्रेषि वेद हे चं॥———[५]
स य एषीं उन्तर्हृंदय आका्शः। तिस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः।
अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं
शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इति वायौ॥१३॥
सुव्रित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारांज्यम्।
आप्नोति मनंस्स्पतिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्यितः। श्रोत्रंपतिर्विज्ञानंपतिः। एतत्ततों भवति। आका्शशंरारं ब्रह्मं।

स्त्यात्मप्राणारांम्ं मनं आनन्दम्। शान्तिसमृद्धम्मृतम्। इति प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

बायाबुमृत्मेकं च॥-----[६]

पृथिव्यंन्तिरक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थि मुजा। पृतदंधि विधायर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इदस् सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

सर्वुमे $\dot{a}$  च॥———[artheta]

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगृरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्रिहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवक्ष्यन्नांह ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥———[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नरश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च पदं॥——[१] अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् स् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्॥१८॥

अहर षर्॥ —————[१०]

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकः सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया से ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिंया देयम्। हिंया देयम्। भिंया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्र्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्र्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदेनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैत्तंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्तम् चं॥——[११] शं नो मित्रः शं वरुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पितिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांविद्षम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवीद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमेवादिषुं पश्चं च॥——[१२]

## ॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहिंतं गुहांयां परमे व्योमन्। सोंऽश्रुते सर्वान्कामान्त्सह। ब्रह्मणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा पृतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अद्भाः पृंथिवी। पृथिव्या ओषंधयः।

ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरसमयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पक्षः। अयमुत्तंरः पक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥१॥ अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्नर हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मौत्सर्वोषधम्चयते। सर्वं वै तेऽन्नमापुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्नू हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वीष्धमुंच्यते। अन्नाद्भृतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकाश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मुनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्मौत्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः।

तस्मात्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्रिव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रेद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तंरः पक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्त्समश्रुंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा

एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्द्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुष्विधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥५॥

असंन्नेव सं भवति। असद्भह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छती(३)॥ आहों विद्वानमुँह्लोकं प्रेत्यं। कश्चित्समंश्ञुता(३) उ। सोऽकामयत। बुहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्ति ह्वा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तत्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयंनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यमभवत्। यदिदं किं च। तत्सत्यमित्याचक्षते। तदप्येष श्लोको भवति॥६॥ असुद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत।

तदात्मान इस्वयंमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वें तत्सुकृतम्। रंसो वै सः। रस इह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी भ्वति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भ्वति। यदा ह्येवेष एतस्मिन्नदर्गनंतं कुरुते। अथ तस्य भयं भ्वति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भ्वति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्ने-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावित पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा भवित। युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दृढिष्ठो बल्रिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनुन्दः। ते ये शतं मानुषां आनुन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दाः। स एको देवगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानुन्दाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानामानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं देवानांमानन्दाः। स एक इन्द्रंस्यानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमिन्द्रंस्यानन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः। स एकः प्रजापतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं प्रजापतेंरानन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामति। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एतः ह वावं न तपित। किमहः साधं नाक्रवम्। किमहं पापमकरंविमृति। स य एवं विद्वानेते आत्मानः स्पृणुते। उभे ह्येवैष एते आत्मानः स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

# ॥नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥१॥ अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धीव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनंरेव वर्रुणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनंरेव वर्रुणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुखा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥४॥ विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना् छेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिष्कृज्ञायं। पुनंरेव वर्रुणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुह्वा॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाु खेव खिल्वमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। सेषा भागिवी वारुणी विद्या। पर्मे व्यामन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृश्भिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निन्द्यात्। तद्वृतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य पृतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नेवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥ अन्नं न परिचक्षीत। तद्वतम्। आपो वा अन्नम्।

ज्योतिंरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भविति प्रजयां पृशुभिन्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बुहु कुंवीत। तद्वृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृंथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य पुतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भंवति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥ न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्निमंत्याचक्षते। एतद्वे मुखतों ऽन्नर राद्धम्। मुखतोऽस्मा अंन्नर राध्यते। एतद्वै मध्यतो ऽन्न राद्धम्। मध्यतो ऽस्मा अन्न राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्रांणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिंति वृष्टौ। बलिमंति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति

नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चीयं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः। स ये एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतत्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



# ॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

#### ॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्वरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं मृहीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेर्जसा भार्जसा च। यमन्तः संमुद्रे कवयो वयन्ति यदक्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पश्र्श्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयस १ हि परौत्परं यन्महंतो महान्तम्। यदेकमव्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्ववाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्ववाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्ववाग्निः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कृला मृहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्द्धमासा मासां ऋतवंः संवत्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपंः प्रदुषे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशः॥२॥

न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्ं। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिक्नुंष्ठो य एनं विदुरमृंतास्ते भंवन्ति॥ अन्द्राः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुंखाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुंकृत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकंः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र

विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद॰ सं च विचैक्॰ स ओतः प्रोतिश्च विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोंचे अमृतं नु विद्वान्गंन्धवीं नाम् निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिंता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवृतुः पृताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जनिता स विंधाता धामांनि वेद भ्वंनानि विश्वा। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्येरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यऽऽत्मनऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पतिमद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सनिं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्रन्निर्ऋतिं ममं॥४॥

पुश्श्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगत्। अबिंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

#### ॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयांत्। तत्पुरुंषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नंः षण्मुखः प्रचोदयांत्। तत्पुरुषाय विदाहे स्वर्णपक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विदाहें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नौं ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयांत्। वज्रनुखायं विद्महं तीक्ष्णदः ष्ट्रायं धीमहि॥६॥ तन्नों नारसि ए प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महं कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

## ॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरेमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरते मे पापं दूर्वा दुंस्वप्रनाशनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहेन्ती पर्रुषः परुषः परि॥७॥

एवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यास्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वेक्तान्ते रंथकान्ते विष्णुक्तान्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

### ॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमित्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिके प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निर्णुद मृत्तिके। तयां हतेनं पापेन् गच्छामि पेरमां गतिम्।

#### ॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयामहे ततों नो अभयं कृषि। मधंवन्छुग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विम्धों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नुस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिंर्दधातु। आपाँन्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरंमा । ऋजीषी। सोमो विश्वान्यतसावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुची वेन आवः। सबुधियां उपमा अस्य विष्ठाः स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। स्योना पृथिवि भवां ऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सप्रथाः। गन्यद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी ५ सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भजतु। अलक्ष्मीमें नश्यतु। विष्णुंमुखा वै देवाश्छन्दोंभिरिमाँ लोकानंनप-ज्ययम्भ्यंजयन्। मुहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोडशी शर्म यच्छत्॥१०॥ स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवेन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्त्सीदतु यौंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पिवत्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पिवत्रंण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। सजोषां इन्द्र सगंणो मुरुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जहि शत्रूर् रप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यौऽस्मान् द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आप्रो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

मृहेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयते ह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

# ॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनंसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पतिः सविता चं पुनन्तु पुनंः पुनः। नमोऽग्नयैंऽप्सुमते नम् इन्द्रांय नमो

वर्रुणाय नमो वारुण्यै नमोऽज्ञः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकित्वषः। नार्कस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चाप्सु वर्रणः स पुनात्वघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्वि स्तोम सचता परुष्णिया। असिक्रिया मरुद्विधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये श्रुणुह्या सुषोमया। ऋतं च सत्यं चाभौद्धात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥१३॥

समुद्रार्दर्णवादिधे संवत्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विद्धिक्षेस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचुन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमंकल्पयत्। दिवंं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वरुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मय् सङ्श्रिंत्र सुवंः॥१४॥
स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि।
ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि।
अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि
स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुत्तपगः।
वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मौत्पापात् प्रमुंच्यते। रजो
भूमिंस्त्वमा रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रौन्त्समुद्रः
प्रथमे विधमं जनयंन्य्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे
अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

# ॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम् सोमंमरातीयतो निर्जहाति वेदंः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कंर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी १ शरणमहं प्रपंद्ये सुतर्रिस तरसे नमंः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्त्स्वस्तिभिरितं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौंऽस्माकं बोध्यविता तुनूनौम्। पृत्नाजित् सहंमानम्ग्निमुग्न ह्वेम पर्मात्स्थस्थात्। सनः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्देवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रलोषि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच होता नव्यश्च सित्सं। स्वाश्चांग्ने तुन्वं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषित्तं तवेन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकंस्य पृष्ठम्भि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

# ॥व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्नयं पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवरत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरत्रमोम्॥१७॥

भूरग्नये पृथिव्ये स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः

**-**[५]

**-**[り]

स्वाह्य नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरग्र ओम्॥१८॥

भूरग्नयं च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्मह्रोम्॥१९॥

# ॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतऋंतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्च तसृभिवसो स्वाहा॥२१॥

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपृश्छन्दौभ्यृश्छन्दा ईस्याविवेशं।

सता १ शिक्यः पुरोवाचों पिन्षि दिन्द्रों ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

नम् ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं

कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

#### ॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपंः सत्यं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दमस्तपः शमस्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपौस्यैतत्तपंः॥२४॥

[68]

**-**[3]

## ॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्थो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्थो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुप्सेत्॥२५॥

#### ॥ दहरविद्या ॥

अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंऋतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सुप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मौत्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जि्ह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चर्रन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिंताः सप्त संप्त। अतः समुद्रा गि्रयंश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पदवीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्ती ५ सरूपाम्। अजो ह्येकों जुषमाणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभौगामजौऽन्यः॥२६॥

हु सः श्वीच्षद्वस्रं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्द्रोणसत्। नृषद्वरसदेत्सद्धोमसद्जा गोजा ऋत्जा अद्विजा ऋतं बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धामे। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ वक्षि ह्व्यम्। सुमुद्रादूर्मिर्मधूमा ५ उदांरदुपा ५ शुना सममृतत्वमानट्। घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्ना देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या ५ आविवेश॥२७॥ त्रिधां हितं पृणिभिर्गृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक सूर्य एकं जजान वेनादेक सव्धया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिरुण्युगुर्भं पंश्यत् जायंमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापर्मस्त् किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायों ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यार्गेनैके अमृतत्वमांनशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभ्राजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः।

ते ब्रह्मलोके तु पराँन्तकाले परांमृतात्परिंमुच्यन्ति सर्वे। दहुं विपापं परमेंश्मभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तत्रापि दहुं गुगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

\_\_\_\_[१२]

## ॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवमक्षरं परमं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वंमेवदं पुरुष्ट्यतिद्वश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्यऽऽत्मेश्वंर् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। यचं किश्चित्रंगत्स्मवं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तर्विहिश्चं तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनेन्तमव्ययं क्वि॰ संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पुद्मकोुश

प्रतीकाश् हदयं चाप्यधोमुंखम्। अधों निष्ट्या विंतस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यऽऽयतनं महत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोश्सन्निभम्। तस्यान्ते सुषिर सूक्ष्मं तस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोम्खः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजुरः क्विः। तिर्यगूर्ध्वमधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल-मस्तंकः। तस्य मध्ये वह्निंशिखा अणीयोंर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वरा। नीवारशूकेवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षंरः परमः स्वराट्॥३०॥

नारायुणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारि च॥————[१३]

## ॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽचिंदीप्यते तानि सामोनि स साम्रां

मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिष् पुरुषस्तानि यजूर्षष् स यजुषा मण्डल् स यजुषां लोकः सैषा त्रय्येवं विद्या तंपति य एषोंऽन्तरांदित्ये हिंर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

\_\_\_\_[۶۶]

# ॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्रक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुराकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तत्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्रोत्येतासामेव देवतानाश् सायुंज्यश् सार्षिताश् समानलोकतामाप्रोति य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥३२॥

**े१५**]

## ॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यलिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णलिङ्गाय नमः। दिव्याय नमः।

-[१६]

<u> [१७</u>]

दिव्यलिङ्गाय् नमः। भवाय् नमः। भवलिङ्गाय् नमः। शर्वाय् नमः। शर्वलिङ्गाय् नमः। शिवाय् नमः। शिवलिङ्गाय् नमः। ज्वलाय् नमः। ज्वललिङ्गाय् नमः। आत्माय् नमः। आत्मलिङ्गाय् नमः। परमाय् नमः। परमलिङ्गाय् नमः। एतत्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

## ॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रंपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भुवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभृतदमनाय नमो

मुनोन्मनाय नर्मः॥३५॥

**-**[१८]

·[१९]

-[२०]

-[२१]

-[२२]

#### ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिब्रह्मणो-ऽधिपतिब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतये-ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

**-**[२७|

ऋत र सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं विंरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नर्मः॥४०॥ **-**[२३] सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमंः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बहुधा जातं जायंमानं च यत्। सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्में रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥ —-[૨૪] कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम १ हृदे। सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥ ——[२५] ॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥ यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहृतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥ ——[२६] कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

## ॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्रवा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा रे सर्वभूतानां माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं विसिष्ठः॥४५॥

## ॥सर्वेदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा आपः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापः सम्राडापो विराडापः स्वराडापृश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

[ 5 8 ]

#### ॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यद्चिष्ठेष्टमभौज्यं यद्वी दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

-[३२]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४८॥

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्वा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृंतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

# ॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

#### ॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदहाँत्कुरुते पापं तदहाँत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियाँत्कुरुते पापं तद्रात्रियाँतप्रतिमुच्यंते। सर्व वर्णे मंहादेवि सन्ध्याविंद्ये सरस्वंति॥५१॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्म्खं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भ्वः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तत्संवितुर्वरेंण्यं भर्गों देवस्यं धीमहि। धियो यो

नंः प्रचोदयाँत्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

-[३५]

## ॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

-[३६]

## ॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरिन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

**----**[ξ6]

## ॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्तें सोम प्रजावत्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्तें सोम प्राणा इस्तां जुहोमि। त्रिसुपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिसुंपण्ं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किः पुनन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियं सुव।

विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि पर्रा सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। मधु वार्ता ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वीर्नः

स्न्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषस्नि मधुंमृत्पार्थिव् रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पतिर्मधुंमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूण्हृत्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्रौह्मणास्त्रिसुंपण्ं पठन्ति।

ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मेधवा। मधुं मेधवा। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो

गृध्रांणा इ स्वधितिर्वनांना इ सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। हर्सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्ष्मस्द्रोतां वेदिषदतिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋंतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा समित्स्रंवन्ति सरितो न घेनाः। अन्तर्हदा मनंसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययों वेत्सो मध्यं आसाम्। तस्मिन्त्सुपूर्णो मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवताँभ्यः। तस्यांसते हरेयः सप्ततीरें स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीरहत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिस्ंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

\_\_\_\_\_[४o]

## ॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीरांः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंविति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विंन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

**-**[४३]

**-**[88]

मेथां म् इन्द्रों ददातु मेथां देवी सरंस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अप्सरासुं च या मेथा गंन्धवेंषुं च यन्मनंः। देवीं मेथा सरंस्वती सा मांं मेथा सुरभिर्जुषता्ड् स्वाहां॥५९॥

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जग्म्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

# ॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु।

\_\_\_\_[४७]

पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनेः शीयता र्यायः स च तात्रः शचीपतिः॥६२॥

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

वार्तं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्नांयतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्रः। प्रत्यौहतामुश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

हिर् हर्गन्तमनुयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुमेदमागादयंनं मा विवंधीर्विक्रमस्व॥६६॥

-[५३]

शल्कैरग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौलींकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

मा नों मुहान्तंमुत मा नों अर्भुकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

मा नंस्तोके तनये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नों रुद्र भामितोऽवंधीर्हविष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव।

——[५૪]

<u> - [५५]</u>

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु व्यः स्याम् पर्तयो रयीणाम्॥७१॥

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमीव

बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥ **—**[५६]

ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

**-**[५७]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

#### ॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृत्स्यैनंसोऽव्यजनंमसि स्वाहां। मनुष्यंकृतस्यैनंसो-ऽवयजनमिस स्वाहां। पितृकृतस्येनंसोऽवयजनमिस स्वाहाँ। आत्मकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमसि स्वाहाँ। अन्यकृतस्यैनंसोऽवयजनंमसि स्वाहां। अस्मत्कृंतस्यैनंसो-ऽवयजनमिसि स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनश्चकृम तस्यांवयजनमिस स्वाहां। यत्स्वपन्तश्च जाग्रंतश्चेनश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहां। यत्सुषुप्तश्च जाग्रंतश्चेनश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहां। यद्विद्वारसश्चाविद्वारसश्चेनश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहां। एनस एनसोऽवयजनमंसि स्वाहा॥७६॥

# ॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्वयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

**-**[६०]

-[५९]

### ॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीन्नमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कारियता नाहं कारियता एष ते काम कार्माय स्वाहा॥७८॥

**—**[६१]

मन्युरकार्षीन्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कारियता नाहं कारियता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

### ॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सपिष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्वरितं मंयि स्वाहा। चोरस्यान्नं नंवश्राद्धं ब्रह्महा गुंरुत्त्पगः। गोस्तेय सुंरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

-[६४] प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो-बुद्धाकृतिःसङ्कल्पा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासः स्वाहाँ। त्वक्रममा स्सरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो-ऽस्थीनि में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्रोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहां। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ॥८२॥

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में

-[૬૬]

शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिं रहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहां। परमात्मा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविट्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषौंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान इ स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ॥८३॥

## ॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टुकृते स्वाहाँ ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अन्न्यः स्वाहाँ। ओष्धिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच् चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्येभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ।
यथा कूंपः शत्यांरः सहस्रंधारो अक्षितः। पुवा में अस्तु
धान्यः सहस्रंधारमिक्षितम्। धर्नधान्ये स्वाहाँ। ये भूताः
प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः।
तेभ्यों बिले पृष्टिकामों हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिपतिर्दधातु

स्वाहाँ॥८७॥

\_\_\_\_\_[ε<sub>0</sub>]

ओं तद्व्रह्म। ओं तद्वायुः। ओं तद्वात्मा। ओं तत्स्त्यम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्सर्वम्। अन्तश्चरितं भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिष्। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्वारस्त्वमिन्द्रस्त्व रहस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

**-**[६८]

### ॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायां मपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्त्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमिस॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहां॥ श्रद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो स्वाहां॥ श्रद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो

——[६९]

<u>----</u>[りo]

मां विशाप्रंदाहाय। व्यानाय स्वाहाँ॥ श्रृद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रृद्धाया र समाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

# ॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमपाने निर्विषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निर्विषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमुदाने निर्विषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धाया समाने निर्विषयामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

## ॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चे समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

**-**[७२]

**—**[७३]

### ॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्वक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजंः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सुह नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंमुंमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

॥ हृद्यालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

**-**[७५]

**-**[७४]

### ॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिंः॥९५॥

[3*0* 

### ॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवने में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[*しし*]

#### ॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न स्वां शिक्षां द्यां वन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मां त्सृत्ये रंमन्ते । तप् इति तपो नानश्नात्परं यिद्धे परं तपस्तद्दुर्द्धर्षं तद्दुरां धर्षं तस्मात्तपं सि रमन्ते । दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशः सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं

<del>-----</del>[७८]

तस्मौद्धर्मे रंमन्ते ॰ प्रजन इति भूया रंसस्तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनेने रमन्तेऽग्रय ॰ इत्याह तस्मादग्रय आर्घातव्या अग्निहोत्रमित्याह तस्मादग्निहोत्रे रंमन्ते ॰ यज्ञ इतिं यज्ञो हि देवास्तस्माँ चज्ञे रंमन्ते ॰ 。 न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा रेसि न्यास एवात्यंरेचयद्य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥९७॥

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रीतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौत्सत्यं पेरमं वदन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुदामारांतीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वदंन्ति ॰ दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवेरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माइमेः पर्मं वदन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वदन्ति ॰ दानं यज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार ५ सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँद्दानं पंरमं वर्दन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जर्गतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपस्पिन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदन्ति 🏻 प्रजननं वै प्रतिष्ठा लोके साध् प्रजायाँ स्तुन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजर्ननं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयी विद्या ० देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमंन्वाहार्यपचेनं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मोदुग्नीन्पर्मं वदेन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायण सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पर्मं वदन्ति । यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गृता युज्ञेनासुरानपांनुदन्त युज्ञेनं द्विषुन्तो मित्रा भंवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ छज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनंसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानसं पेरमं वदेन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणौं ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापितः संवत्सर इति संवत्सरोऽसावादित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिंरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यों वर्षित पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारंण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्त्सर्वांण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भेवन्ति ० भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरिदशाश्च स वै सर्विमिदं जगत्स च भूत र स भव्यं जिज्ञासकुप्त ऋतजा रियष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वा तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मां त्र्यासमेषां तपंसामितिरिक्तमाहुं वसुरण्वो विभूरंसि प्राणे त्वमिसं सन्धाता ब्रह्मंन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमं स्याग्निरंसि वर्चोदास्त्वमं स्याग्निरंसि वर्चोदास्त्वमं स्याप्ति सूर्यं स्य सुम्नोदास्त्वमं चन्द्रमं स्याप्ति व्याप्ति व्रह्मणे त्वा व्याप्ति अभित्यात्मानं यु त्रीतितद्वे महोप्निषंदं देवानां गुह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणे महिमानं माप्नोति तस्मां द्वा त्या निह्मानं मित्युप्निषत्॥ ९८॥

#### ॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रुद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमांनि ब्र्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आज्यं मृन्यः पृशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा अत्रेममुग्नीद्यावद्भियंते सा दीक्षा यदश्ञाति तद्धविर्यत्पिषंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यत्स्अरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवग्यों यन्मुखं तदांहवनीयो या व्याहंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति

यत्सायं प्रातरंत्ति तत्सिमिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्द्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवत्सराश्चे परिवत्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा एतत्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जंरामर्यमग्निहोत्र ध सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ् ॰ यो दक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य १ सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्महिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्रोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

[०)

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ हरिः ओम्॥



# ॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

संज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानम्पुकल्पंमानम्पुकृष्ठं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयत्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्त्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपृङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायमाना प्यायमाना प्यायमाना प्यायमाना प्यायमाना पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥५॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्त्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्य्र-भवंन्त्सम्भवन्त्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् स७ स्तुतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रममृतं तेज्ञस्वि तेजः सिमंद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपृत्तपंस्वत्। सविता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंश्वित्तित तपंन्वितपंन्त्सन्तपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमांनाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुमन्ताऽऽनुन्दो मोर्दः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा-दयैन्त्स १ सार्दनः स १ संन्नः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भुवंः। पवित्रं पवियुष्यन्पूतो मेध्यंः। यशो यशस्वानायुरमृतः। जीवो जीविष्यन्त्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्त्सहीयानोजंस्वान्त्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्त्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥ अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नेवान्नसंवानिरावान्। सर्वौष्धः संम्भरो महंस्वान्। पुजत्का जोंवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। स्रिस्राः सुशेरवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंन्नतिद्रवन्। त्वर इस्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिंरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्यं ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवत्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नं चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। भुवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। स्वंरािदत्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्त्संवत्सरं चं। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्त्संवत्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद॥ प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद॥ प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सींद॥ प्रजापंतिस्त्वा सादयत्।

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते

ज्योतिंरिष्टके। तेनं मे तपा तेनं मे ज्वला तेनं मे दीदिहि। यावंद्देवाः। याव्दसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

**3**]

संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसि। इदावत्सरोऽसीद्वत्सरो-ऽसि। इद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्तंयः। अपूरपृक्षाः पुरीषम्॥७॥ अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यां दिशि महीयसे। ततो नो मह आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि।

चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या प्रसारय। अहा समेच। काम् प्रसारय। काम समेच॥९॥

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशों महत्। सृत्यं तपो नामं। रूपममृतम्ं। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुः। विश्वं यशों महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजंमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृत्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पत्ये स्वाहाऽ है हस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ।

सम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्र सर्पाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्धों अर्षति। अहिंर्ह जीर्णामतिंसर्पति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसर्द्वृषा हरिः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपक्षुधम्। अपेतः शपर्थं जहि। अर्था नो अग्न आवंह। रायस्पोष ५ सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रमयुतं पाशाः। मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययां। सर्वानवंयजामहे। भक्षौऽस्यमृतभक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मध्मतः। उपहतस्योपहतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मर्नः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्में वाचि श्रितः। वाग्यृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। सूर्यो

प्राणो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चुन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥

मनो हदये। हदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र हदये। हदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल्॰ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मं आत्मिनं श्रितः॥२१॥ आत्मा हृदंये। हृदेयं मिये। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुन्रायुरागाँत्। पुनंः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वानरो रिषमिनिर्वावृधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्मांद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मींमा ५ साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस विद्यं मे पाप्मानुमितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरसि वृश्चं मे पाप्मानमितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्यु इहो हा ऽऽर्रुणः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्य प्रजिंघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेर्त्थ सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैंषीत्। वेर्त्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच् वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित् इति। प्रोरंज्सीति। कस्तद्यत्परोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपित। एषौंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। स्तय इति। किं तत्सत्यमिति। तप इति॥२६॥

कस्मिन्न तप् इति। बल् इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इति माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वे ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेति॥२७॥

तस्मौत्सावित्रे न संवेदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे स्वंदेते। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छ्रियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टंत स्तुता संन्वतीतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्यं मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहंस्वान्त्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्येव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यज्ञकृतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पृष संवत्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पृष पृव तत्। पृष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेंहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं ज्यिति। नास्यामुष्मिं होके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विज्ञहंद्ध् वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं ज्यिति। नास्यामुष्मिं होके ऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदे। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हुर्सो हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर ह वागदृश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहर सांवित्रः। देवानांमृत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। यज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हू वै सावित्रस्याष्टाक्षेरं पदः श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

एतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य एवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतद्वाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरं पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद किमृचा केरिष्यति। य इत्ति दुस्त इमे समांसत् इति। न ह् वा एतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽथौंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥ तदेतत्पंरि यद्दंवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वूर्गे लोक एति। विजहिद्दश्वां भूतानि सम्पश्यत्। आर्द्रो ह् वै पिन्वंमानः। स्वूर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह् वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहि सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वूर्योऽग्निः पारियुष्णुरमृतात्सम्भूत् इति। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इति हैवेनं तद्वाच॥३७॥

ड्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रंयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषाङ्श्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ यो न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। पृतावंनुवाकौ पूर्वपृक्षस्यां-होरात्राणां नाम्धेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंत स् सुता सुन्वतीतिं। पृतावंनुवाकावंपरपृक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य पृवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहं-स्वान्त्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वै यंज्ञऋतूनां चंर्तूनां चं संवत्स्रस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवत्स्र आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्स्र इतिं। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवत्स्रस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥ न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवत्स्र आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। स एतेषांमेव संलोकता स् सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं। कश्चित्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ग्यो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवतमृग्निः सांवित्रं वेदं। स पुवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तत्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इद॰ स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं छोके शेवधिं धेयन्ति। धीत १ हैव स शेवधिमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि १ सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोरात्राणि। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधीतः हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायंभिं ब्रह्मचर्यम्वास। तः ह जीर्णि क् स्थविंर् श्रयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योंवाच। भर्रद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुंर्द्द्याम्। किमेंनेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामञ्च्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वे वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायुर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वे संविवद्येति॥४६॥

तस्मैं हैतमृग्नि सांवित्रमुंवाच। तः स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेंति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं

<del>--</del>[११]

वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्त १ हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नामधेयांनि। अग्नेर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नामधेयांनि। वायोर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेर्व एतानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेर्व सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। प्रजापतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापतेर्व सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुर्व। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरंण। तत्सर्व सीव्यति। तस्मांत्सावित्रः॥४९॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोऽसि स्वर्गोऽसि। अनुन्तौऽस्यपारोऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्ष्य्योऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१॥

तपोऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघ्मिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भृतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥३॥

समुद्रोऽसि तेर्जिस श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर्ं सुभूतम्। विश्वस्य भूतां विश्वस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धुवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्मु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्युग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः।

विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रीं विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवत्स्रस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृंणि विश्वंस्य जनयितृणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुचान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१३॥

संवत्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१४॥

ऋतवेः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतरिो विश्वंस्य जनियतारेः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१५॥

मासाः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं।

इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतर्गे विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूर्व्यो विश्वंस्य जनिय्त्र्यौ। ते वामुपंदधे कामृदुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्याः। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥१९॥

रार्डसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूती विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिसे भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमंर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिश्लंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मार्रुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विंधतः पांसि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पृश्चमाः षृष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नेवमेषुं श्रयध्वम्। नवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दशमा एकादशेषुं श्रयध्वम्। एकादशा द्वांदशेषुं श्रयध्वम्। द्वादशास्त्रयोदशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदशाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चतुर्दशाः पंश्चदशेषुं श्रयध्वम्। पृश्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। सप्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। एकविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शोषुं श्रयध्वम्। त्रयोविर्शोषुं श्रयध्वम्। चतुर्विर्शाः पंञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। चतुर्विर्शाः पंञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शोषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्वविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्याविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम् स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयध्वम्। स्वविष्ठेषुं श्रयं स्वविष्ठेष्ठेष्ठेष्वेष्ठेष्ठेष्वेष्ठेष्ठेष्ठेष्याविष्ठेष्ठेष्ठेष्येष्ठेष्ठेष्ठेष्ठेष्ठेष्ठेष्येष्ठेष्येष्ठेष्ठेष

षड्विष्शाः संप्तविष्शेषुं श्रयध्वम्। सप्तविष्शा अष्टाविष्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविष्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविष्शा एंकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्र्शास्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिष्शा एंकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिष्शा एंकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिष्शास्त्रंय-स्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिष्शास्त्रंय-स्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिष्शाः। उत्तरे

भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोिम। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पत्तयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२५॥

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वर्धन्तु वां गिरं। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्यांम पत्यो रयीणाम्। भूभुंवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतों गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह इस्वयम्। रुचा रुरुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वंराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रज्ञनौ प्रजायिय। वय स्याम् पतियो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

स्प्त ते अग्ने स्मिधं स्प्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धार्म

प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। सप्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निश्स स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र्र् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्र् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावरुणी देवतां। मित्रावरुणी स दिशां देवौ देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति॥३०॥ ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिर्देवतां। बृह्स्पतिर् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंतिर् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंतिर् स दिशां देवीं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्त्समंध्यत्॥३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बृधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥३२॥

यत्तेऽचितं यदुं चितं तें अग्ने। यत्तं ऊनं यदु तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदङ्गिरसश्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सर्श्वितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्वासि भूयांङ्श्वास्यग्ने। लोकं पृंण च्छिद्रं पृंण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥ तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोम 🕏 श्रीणन्ति पृश्नयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भवा सीद। अग्ने देवा ध इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥ यो दीदाय समिद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभानू रोदंसी अन्तरुवीं।

स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसार्धनम्।

अग्निश् होतांरं पिर्भूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हृविषंः समानित्। त्वां मृहो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्वा निधीमिह। मृनुष्वत्सिमिधीमिह। अग्ने मनुष्वदिङ्गिरः॥३५॥ देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृंथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वान्रः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्ँ। यदुदङ्ङं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥ अथ् यत्संवाति। तदंस्य समर्श्चनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ ह वा अंस्मै स कामः पद्यते। यत्कांमो यज्ते। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतेनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हृ वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जमा यशंसा। अस्मिश्क्षं लोकेंऽमुष्मिंश्क्षं भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्ष्रय्यं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोऽनन्तमंपारमंक्ष्य्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अन्नतः हु वा अंपारमंक्ष्य्यं लोकं जंयित। यौंऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमंहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रुतः। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥ उशन् हु वे वांजश्रव्सः संविवद्सं दंदौ। तस्यं हु नचिकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवै त्वा ददामीति। त॰ ह स्मोत्थितं वाग्भिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारिमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामिति। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यिदं त्वा पृच्छेत्। कुमार् कित रात्रीरवात्सीरिति। तिस्र इति प्रतिब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्क्त् इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त् इतिं। तं वे प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित् रात्रीरवात्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥ किं प्रथमा रात्रिंमाश्रा इतिं। प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां

त् इतिं। नमंस्ते अस्तु भगव् इतिं होवाच। वरंं वृणी्ष्वेतिं। पितरंमेव जीवंन्नयानीतिं। द्वितीयंं वृणी्ष्वेतिं॥४५॥

ड्ष्ष्टापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्'वाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षींयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षींयेते। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्'वाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिंरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नो वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मे तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायेव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णामीति। सोऽदक्षत् दक्षिणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते ह् वै दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतद्धं सम् वै तद्धिद्धा स्मां वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णान्ति। उभयेन वयं दिक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्णाते। तेऽदक्षन्त दिक्षिणां प्रतिगृह्णां। दक्षेते ह् वै दक्षिणां प्रतिगृह्णां। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

۷]

त १ हैतमेके पशुबन्ध प्रवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तरवेदिसंम्मित
पृषोंऽग्निरिति वर्दन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन्
व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः। कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये
वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्।
एतमृग्निं कामेन् समर्धयिति। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥
कामेन् समर्धयिति। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तरवेद्यामेव
सन्नियमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं
लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं
जयित। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ

हैनं वायुर्ऋिद्धंकामः॥५१॥

यथान्युप्तम्वोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्ग्नीत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृग्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोबलो वार्णाः पृश्वकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तात्॥५२॥ पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोत्तरतः। एकां मध्ये। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनाप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं पृजापंतिज्येष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजननकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिणतः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्येष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजातिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्येष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यमाप्नोति। एतां प्रजातिं प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुत्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणींतु। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेतिं। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरितिं। दक्षिणासु नीयमांनासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राचीं जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहव्नीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्धंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कुप्तिभिरिभेगृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नंपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त तें अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं छोके देवताः। तासा ह सायुंज्य श् सलोकतां माप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादेश। य एवामी उरवश्च वरीं या श्मश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भि जंयति॥ कामचारों ह् वा अंस्योरुषुं च वरीं यः सु च लोकेषुं भवति। यो ऽग्निं नां चिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृतसरो वा अग्निर्नां चिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥ ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षा उत्तंरः। शरत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धाराँ। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्त्सम्पूरयति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः

समाप्तः॥ २॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमतिरन्विदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य काम्स्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यंं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। हुव्यवाहुङ् स्विष्टम्॥१॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायें चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽऽशायै स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजापते कामेंन वै श्राम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। कार्माय चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाये लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥

तं ब्रह्मांऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्रांम्यसि। अहमु वै ब्रह्मांऽस्मि। मां नु यजंस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्प्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् युज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह् वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं यज्ञौऽब्रवीत्। प्रजापते यज्ञेन वै श्रौम्यसि। अहमु वै यज्ञौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमग्नये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। यज्ञायं चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो यज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां यज्ञाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽप्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथु त्वयि सर्वे कामाः श्रयिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अद्मश्चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मिन्त्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽद्धः स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥

तम्भिर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बलिमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरिष्यन्ति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमग्रये कार्माय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बलिमते चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह वा अस्मै भूतानि बलि॰ हरन्ति। अनु स्वर्गं लोकं विनदित। य एतेन ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽग्रये बलिमते स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वृगं वै लोकमनुंविवित्सिस्। अहमु वा अनुंवित्तिरिस्म। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामोँ द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बिल्मान्त्षष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भवित। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियें चाऽऽभार समृद्धौ॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुंदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवत्साऽमृतं दुहांना। श्रद्धा देवी प्रंथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताङ् श्रद्धाः ह्विषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतंं दधातु। ईशांना देवी भुवनस्याधिपत्नी। आगांत्सत्यः ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँद्देवा जंजिरे भुवंनं च विश्वं। तस्मैं विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माद्देवा जंजिरे भुवंनं च सर्वें। तत्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न् आगाँत्। ब्रह्माऽऽहुंती्रुपमोदंमानम्। मनंसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसुः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूंतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजांनिम्ह वर्धयंन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्यांम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। लोकस्य द्वारंमिव्मत्पवित्रम्ं। ज्योतिंष्मद्भाजंमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्र्इं स्विष्टम्॥१४॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते पुरोक्षेण। पुरोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजापते तपंसा वै श्राम्यसि। अहम् वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। तपंसे चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्ट्कृते स्वाहेतिं॥१६॥ त इ श्रद्धा ऽ व्रंवीत्। प्रजांपते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। श्रद्धायै चुरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्ये सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये

स्वाहाँ श्रुद्धाये स्वाहाँ। अनुमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१७॥ त र सत्यमंब्रवीत्। प्रजांपते सत्येन वै श्रांम्यसि। अहमु वै सत्यमेरिम। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्य सत्यं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। सुत्यायं चुरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्य सत्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अस्य सत्यं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेने हिवषा यर्जते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥ तं मनोंऽब्रवीत्। प्रजापते मनसा वै श्राम्यसि। अहमु वै मनौंऽस्मि। मां न् यंजस्व। अर्थ ते सत्यं मनों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। मनंसे चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं मनोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। स्तय १ ह वा अस्य मनो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनंसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥ तं चरणमब्रवीत्। प्रजांपते चरणेन वै श्रांम्यसि। अहम् वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्यं चरणं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहां। अनुमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥ ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तर्पः प्रथमा र रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनेश्चतुर्थीम्। चरेणं पश्चमीम्। अनुं ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पष्टौहीवरां दंद्यात्क १ सं र्च। स्त्रिये चाऽऽभार समृद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन रं शप्तम्। नाभिचंरितमागंच्छति। य एवं वेदं। यो हृ वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षह्वोतॄणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशेः कल्पन्ते। य एवं वेदे। एषा वै संविवृद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पृतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्रशे यावंत्तरसम्। स्वरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुरिति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपृत्यम्। बृह्यवर्चसी भवति। एतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥ एतैरिधवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वर्ययौ। एतान्योऽध्यैति। अधिवादं जयति। अथो विश्वं पाप्मानम्।

स्वरिति। एतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकामः। एतैरायुंष्कामः।

प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंरहोतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् पङ्कोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्ंषि पत्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्ं। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ लोकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम् ग्निं चिनुते। र्थसंम्मितश्चेत्रव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। र्थसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरंतिरात्रेणं। सवाँ छोकानंहीनेनं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर ई स्पृणोति। आत्मा हि वर्रः। एकंवि शतिर्दक्षिणा ददाति। एकवि शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाँ प्रोति॥ २८॥

असावांदित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमांप्रोति। शतं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसिम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया रसि॥२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदि न विन्देतं।
मन्थानंतावृतो दंद्यादोद्नान् वाँ। अश्रुते तं कामम्ं।
यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि
सर्वाणि वया स्ति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे॥३०॥
हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वगं लोकमेति। वासो
ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि
देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुब्न्थे ब्राह्मणं ब्रूयात्।
नेतंरेषु युज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसवनं तंपियत्व्यान्
वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। एते वै चतुंरहोतारोऽनुसव्नं तंपीयत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदेः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृंश्जते॥३२॥ हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सिम्मंतम्। तेजो हिरंण्यम्। यदि हिरंण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। याँऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतामाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सावित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकेते॥३४॥

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वा्स्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमेः॥३५॥ सङ्ख्रांता देवमाययां। सर्वा्स्ताः। यावंन्तः उषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिर्हिताः। सर्वा्स्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः।

अप्स्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः॥३७॥

यार्वन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषं। सर्वास्ताः। यार्वन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसर्पिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यचे मानुषम्। सर्वास्ताः॥ यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावं छोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वश्र सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यचं मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्ञतम्। देवत्रा यर्चं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरंतम्। देवत्रा यर्चं मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४०॥

<u>و ]</u>

सर्वा दिशो दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्त्राहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गन्धर्वाप्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सिल्लान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिक् सर्वान्ध्वक्षसान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्त्स्तनियुत्न्। हादुनीर्यचं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्नन्तीरुत

प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तपस्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्शस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वरुणं भगम्। सर्वास्ताः। सत्यश् श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्धां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४५॥

सर्वान्दिव् सर्वांन्देवान्दिवि। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। यावंती्स्तारंकाः

सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्त्सर्वान्मासान्। संवृत्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भृतः सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४८॥

[۲

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अर्थर्वणामङ्गिंरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहं। साम्वेदेनां उस्तम्ये महींयते। वेदैरशूंन्यस्निभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता र संव्शो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिंर्याजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेजंः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रस्तिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आद्र्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृतौः। शृतं वंर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवत्स्वयम्। सृत्यश् ह् होतेषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवत्सरान्। भूतश् हं प्रस्तोतेषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदश् सर्वृश् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजानमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्राव्यणः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्तिषिः। आग्नींद्धाद्विदुषीं सत्यम्। श्रद्धा हैवायंजत्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन- ड्रुविः॥५३॥

ड्रध्म १ ह् क्ष्वैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृत्त्र्राणिं तन्वानाऽहंः। स्ड्स्थाश्चं सर्वृशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्नो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसमं प्रस्तेन यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शुकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावेदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिश्चिवृतिः संवत्स्राः। पश्चंपश्चाशतिः पश्चद्शाः। पश्चंपश्चाशतिः सप्तद्शाः। पश्चंपश्चाशति एकविश्शाः। विश्वसृजार्रे सहस्रंसंवत्सरम्। एतेन् वै विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृंजन्त।

**-**[3]

तस्माँद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतां यन्ति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतां यन्ति। य एतदुंप्यन्तिं। ये चैन्त्प्राहुंः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुंः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥